

साफ़ दिल वाले लोग

दिन 1: जिनका मन शुद्ध है

[भजन संहिता 73 पर मनन]

एक बार, जब मैंने नई कार खरीदी, तो मैंने अपने बच्चों को पीछे की सीट पर कुछ भी न खाने की सलाह दी ताकि मैं उसकी अच्छी तरह देखभाल कर सकूँ। लगभग एक साल तक, मैं बिना किसी परेशानी के कार को साफ़ रख पाया। हालाँकि, एक साल बीतने के बाद, मेरे सबसे बड़े बेटे, डिलन ने अचानक पीछे की सीट पर बहुत ज़्यादा उल्टी कर दी। शायद वह पिछली रात से सोया नहीं था क्योंकि उसे अच्छा नहीं लग रहा था, और आखिरकार, उसने मेरी कार के अंदर उल्टी कर दी। उस पल, मेरी सबसे बड़ी बेटी, येरी ने अपना नाक हाथ से ढक लिया और कहा कि बदबू बहुत भयानक थी। मेरी सबसे छोटी बेटी, यीउन ने भी अपनी नापसंदगी ज़ाहिर की और कहा कि इसमें से बदबू आ रही थी। हाहा। शुक्र है, पास ही एक गैस स्टेशन था, इसलिए मैं जल्दी से वहाँ गया, डिलन के पेट से निकले बदबूदार खाने को गीले तौलिये से साफ़ किया, और कार के फ़र्श और सीटों को पोंछा। इस घटना ने मुझे यीशु की एक बात की याद दिलाई, इसलिए मैंने अपने बच्चों को सिखाने के लिए उनसे बात की। मैंने उन्हें सिखाया कि हालाँकि खाना खुद गंदा नहीं होता जब वह हमारे अंदर जाता है, लेकिन जो हमारे अंदर से बाहर आता है, उसमें बदबू होती है और वह गंदा होता है। इसलिए, मैंने अपने बच्चों को सिखाने की कोशिश की कि हमें बुरे विचारों, झूठ, जलन, ईर्ष्या और अन्य पापपूर्ण चीज़ों से अपने मन की अच्छी तरह रक्षा करनी चाहिए।

हमें अपने मन की रक्षा करनी चाहिए, जो जीवन का स्रोत है। हमें दुनिया की पापपूर्ण चीज़ों से अपने मन को बचाना चाहिए। हमारे आस-पास बहुत सारी पापपूर्ण चीज़ें हैं जो हमारे मन को दूषित करने की कोशिश करती हैं। हम जो चीज़ें देखते, सुनते, महसूस करते, सूँघते और छूते हैं, उनमें कई पापपूर्ण तत्व होते हैं जो हमारे मन को बहकाने और गंदा करने की कोशिश करते हैं। ऐसी चीज़ों से भरी इस पापपूर्ण दुनिया में रहते हुए, हमें अपने मन की शुद्धता बनाए रखने की कोशिश करनी चाहिए। मत्ती 5:8 में, यीशु हमसे कहते हैं: "धन्य हैं वे जिनका

मन शुद्ध है, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे।" हमें शुद्ध मन वाले धन्य लोग बनना चाहिए जो परमेश्वर को देख सकें।

आज के भाग, भजन संहिता 73 में, भजनकार आसाफ़ कहता है कि परमेश्वर वास्तव में इज़राइल में उन लोगों के प्रति अच्छे हैं जिनका मन शुद्ध है (पद 1)। फिर भी, आसाफ़ स्वीकार करता है कि वह लगभग लड़खड़ा गया था (पद 2)। वह लगभग क्यों लड़खड़ा गया? वे कौन सी बातें हैं जो हमें—जो दिल की पवित्रता बनाए रखना चाहते हैं—लड़खड़ाने पर मजबूर कर सकती हैं? भजनकार आसाफ़ इस हिस्से में हमें ऐसी तीन बातों के बारे में सिखाता है।

पहली बात, आसाफ़ लगभग इसलिए लड़खड़ा गया क्योंकि उसने बुरे लोगों की खुशहाली देखी।

भजन संहिता 73 की आयत 3 देखिए: "क्योंकि जब मैंने बुरे लोगों की खुशहाली देखी, तो मुझे घमंडी लोगों से जलन हुई।" बुरे लोगों की खुशहाली देखकर आसाफ़ के मन में उनसे जलन पैदा हुई। आसाफ़ की ऐसी जलन पूरी तरह समझ में आने वाली बात है। एक बार एक बुजुर्ग विश्वासी ने मुझसे यह सवाल पूछा: "ऐसा क्यों है कि जो लोग यीशु पर विश्वास करते हैं, वे अक्सर गरीबी और मुश्किलों से जूझते हैं, जबकि जो लोग उस पर विश्वास नहीं करते, उनके पास बहुत पैसा होता है और वे बिना किसी बड़ी परेशानी के अच्छी ज़िंदगी जीते हैं?" ऐसा लगा कि यह विश्वासी इस सवाल से बहुत परेशान था। हालाँकि, मेरा मानना है कि यह संघर्ष सिर्फ़ इसी विश्वासी के लिए नहीं है; कई ईसाई इसी समस्या से जूझते हैं। ऐसा संघर्ष खतरनाक होता है क्योंकि शैतान इसका फ़ायदा उठाकर विश्वासियों को धोखा देता है और उनके दिलों में जलन के बीज बोता है। जब ऐसा होता है, तो हम भी आसाफ़ की तरह बुरे लोगों की खुशहाली से जलने लगते हैं। तो फिर, बुरे लोगों की खुशहाली क्या है? सीधे शब्दों में कहें तो, यह दुख-तकलीफ़ का न होना है (आयत 5)। इसके अलावा, बुरे लोग शारीरिक रूप से स्वस्थ रहते हैं (आयत 4-5)। वे हमेशा शांति से रहते हैं और अपनी दौलत को बढ़ते हुए देखते हैं (आयत 12)। ये ऐसी बातें हैं जो नेक लोगों के मन में आसानी से जलन पैदा कर सकती हैं। हम खुद से यह सवाल पूछ सकते हैं: "अगर कोई व्यक्ति जो यीशु पर विश्वास नहीं करता, इतनी अच्छी ज़िंदगी जी सकता है—स्वस्थ और दर्द या मुश्किलों से मुक्त—तो इसके उलट, मैं लगातार इतने गहरे दुख क्यों सह रहा हूँ जबकि मेरा शरीर कमज़ोर होता जा रहा है?"

दूसरी बात, आसाफ लगभग इसलिए लड़खड़ा गया क्योंकि बुरे लोग घमंडी थे।

भजन संहिता 73:6 का पहला हिस्सा देखिए: "इसलिए घमंड उनका हार है।" आसाफ ने न केवल बुरे लोगों की खुशहाली देखी, बल्कि उनका घमंड भी देखा। हम बुरे लोगों के घमंड पर तीन तरह से विचार कर सकते हैं। पहली बात है कामों का घमंड। इसका मतलब है उनकी हिंसा। "हिंसा उन्हें कपड़े की तरह ढके हुए है" (आयत 6)। इसका मतलब है कि उनके सभी कामों और व्यवहार में दूसरों पर जुल्म करने और उनका शोषण करने की क्रूरता झलकती है (पार्क युन-सन)। दूसरी बात है दिल का घमंड। इसका मतलब है उनकी घमंडी आँखें। आयत 7 देखिए: "उनकी आँखें मोटापे से बाहर निकली हुई हैं; उनके दिल की कल्पनाएँ बेकाबू हो जाती हैं।" जब कोई ज़रूरत से ज़्यादा चीज़ों से संतुष्ट हो जाता है, तो क्या होता है? ज़ाहिर है, उसके तौर-तरीके घमंडी हो जाते हैं। दूसरे शब्दों में, दिल की कल्पना की कोई सीमा नहीं रहती, जिससे इंसान लालच में आकर दौलत जमा करने लगता है। नतीजतन, दूसरों की चीज़ें हड़पकर, वह सामान्य उम्मीद से कहीं ज़्यादा कमाई कर लेता है (पार्क युन-सन)। तीसरी बात, बुरे लोगों का घमंड उनकी बातों से भी झलकता है। यह मुँह से किए जाने वाले पाप की ओर इशारा करता है। आज के पाठ की आयत 8 और 9 देखिए: "वे मज़ाक उड़ाते हैं और बुरी नीयत से जुल्म भरी बातें करते हैं; वे घमंड से बोलते हैं। वे अपना मुँह आसमान के खिलाफ़ खोलते हैं, और उनकी ज़बान धरती पर अकड़कर चलती है।" इसका क्या मतलब है? "वे अपना मुँह आसमान के खिलाफ़ खोलते हैं" वाक्यांश का अर्थ है खुद को बहुत ऊँचा समझने का रवैया, मानो वे आसमान जितने ऊँचे हों। वहीं, "उनकी ज़बान धरती पर अकड़कर चलती है" का मतलब है ऐसा व्यवहार जिसमें वे जहाँ भी जाते हैं, बुरी बातें बोलते हैं। संक्षेप में, बुरे लोग घूमते-फिरते हैं, अपने घमंड में खुद को बड़ा समझते हैं और बुरी बातें कहते हैं। बुरे लोगों का ऐसा व्यवहार देखकर, दुख सह रहे नेक लोगों के लिए डगमगाना आसान हो सकता है।

तीसरी बात, आसाफ़ लगभग डगमगा ही गया था क्योंकि कुछ लोग बुरे लोगों के पीछे चल पड़े थे।

भजन संहिता 73 की आयत 10 और 11 देखिए: "इसलिए उसके लोग उनकी ओर मुड़ते हैं और भरपूर पानी पीते हैं। वे कहते हैं, 'परमेश्वर को कैसे पता चलेगा? क्या सबसे ऊँचे परमेश्वर को ज्ञान है?'" भजनकार आसाफ़ ने देखा कि एक ऐसा गुट उभर रहा था जिसने बिना सोचे-समझे बुरे लोगों के बुरे विचारों और घमंडी सोच को अपना लिया और उनकी नकल की, जिससे उनके अनुयायियों की भीड़ बढ़ती गई। यह देखकर आसाफ़

लगभग डगमगा गया। जिन लोगों ने बुरे लोगों की नकल की, वे धर्मत्याग की राह पर चल पड़े; उन्हें परमेश्वर के उस शासन पर शक होने लगा—जिस पर वे पहले विश्वास करते थे—और वे सोचने लगे कि परमेश्वर दुनिया के मामलों से बेपरवाह है। आसाफ़ के लिए यह कितनी मुश्किल चुनौती थी! परमेश्वर के अपने लोगों को बुरे लोगों के पीछे जाते देखकर निश्चित रूप से उसका संकल्प कुछ हद तक तो डगमगा ही गया होगा। उस समय, बुरे लोगों के बारे में उसका निष्कर्ष यह था: "देखो, ये बुरे लोग हैं; हमेशा आराम से रहते हैं, और उनकी दौलत बढ़ती जाती है" (पद 12)।

आपको क्या लगता है कि अगर आप बुरे लोगों में ऐसी खुशहाली देखते—उन्हें लगातार आराम से रहते और अमीर होते हुए देखते—तो आपकी क्या प्रतिक्रिया होती? क्या आप निराश महसूस नहीं करते? क्या आपको गुस्सा नहीं आता? क्या आप मन ही मन उन्हें कोसते नहीं? बुरे लोगों की इस खुशहाली पर आसाफ़ ने कैसी प्रतिक्रिया दी? सबसे पहले, उसे लगा कि अपने दिल को शुद्ध रखना बेकार था (पद 13: "सचमुच मैंने व्यर्थ ही अपने दिल को शुद्ध रखा और निर्दोषता में अपने हाथ धोए")। दूसरा, उसने अपनी तकलीफों भरी ज़िंदगी पर दुख जताया (पद 14: "क्योंकि दिन भर मैं परेशान रहा और हर सुबह मुझे सज़ा मिली")। आखिरकार, आसाफ़—एक नेक इंसान—के दिल में शिकायत की भावना इसलिए पैदा हुई क्योंकि बुरे लोग खुशहाल थे जबकि वह खुद तकलीफें झेल रहा था (पार्क युन-सन)। बुरे लोगों की खुशहाली और नेक लोगों की तकलीफों को देखकर, जब आसाफ़ के मन में ये विचार आए तो उसने क्या किया? शुरू में, उसने इसे समझने की कोशिश की। दूसरे शब्दों में, उसने अपनी सीमित समझ का इस्तेमाल करके "परमेश्वर की योजना की जटिलता" को सुलझाने की कोशिश की (पार्क युन-सन)। फिर भी, इस कोशिश से उसे केवल भारी मानसिक परेशानी हुई (पद 16: "जब मैंने इसे समझने की कोशिश की, तो यह मेरे लिए परेशानी का कारण बना")। इस परेशानी के बीच आसाफ़ ने क्या किया? वह परमेश्वर के पवित्र स्थान में गया। ऐसा करने पर, उसे तीन बातें समझ में आईं।

सबसे पहले, आसाफ़ को बुरे लोगों के अंतिम अंजाम का पता चला। आज के वचन, भजन संहिता 73:17 को देखें: "जब तक मैं परमेश्वर के पवित्र स्थान में नहीं गया; तब मुझे उनका अंजाम समझ आया।" बुरे लोगों का अंजाम क्या है? वह है "बर्बादी" (पद 18), "वीरानी" (पद 19), "पूरी तरह विनाश" (पद 19), और "तिरस्कार का पात्र बनना" (पद 20)। पद 18-20 को देखिए: "सचमुच, तूने उन्हें फिसलन भरी जगहों पर रखा है; तूने उन्हें बर्बादी की ओर धकेल दिया है। अरे, वे कितनी जल्दी बर्बाद हो जाते हैं, मानो एक पल में! वे पूरी तरह से डर से

घिर जाते हैं। जैसे जागने पर सपना गायब हो जाता है, वैसे ही हे प्रभु, जब तू जागेगा, तो तू उनकी छवि को तुच्छ समझेगा।" बुरे लोगों की समृद्धि कुछ ही समय की होती है। जल्द ही, वे बर्बाद हो जाएँगे। परमेश्वर धैर्यपूर्वक उनके बुरे कामों को सहते हैं—ऐसा लगता है मानो वे सो रहे हों—लेकिन जब सही समय आता है, तो वे उन्हें सज़ा देते हैं, मानो नींद से जाग रहे हों।

दूसरी बात, आसाफ को नेक लोगों के अंतिम अंजाम का एहसास हुआ। नेक लोगों का अंजाम क्या है? आज के वचन, भजन संहिता 73:24 को देखें: "तू अपनी सलाह से मेरी अगुवाई करता है, और बाद में तू मुझे महिमा में अपनाएगा।" नेक लोगों का अंजाम यही है कि प्रभु हमें महिमा में अपना लें। प्रेरित पौलुस भी रोमियों 8:18 में उम्मीद का संदेश देते हैं: "मैं मानता हूँ कि हमारे वर्तमान दुख उस महिमा के सामने कुछ भी नहीं हैं जो हममें प्रकट होगी।"

तीसरी बात, आसाफ को अपनी मूर्खता और नासमझी का एहसास हुआ। आज के वचन, भजन संहिता 73:22 को देखें: "मेरा मन परेशान था और मेरा दिल छलनी हो गया था; मैं कितना मूर्ख और नासमझ था—मैं तेरे सामने एक जानवर जैसा था।" आसाफ—जिसने कभी बुरे लोगों की समृद्धि से जलन की थी और उस जलन के कारण दर्दनाक, दिल को चुभने वाली शिकायतें पाल रखी थीं—उसे अपनी मूर्खता का एहसास तब हुआ जब वह परमेश्वर के पवित्र स्थान में गया। नतीजतन, उसने पछतावा किया और खुद को "जानवर" जैसी मूर्खता करने के लिए कोसा।

पवित्र स्थान में जाकर बुरे लोगों के अंजाम और परमेश्वर के सामने अपनी पहचान को समझने के बाद, आसाफ भजन संहिता 73 की आयतों 23-28 में तीन सुंदर बातें स्वीकार करता है।

आसाफ की पहली बात यह थी, "तूने मेरा दाहिना हाथ थामे रखा है।" आज के वचन, भजन संहिता 73:23 को देखें: "मैं हमेशा तेरे साथ हूँ; तूने मेरा दाहिना हाथ थामे रखा है।" आसाफ, जो बुरे लोगों और उनके पीछे चलने वालों की समृद्धि और घमंड को देखकर लगभग लड़खड़ा गया था, गिरने से बच गया क्योंकि प्रभु ने उसका दाहिना हाथ थामे रखा था; इसके बजाय, प्रभु की सलाह ने उसकी अगुवाई की (आयत 24)। प्रभु ने आसाफ की

अगुवाई के लिए क्या सलाह दी थी? यह वह ज्ञान था जो उसे पवित्र स्थान में बुरे और नेक लोगों के अंतिम अंजाम के बारे में मिला था। नेक लोगों का अंजाम क्या है? वह यह है कि प्रभु उन्हें आने वाले जीवन में महिमा देते हैं।

आसाफ की दूसरी बात यह थी, "मेरे लिए परमेश्वर के करीब आना अच्छा है।" आज के लिए भजन संहिता 73:28 देखें: "पर मेरे लिए तो परमेश्वर के निकट रहना ही भला है; मैंने प्रभु यहोवा को अपना शरणस्थान बनाया है; मैं आपके सभी कामों का वर्णन करूँगा।" आसाफ ने परमेश्वर पर अपना अटूट भरोसा रखने का संकल्प लिया—जो उसके दिल की चट्टान और उसका शाश्वत हिस्सा थे—चाहे उसे कैसी भी शारीरिक या भावनात्मक कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़े।

आसाफ की तीसरी बात यह थी, "पृथ्वी पर आपके अलावा मेरी कोई और इच्छा नहीं है।" भजन संहिता 73:25 देखें: "स्वर्ग में मेरा कौन है आपके सिवा? और पृथ्वी पर भी आपके सिवा मेरी कोई इच्छा नहीं है।" एक शुद्ध हृदय वाला विश्वासी, जिसने पवित्र स्थान में परमेश्वर का अनुभव किया है, इस पृथ्वी पर रहते हुए दुष्टों की समृद्धि से ईर्ष्या नहीं करता। ऐसा विश्वासी अहंकार से पैदा होने वाले पापों, धन के लालच, दुख और दर्द से बचने और केवल अपना पेट भरने की लालसा में नहीं जीता। इसके बजाय, दुष्टों और धर्मी लोगों के अंतिम अंजाम को समझते हुए, वे इस दुनिया में प्रभु के अलावा और कुछ नहीं चाहते। भजन संख्या 102 याद आता है:

प्रभु यीशु से अधिक कीमती कुछ भी नहीं है; मैं उन्हें इस दुनिया की दौलत (सम्मान; खुशी) के बदले नहीं छोड़ सकता...

पद 1. मैं उस अद्भुत प्रेम को नहीं भूल सकता—वह मेरी जगह मरे, जो आध्यात्मिक रूप से मृत था।

पद 2. सांसारिक सुख जिनका मैंने कभी आनंद लिया था, वे प्रभु के प्रति मेरे प्रेम को छीन नहीं सकते।

पद 3. जब प्रलोभन और उत्पीड़न बढ़ते हैं, तब भी प्रभु की सेवा करने का मेरे दिल का संकल्प अटूट रहता है।

(कोरस)

मैंने सभी सांसारिक सुखों और सांसारिक गर्व को त्याग दिया है; प्रभु यीशु से अधिक कीमती कुछ भी नहीं है—यीशु के अलावा कोई नहीं है।

जिस तरह शैतान ने आसाफ—एक शुद्ध हृदय वाले व्यक्ति—को लगभग डगमगा दिया था, उसी तरह वह दुष्टों की समृद्धि पर ईर्ष्या पैदा करके हमें भी डगमगाने की कोशिश करता है। शैतान हमें उन भीड़ पर ध्यान केंद्रित करवाकर भी डगमगाने की कोशिश करता है जो दुष्टों का अनुसरण करती हैं। तो फिर, हमें क्या करना चाहिए? भजनकार आसाफ की तरह, हमें परमेश्वर के पवित्र स्थान में प्रवेश करना चाहिए। वहाँ, हमें दुष्टों के अंतिम अंजाम और धर्मी लोगों के अंतिम अंजाम को समझना चाहिए। हमें अपनी मूर्खता और अज्ञानता को भी पहचानना चाहिए, जैसा कि आसाफ ने किया था। जब हम ऐसा करेंगे, तो हम भी आसाफ की तरह सुंदर बातें कह पाएँगे: "तूने मेरा दाहिना हाथ थामे रखा है," "परमेश्वर के निकट रहना ही मेरे लिए भला है," और "स्वर्ग में मेरे पास तेरे सिवा और कौन है?"

दिन 2: “जीवित लोग इसे दिल में उतार लेंगे”

[उपदेशक 7:1-4 पर मनन]

“अच्छा नाम कीमती तेल से बेहतर है, और मृत्यु का दिन जन्म के दिन से बेहतर है; शोक के घर जाना दावत के घर जाने से बेहतर है, क्योंकि यही सब मनुष्यों का अंत है। जीवित लोग इसे दिल में उतार लेंगे। शोक हँसी से बेहतर है, क्योंकि दुखी चेहरा मन को शांति देता है। बुद्धिमान का मन शोक के घर में होता है, परन्तु मूर्ख का मन दावत के घर में।” (उपदेशक 7:1-4)

मुझे कुछ समय पहले कोरियाई YTN के रात 11 बजे के एक समाचार प्रसारण की याद आ रही है। यह खबर दक्षिण कोरिया के ग्योंगगी-डो में स्थित “जीवन के अंत का अनुभव केंद्र” नामक एक स्थान के बारे में थी, जहाँ लोग अपनी तस्वीरें खिंचवा रहे थे, वसीयत लिख रहे थे, उसे जोर से पढ़ रहे थे और फिर अपनी तस्वीरों को शवगृह ले जाकर अपनी वसीयत को जोर से पढ़वा रहे थे ताकि वे वास्तव में मृत्यु का अनुभव कर सकें। मैंने यह भी देखा कि मृत्यु का अनुभव करने के इच्छुक अधिकांश लोग रो रहे थे, खासकर जब वे अपनी वसीयत पढ़ रहे थे। वे न केवल वसीयत पढ़ रहे थे, बल्कि एक कदम आगे बढ़कर मृतक व्यक्ति को ताबूत में भी ले जा रहे थे। फिर, एक अन्य व्यक्ति फावड़े से धीरे-धीरे ताबूत पर मिट्टी डाल रहा था। उन्हें ताबूत और फावड़े के बीच कुछ दूरी छोड़ते हुए देखकर, जिससे मिट्टी के गिरने की आवाज आती थी, मैंने सोचा कि अगर जीवित लोग ताबूत के अंदर से वह आवाज सुनें, तो वे वास्तव में मृत्यु का अधिक गहराई से अनुभव कर पाएंगे। जिन लोगों ने स्वयं इस मृत्यु अनुभव को जिया, उनकी प्रतिक्रिया ज्यादातर यही थी कि वे और अधिक समय तक जीना चाहते थे। उन्होंने यह भी कहा कि इस प्रक्रिया के दौरान उन्हें सबसे ज्यादा अपने परिवार की याद आई। मृत्यु अनुभव केंद्र के निदेशक के साक्षात्कार को सुनकर, उन्होंने बताया कि उन्होंने यह कार्यक्रम इसलिए शुरू किया है ताकि लोग इस युग में, जहाँ “स्वस्थ जीवन” पर इतना ज़ोर दिया जाता है, अच्छी तरह से मृत्यु की तैयारी कर सकें। आप

शायद यह खबर सुनकर सोचें, "आजकल तो ये लोग कुछ भी कर लेते हैं," लेकिन व्यक्तिगत रूप से मुझे यह एक अच्छा विचार लगता है। अगर ऐसा अनुभव लोगों को मृत्यु की वास्तविकता को सही मायने में समझने और उसके लिए तैयार होने में मदद करता है, तो क्या यह अच्छी बात नहीं है?

आज के उपदेशक 7:2 के वचन में, राजा सुलैमान—जो इस किताब के बुद्धिमान लेखक हैं—कहते हैं, "और जीवित लोग इसे दिल में बिठा लें।" यह "क्या" है? यह सच है कि मौत हम सबकी आखिरी मंज़िल है। इस आयत को देखिए: "दावत वाले घर में जाने से शोक वाले घर में जाना बेहतर है, क्योंकि मौत हर इंसान की मंज़िल है..." हमें अपनी मौत के बारे में गहराई से सोचना चाहिए। हमें गंभीरता से इस बात पर विचार करना चाहिए कि एक दिन हम भी इस सफ़र से उतरकर अपनी आखिरी मंज़िल तक पहुँचेंगे। हमें लगातार और गंभीरता से सोचना चाहिए कि उस पक्की मौत को ध्यान में रखते हुए हमें कैसे जीना चाहिए। हम ऐसा कैसे कर सकते हैं? राजा सुलैमान इसी आयत में एक समझदारी भरा तरीका बताते हैं: "शोक वाले घर में जाना" (वचन 2)। दूसरे शब्दों में, किसी के अंतिम संस्कार में शामिल होना मौत के बारे में सोचने का एक बेहतरीन तरीका है। शायद अपनी मौत के बारे में गहराई से सोचने का इससे बेहतर कोई तरीका नहीं है कि हम किसी के अंतिम संस्कार में जाएँ। जब हम मरने वाले के लिए शोक मनाते हैं, तो हमें उस मौत के बारे में सोचने का मौका मिलता है जो हमारा—यानी इस दुनिया में बचे लोगों का—इंतज़ार कर रही है। व्यक्तिगत रूप से, जब भी मैं किसी अंतिम संस्कार में जाता हूँ और मौत की सच्चाई को गहराई से महसूस करता हूँ, तो मेरे मन में अक्सर एक खास विचार आता है: अच्छी मौत के लिए, मुझे अच्छी ज़िंदगी जीनी होगी। आखिरकार, अंतिम संस्कार से मौत का जो एहसास होता है, वह मुझे एक अच्छी ज़िंदगी जीने के तरीके पर सोचने का मौका देता है।

अच्छी मौत के लिए, हमें अच्छी ज़िंदगी जीनी होगी। लेकिन अच्छी ज़िंदगी जीने का क्या मतलब है? हम कैसे जान सकते हैं कि हम अच्छी ज़िंदगी जी रहे हैं या नहीं? ऐसा लगता है कि किसी ने अच्छी ज़िंदगी जी है या नहीं, इसका सही मूल्यांकन मौत के बाद ही हो सकता है। तो फिर, हम कैसे जान सकते हैं? हम अपने नाम पर विचार करके इसका जवाब पा सकते हैं। दूसरे शब्दों में, हम अपनी ज़िंदगी के स्वभाव को यह देखकर समझ सकते हैं कि जब लोग हमारे अंतिम संस्कार में हमारे बारे में सोचते हैं, तो क्या वे हमारे नाम की तारीफ़ करते हैं या नहीं। एक पुरानी कहावत है कि हर इंसान के तीन नाम होते हैं: (1) माता-पिता द्वारा दिया गया नाम, (2) वह नाम जिससे दूसरे हमें बुलाते हैं, और (3) वह नाम जो हम खुद कमाते हैं। हम किस तरह का नाम कमा रहे हैं? यीशु

पर विश्वास करने वालों के तौर पर, हमें इस बात पर सोचना चाहिए कि क्या हमारा नाम न केवल परमेश्वर से, बल्कि लोगों से भी तारीफ़ पाता है, क्योंकि हमने एक नेक ज़िंदगी जी है। नीतिवचन 10:7 में बुद्धिमानों के शब्द दर्ज हैं: "नेक लोगों की याद एक आशीष है, लेकिन बुरे लोगों का नाम मिट जाएगा।" इसका मतलब है कि नेक लोगों के नाम को मरने के बाद भी याद किया जाता है और उसकी तारीफ़ होती है; यह एक आशीष वाला नाम है। उपदेशक 7:1 के आज के पाठ के शब्दों में कहें तो, यह एक "अच्छा नाम" है। बुद्धिमान राजा सुलैमान कहते हैं कि यह अच्छा नाम "कीमती इत्र" से भी बेहतर है। एक अच्छा नाम दुनिया की दौलत से ज़्यादा कीमती है।

फिर भी, समस्या क्या है? समस्या यह है कि इंसानी स्वभाव शोक मनाने वाले घर के बजाय दावत वाले घर में जाना ज़्यादा पसंद करता है। दूसरे शब्दों में, आज के पाठ—उपदेशक 7:3—के अनुसार, हम दुख के बजाय हँसी-खुशी को पसंद करते हैं। जैसा कि डॉ. पार्क युन-सन बताते हैं, लोग मरने वाले के दुखी परिवार से मिलने के बजाय शारीरिक सुख-सुविधाओं में मग्न रहना पसंद करते हैं। हालाँकि, जैसा कि बुद्धिमान राजा सुलैमान ने उपदेशक 2:11 में कहा है, ऐसे शारीरिक सुख बेकार हैं। दूसरे शब्दों में, दावत में दुनियावी सुखों का आनंद लेने का परमेश्वर की नज़र में कोई फ़ायदा नहीं है। इसके बजाय, सुलैमान सिखाते हैं कि परमेश्वर की नज़र में असल में फ़ायदेमंद काम शोक मनाने वाले घर में जाना और दुख का अनुभव करना है। वे ऐसा क्यों कहते हैं कि दुख हँसी से बेहतर है? कारण यह है कि "उदास चेहरा दिल को बेहतर बनाता है" (पद 3)। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि मौत के बारे में सोचने से हमारे दिल नरम हो जाते हैं (पार्क युन-सन)। जब हमारे दिल नरम हो जाते हैं, तो हम बेकार की दुनियावी सुख-सुविधाओं के पीछे भागकर अपनी ज़िंदगी बर्बाद नहीं करते। इसके बजाय, नरम दिल के साथ, हम विनम्रतापूर्वक परमेश्वर के वचन का पालन करते हैं और ऐसी ज़िंदगी जीते हैं जो उन्हें पसंद हो। इसीलिए राजा सुलैमान हमें उपदेशक 7:4 में बताते हैं: "बुद्धिमान का दिल शोक मनाने वाले घर में होता है, लेकिन मूर्खों का दिल मौज-मस्ती वाले घर में होता है।"

हमारे दिल मौज-मस्ती वाले घर में नहीं होने चाहिए। दूसरे शब्दों में, हमारे दिल उन दावतों में नहीं लगे होने चाहिए जहाँ शारीरिक सुखों का आनंद लिया जाता है। बल्कि, हमारे दिल शोक मनाने वाले घर में होने चाहिए। हमें अंतिम संस्कार में शामिल होने को प्राथमिकता देनी चाहिए। अंतिम संस्कार के समय, किसी की मृत्यु को देखकर हमें अपनी नश्वरता (मौत की सच्चाई) पर विचार करना चाहिए। क्योंकि जब प्रभु हमें बुलाएंगे, तो हमें भी इस दुनिया से जाना होगा। कारण यह है कि मृत्यु हम सभी का अंतिम गंतव्य है (पद 2)। इसलिए, अपनी

नश्वरता पर विचार करते हुए, हमें यह सोचना चाहिए कि हम हर दिन को इस तरह कैसे जिएं जो परमेश्वर की दृष्टि में सुंदर हो। हमें इस दुनिया में एक "सुंदर नाम" छोड़ना चाहिए—एक ऐसा सुंदर नाम जो हमारे बच्चों और वंशजों के दिलों में बसा हो। सबसे सुंदर नाम कौन सा है? हमें यह याद रखना चाहिए कि वह नाम "यीशु" के अलावा और कोई नहीं है। यीशु में विश्वास रखने वालों के रूप में, हमें ऐसा जीवन जीना चाहिए जो उनकी छवि को दर्शाता हो, ताकि हम अपने वंशजों और पड़ोसियों के बीच यीशु की यादें छोड़ सकें, जो एक दिन हमारे अंतिम संस्कार में शामिल होंगे। इस प्रकार, जब हमारे बच्चे, वंशज या पड़ोसी हमारे अंतिम संस्कार के समय हमारे नामों के बारे में सोचें, तो उनके मन में हमारी सच्ची प्रशंसा के भाव होने चाहिए। इसके अलावा, जब लोग हमारे जाने पर शोक मनाएं, तो उनकी आवाज़ में परमेश्वर के प्रति धन्यवाद और प्रशंसा की गूंज होनी चाहिए।

दिन 3: मौत ही अंत नहीं है

[प्रेरितों के काम 20:31, 35 पर मनन]

“इसलिए सावधान रहो, और याद रखो कि तीन साल तक मैंने दिन-रात बिना रुके, आँसू बहाते हुए तुममें से हर एक को समझाया... मैंने तुम्हें हर तरह से एक मिसाल दी: कि इस तरह कड़ी मेहनत करके तुम्हें कमज़ोरों की मदद करनी चाहिए, और खुद प्रभु यीशु के शब्दों को याद रखना चाहिए कि लेने से ज़्यादा धन्य देना है।” (प्रेरितों के काम 20:31, 35)।

जब मैं परमेश्वर के वचन पर मनन करता हूँ, तो पवित्र आत्मा मेरे दिल में एक नज़रिया बिठा रहा होता है। इनमें से एक नज़रिया यह है कि इंसान मिट्टी से बना है और मिट्टी में ही मिल जाता है। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर के वचन के ज़रिए पवित्र आत्मा मेरे दिल में जो नज़रिया बिठा रहा है, वह मौत का नज़रिया है। उपदेशक 7:2 को देखिए: “दावत वाले घर में जाने से मातम वाले घर में जाना बेहतर है, क्योंकि यही हर इंसान का अंत है। और जो जीवित हैं, वे इसे दिल में बिठाते हैं।” इसलिए, भले ही मैं अभी ज़िंदा हूँ, मैं अपनी ज़िंदगी उस मौत के बारे में सोचते हुए जीता हूँ जो भविष्य में मेरा इंतज़ार कर रही है। मैं प्रार्थना करता हूँ, सोच-विचार करता हूँ और मौत के नज़रिए से इस धरती पर ऐसी ज़िंदगी जीने की कोशिश करता हूँ जो परमेश्वर को पसंद आए। इसी बीच, सुबह की प्रार्थना सभा में प्रेरितों के काम 20:17-38 पर प्रचार करने के बाद, प्रार्थना करते समय मेरे मन में यह विचार बार-बार आ रहा था कि “मौत ही अंत नहीं है”। बेशक, मैं यह भी जानता हूँ कि मौत ही अंत नहीं है, क्योंकि मेरा मानना है कि मौत के बाद भी एक दुनिया है। जब मैंने मौत के बाद की ज़िंदगी के बारे में सोचा, तो मुझे एहसास हुआ कि मौत ही अंत नहीं है—सिर्फ़ इसलिए नहीं कि उसके बाद क्या है, बल्कि इसलिए भी कि हम धरती पर बचे हुए अपने प्रियजनों के साथ जो यादें छोड़ जाते हैं, चाहे वे हमारा शारीरिक परिवार हों या चर्च में हमारा आध्यात्मिक परिवार। दूसरे शब्दों में, क्योंकि हम उन रिश्तों

के ज़रिए यादें बनाकर जाते हैं जो प्रभु ने हमें दिए हैं—परिवार, रिश्तेदारों, चर्च के सदस्यों, दोस्तों और पड़ोसियों के साथ—इसलिए मौत कोई आखिरी नतीजा नहीं है। हालाँकि मौत के बाद हम इस दुनिया को छोड़कर स्वर्ग चले जाते हैं, लेकिन हमारे प्रियजन यहीं रहते हैं और अपनी ज़िंदगी जीते हुए हमारे बारे में यादें अपने दिलों में संजोए रखते हैं; इसलिए, मेरा मानना है कि मौत ही सब कुछ खत्म नहीं कर देती। इस सोच को अपनाकर मुझे प्रभु के सामने घुटने टेकने और यह प्रार्थना करने की प्रेरणा मिली कि मैं धरती पर अपनी बची हुई ज़िंदगी कैसे बिताऊँ।

जीवन के बारे में एक और बात जो परमेश्वर अपने वचन के ज़रिए मेरे मन में बिठा रहे हैं, वह यह है कि "जीवन का मतलब है यादें बनाना।" धरती पर हमारा समय लोगों से मिलने और बिछड़ने का एक लगातार चलने वाला चक्र है। इन मुलाकातों और विदाई के बीच, हम दूसरों के साथ बिताए समय और रिश्तों के ज़रिए यादें बनाते हैं। हम अच्छी यादें बना सकते हैं, या अनजाने में बुरी यादें भी बना सकते हैं। इसलिए, हमें इस बात पर सोचना चाहिए कि परमेश्वर की दी हुई इन मुलाकातों और रिश्तों के ज़रिए हम दूसरों के जीवन में कैसी यादें छोड़ रहे हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे जाने के बाद भी, हमारे द्वारा छोड़ी गई यादें उन लोगों पर असर डालती रहेंगी। उदाहरण के लिए, अपने ही परिवारों को देखें: हम अपने परिवार के सदस्यों के लिए प्यारी यादें छोड़ सकते हैं, या फिर दुखद यादें भी। अगर हम इस दुनिया से जाते समय अपने परिवार वालों के दिलों में अच्छी यादें छोड़ते हैं—न कि बुरी या दुखद यादें—तो मरने के बाद भी हम उनके जीवन पर सकारात्मक असर डालते रहेंगे। इसके उलट, अगर हम ज़्यादा बुरी यादें छोड़ते हैं, तो मरने के बाद भी हम उनके जीवन पर बुरा असर डालते रहेंगे। इसीलिए, आज सुबह मेरे मन में यह विचार आया कि "मौत ही सब कुछ खत्म नहीं कर देती।"

आज सुबह की प्रार्थना सभा में प्रेरितों के काम 20:17–38 से वचन सुनाने और प्रार्थना करने के बाद, मैं उस हिस्से पर फिर से सोच-विचार कर रहा हूँ। मैं खास तौर पर आयत 31 और 35 पर ध्यान देना चाहता हूँ। इसकी वजह यह है कि दोनों आयतों में "याद रखना" शब्द (या "तुम्हें याद रखना चाहिए" जैसा निर्देश) आया है। मैं इस बात पर सोचना चाहता हूँ कि प्रेरित पौलुस ने इफिसुस में तीन साल तक संतों के बीच कैसा व्यवहार किया (आयत 18)—और उनके दिलों में कैसी यादें छोड़ीं—जिसकी वजह से उन्होंने विदाई के समय इफिसुस के बुजुर्गों से "याद रखने" का आग्रह किया।

सबसे पहले, प्रेरित पौलुस ने इफिसुस की कलीसिया के संतों के दिलों में परमेश्वर का वचन बोया। आज के वचन, प्रेरितों के काम 20:31 को देखिए: "इसलिए, सावधान रहो और याद रखो कि तीन साल तक मैंने दिन-रात बिना रुके हर किसी को आँसुओं के साथ समझाया।" पौलुस ने इफिसुस की कलीसिया के बुजुर्गों को मिलेटुस में मिलने के लिए बुलाया था (वचन 17); उन्हें अपना विदाई संदेश देते हुए, उसने उन्हें याद दिलाया कि कैसे उसने तीन साल तक—बिना रुके, दिन-रात और आँसुओं के साथ—हर व्यक्ति को समझाया था (वचन 31)। प्रेरित पौलुस ने इफिसुस की कलीसिया के बुजुर्गों से अपनी पिछली सीखों को "याद रखने" के लिए क्यों कहा? कारण यह था कि उसने पहले ही देख लिया था कि उसके जाने के बाद, "खूँखार भेड़िये" उनके बीच आ जाएँगे (वचन 29)—जो चेलों को अपने पीछे लगा लेंगे और गलत बातें कहेंगे (वचन 30)—और आखिर में इफिसुस की कलीसिया के "झुंड" को धोखा देने (वचन 29) और उन्हें विश्वास छोड़ने पर मजबूर करने की कोशिश करेंगे। दूसरे शब्दों में, यह जानते हुए कि गलत शिक्षा देने वाले कलीसिया में घुस आएँगे, विश्वासियों को धोखा देंगे और टेढ़ी-मेढ़ी बातें कहकर कुछ लोगों को विश्वास से भटका देंगे, पौलुस ने बुजुर्गों—जो कलीसिया के रखवाले थे (वचन 28)—से गंभीरता से कहा कि वे याद रखें कि कैसे उसने तीन साल तक, दिन-रात बिना रुके, हर व्यक्ति को आँसुओं के साथ समझाया था। क्या हम सचमुच इस मामले में प्रेरित पौलुस के दिल की बात समझते हैं?

पॉल की भावनाओं को बेहतर ढंग से समझने के लिए मैंने उन्हें अपने परिवार पर लागू करने की कोशिश की। मैंने कल्पना की कि मैं जीवन और मृत्यु के मुहाने पर खड़ा हूँ—घर के मुखिया के तौर पर, मुझे अपनी प्यारी पत्नी और तीन बच्चों को इस दुनिया में पीछे छोड़ना है—और मैंने सोचा कि मैं अपनी पत्नी से क्या कहूँगा। मैंने खुद से पूछा कि क्या उस पल, जब मैं अपने तीनों बच्चों की देखभाल की ज़िम्मेदारी उन्हें सौंप रहा हूँ, तो क्या मैं उन्हें वैसी ही सलाह दे पाऊँगा जैसी पॉल ने इफिसुस की कलीसिया के बुजुर्गों को दी थी? मुझे लगता है कि मैं अपनी प्यारी पत्नी से कुछ ऐसा कहूँगा: "याद रखना, मेरी प्यारी पत्नी। याद रखना कि तुम्हारे और हमारे बच्चों के साथ बिताए समय में मैंने क्या बोलने की कोशिश की। मैंने तुममें और हमारे तीनों बच्चों में यीशु से प्रेम करने की आज्ञा को बैठाने की कोशिश की। मुझे उम्मीद है कि तुम्हें यह याद रहेगा। और मेरे जाने के बाद भी, मुझे उम्मीद है कि तुम यीशु से दोगुना प्रेम करोगी। मुझे यह भी उम्मीद है कि तुम्हें उस तरह से यीशु से प्रेम करते देख हमारे तीनों बच्चों के दिलों में भी यह बात बैठ जाएगी।" मौत के सामने अपनी पत्नी से ऐसा कह पाने का कारण यह है

कि, उससे मिलने से भी पहले—जब मैं उस परिवार के लिए प्रार्थना कर रहा था जिसे प्रभु बनाने वाले थे—मेरी दो मुख्य प्रार्थनाओं में से एक यह थी: "मैं अपने जीवनसाथी से परमेश्वर के प्रेम से प्रेम करूँ, और वह भी मुझसे परमेश्वर के प्रेम से प्रेम करे।" परमेश्वर के प्रेम से अपनी पत्नी या अपने तीनों बच्चों से प्रेम करने का असल में क्या मतलब है? जैसा कि यूहन्ना 14:21 में कहा गया है, इसका मतलब है परमेश्वर की आज्ञाओं को मानना। और परमेश्वर की आज्ञाओं को मानने के लिए, हमें परमेश्वर के वचन को अपने दिलों में बसाना होगा। यह मेरी ज़िम्मेदारी है कि मैं अपनी पत्नी और बच्चों को बाइबल से प्रेम करने और उसमें लिखे परमेश्वर के वचन को पढ़ने, सुनने, सीखने और मानने के लिए प्रेरित करूँ, और साथ ही खुद भी उस वचन के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दिखाऊँ। मौत के विचार का सामना करते हुए, आज सुबह मैं अपनी ज़िम्मेदारी के भारीपन पर सोच रहा हूँ: क्या मैं अपनी प्यारी पत्नी और बच्चों, और साथ ही विकट्री चर्च में अपने आध्यात्मिक परिवार के प्रति अपनी ज़िम्मेदारियों को ईमानदारी से पूरा कर रहा हूँ? मैं सोचता हूँ कि क्या प्रेरित पॉल की तरह, मैं भी उनसे—मेरे जाने के बाद भी—पूरी गंभीरता से यह आग्रह कर पाऊँगा कि वे उस परमेश्वर के वचन को याद रखें जो मैंने उन्हें लगन से सिखाया था, और उन्हें उन गलत शिक्षाओं और धोखे से सावधान करूँ जो शैतान के प्रलोभन का काम करती हैं। हमें एक ऐसा परिवार और चर्च बनना चाहिए जो परमेश्वर के वचन पर मज़बूती से खड़ा रहे—और प्रभु से मिलने के दिन तक अपने विश्वास की राह पर वफ़ादार रहे, और शैतान के धोखे में आकर कभी भी यीशु से मुँह न मोड़े। मैं खुद से पूछता हूँ: क्या मैं सचमुच उन्हें परमेश्वर के वचन से सिखाता हूँ—दिन-रात, बिना रुके और आँसुओं के साथ—ताकि वे ऐसे लोग बन सकें? यह कितनी बड़ी आशीष होगी अगर मेरी मृत्यु के बाद भी, मेरे बच्चे और चर्च का परिवार मेरे सिखाए परमेश्वर के वचन को याद रखे—और उस वचन को थामे रखकर, वे वफ़ादारी से अपना विश्वास निभाएँ और अपनी आत्मिक लड़ाइयों में जीत हासिल करें। मैं सोचता हूँ कि मैं कितना खुशकिस्मत पति, पिता और पास्टर होऊँगा अगर—भले ही "जेम्स" नाम का व्यक्ति भुला दिया जाए—वे उस वचन को याद रखें जो परमेश्वर ने मेरे ज़रिए कहा था, उसका पालन करें, और जीत के भरोसे के साथ आत्मिक लड़ाई लड़ते हुए अपना विश्वास बनाए रखें। ऐसी आशीष और खुशी पाने के लिए मुझे क्या करना चाहिए और कैसे करना चाहिए? ठीक वैसे ही जैसे प्रेरित पौलुस ने इफिसुस में अपने तीन साल के समय के दौरान, विश्वासियों को बिना किसी हिचकिचाहट के वह सब सिखाया जो उनके लिए फ़ायदेमंद था—चाहे सार्वजनिक रूप से हो या घर-घर जाकर (वचन 20)—मुझे भी याद आता है कि मुझे अपने परिवार और चर्च समुदाय के सदस्यों को

परमेश्वर का फ़ायदेमंद वचन लगन और वफ़ादारी से सिखाना चाहिए, जब तक मैं उनके साथ हूँ। इसके अलावा, जैसे पौलुस ने इफिसुस चर्च के बुजुर्गों को प्रभु और उसके अनुग्रह के वचन को सौंपा—जो उन्हें मज़बूत बनाने और उन सभी लोगों के बीच विरासत देने में सक्षम है जो पवित्र किए गए हैं (वचन 32)—मैं भी अपने प्यारे परिवार और विकट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च (मसीह की देह) के सदस्यों को प्रभु और उसके अनुग्रह के वचन को सौंपता हूँ। मेरा विश्वास है कि प्रभु अपने वचन के ज़रिए परमेश्वर की संतानों को मज़बूती से बनाएगा। इसलिए, आज सुबह, मैं खुद को प्रभु को फिर से समर्पित करता हूँ। मैं अपने शारीरिक परिवार और अपने आत्मिक परिवार—यानी चर्च के उन सदस्यों के दिलों में परमेश्वर का वचन लगन से बोलने का संकल्प लेता हूँ जो परमेश्वर के वचन से प्रेम करते हैं।

दूसरी बात, प्रेरित पौलुस ने इफिसुस चर्च के विश्वासियों के मन में यीशु की छवि बसाई। आज के वचन, प्रेरितों के काम 20:35 को देखिए: "मैंने हर बात में तुम्हें दिखाया है कि इस तरह कड़ी मेहनत करके हमें कमज़ोर लोगों की मदद करनी चाहिए और प्रभु यीशु के उन शब्दों को याद रखना चाहिए, जो उन्होंने खुद कहे थे: 'लेने से ज़्यादा धन्य देना है।'" इस हिस्से में, इफिसुस की कलीसिया के बुजुर्गों को अपना विदाई संदेश देते हुए, पौलुस बताते हैं कि कैसे उन्होंने विश्वासियों के साथ बिताए अपने तीन सालों में हर बात में एक मिसाल कायम की, और वह बुजुर्गों को यीशु के शब्दों को याद रखने के लिए कहते हैं। यीशु के वे शब्द क्या हैं? वे हैं: "लेने से ज़्यादा धन्य देना है।" पौलुस, जो उन्हें ये शब्द याद रखने के लिए कहते हैं, इफिसुस की कलीसिया के बुजुर्गों को बताते हैं कि उन्होंने यीशु की इस शिक्षा का पालन करके—कि "लेने से ज़्यादा धन्य देना है"—वहाँ के सभी विश्वासियों के लिए हर तरह से एक मिसाल कायम की। एक उदाहरण के तौर पर, पौलुस कहते हैं कि उन्होंने किसी के भी चाँदी, सोने या कपड़ों का लालच नहीं किया (वचन 33)। संक्षेप में, वह बुजुर्गों को बताते हैं कि वह लालच से मुक्त थे। कारण यह है कि एक लालची व्यक्ति यीशु की इस शिक्षा का पालन नहीं कर सकता कि लेने से ज़्यादा धन्य देना है; इसके बजाय, एक लालची व्यक्ति ठीक इसके उलट मानता है और काम करता है—कि देने से ज़्यादा धन्य लेना है। प्रेरित पौलुस न केवल लालच से मुक्त थे, बल्कि उन्होंने अपने और अपने साथियों के गुज़ारे के लिए अपने हाथों से काम भी किया (वचन 34)। उन्होंने इफिसुस के विश्वासियों से कुछ नहीं लिया; बल्कि, उन्हें दिया। उन्होंने क्या दिया? उन्होंने बिना किसी रोक-टोक के उन्हें परमेश्वर की पूरी इच्छा बताई (वचन 27)। उन्होंने बिना कुछ छिपाए, जो कुछ भी उनके लिए फायदेमंद था, उसे सिखाया और बताया—चाहे सार्वजनिक रूप से हो या

घर-घर जाकर (वचन 20)। इफिसुस में, उन्होंने यहूदियों और यूनानियों, दोनों के सामने परमेश्वर की ओर मन-फिराव और हमारे प्रभु यीशु मसीह पर विश्वास के बारे में गवाही दी (वचन 21)। पौलुस ने केवल अपने होंठों से प्रचार नहीं किया; उन्होंने अपने जीवन के ज़रिए यीशु मसीह पर विश्वास की गवाही दी, और अपने जीवन के ज़रिए परमेश्वर की इच्छा का प्रचार किया। परमेश्वर की वह इच्छा प्रभु की सेवा करना है। इस प्रकार, वह बुजुर्गों को बताते हैं कि उन्होंने पूरी विनम्रता और आँसुओं के साथ प्रभु की सेवा की, और अपने रास्ते में आने वाली मुश्किलों का सामना किया (वचन 19)। हालांकि पवित्र आत्मा के कहने पर पॉल को यरूशलेम जाना पड़ा (पद 22)—और हर शहर में आत्मा की गवाही से यह जानने के बावजूद कि उन्हें जेल और मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा (पद 23)—उन्होंने इफिसुस की कलीसिया के बुजुर्गों के सामने परमेश्वर के अनुग्रह की खुशखबरी की गवाही देने के काम के प्रति अपना पक्का इरादा इन शब्दों में ज़ाहिर किया, जो उनके लिए परमेश्वर की इच्छा थी: "मैं अपनी ज़िंदगी को अपने लिए कुछ नहीं समझता, बस मैं अपनी दौड़ पूरी कर सकूँ और उस काम को पूरा कर सकूँ जो प्रभु यीशु ने मुझे सौंपा है—परमेश्वर के अनुग्रह की खुशखबरी की गवाही देने का काम" (पद 24)। पॉल ने परमेश्वर की इच्छा को पूरा करने—खासकर खुशखबरी की गवाही देने का काम पूरा करने—को अपनी ज़िंदगी से ज़्यादा अहमियत दी। दूसरे शब्दों में, वह परमेश्वर की इच्छा पूरी करने के लिए अपनी जान देने को भी तैयार थे। पॉल इफिसुस की कलीसिया के बुजुर्गों से इसी मिसाल वाली ज़िंदगी को याद रखने के लिए कहते हैं।

जब मैं पॉल के जीवन के उदाहरण के बारे में सोचता हूँ, तो मुझे अपने पिता की याद आती है। मुझे स्वर्गीय हेनरी नूवेन की किताब का शीर्षक भी याद आता है, *एक ऐसा व्यक्ति जो दूसरों को यीशु की याद दिलाता है*। इसके अलावा, मुझे भजन 507 याद आता है, "वह जो प्रभु के हृदय का अनुकरण करता है," जिसे हमने आज सुबह की प्रार्थना सभा में दो बार गाया था। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ: "हे प्रभु, मैं यीशु के हृदय का अनुकरण करना चाहता हूँ। मैं यीशु जैसा बनना चाहता हूँ। कृपया मुझे ऐसा व्यक्ति बनाएँ जो दूसरों को यीशु की याद दिलाए।" अपने परिवार के बारे में, शादी से पहले से ही मेरी दो प्रार्थनाओं में से एक यह रही है: "मेरे जीवनसाथी (मेरी वर्तमान पत्नी) को मुझमें यीशु की छवि दिखाई दे, और मुझे भी उनमें यीशु की छवि दिखाई दे।" जब से मैंने प्रार्थना करना शुरू किया है और जब तक प्रभु मुझे अपने पास नहीं बुला लेते, तब तक मेरी यही कोशिश रही है कि मैं यीशु की छवि का अनुकरण करूँ। इसलिए, मेरा मानना है कि अगर मरने से पहले मैं अपनी प्यारी पत्नी और तीन बच्चों को यीशु की छवि की एक झलक भी दिखा सकूँ, तो यह उन्हें दिया जाने वाला सबसे बड़ा उपहार

होगा। इसीलिए, आज सुबह की प्रार्थना सभा के दौरान, मैंने भजन 518 गाया—खासकर चौथा पद: "मैं यीशु जैसा बनना चाहता हूँ; सच्चे दिल से, सच्चे दिल से, मैं यीशु जैसा बनना चाहता हूँ; सच्चे दिल से, सच्चे दिल से, सच्चे दिल से, मैं यीशु जैसा बनना चाहता हूँ; सच्चे दिल से।" यह मेरी दिली प्रार्थना है। मैं इतनी शिद्दत से प्रार्थना करता हूँ क्योंकि मेरा मानना है कि जो व्यक्ति यीशु का अनुकरण करता है, उसकी सेवा का काम मृत्यु के बाद भी जारी रहता है। दूसरे शब्दों में, मेरा मानना है कि जो लोग यीशु जैसा बनने की कोशिश करते हैं, उनके द्वारा जीवित रहते हुए यीशु का उदाहरण पेश करके प्रिय भाई-बहनों के दिलों में जो अच्छी यादें बसाई जाती हैं, वे उनके गुजर जाने के बाद भी उनके दिलों में काम करती रहती हैं। हमें उन लोगों की कद्र करनी चाहिए जो हमें यीशु की याद दिलाते हैं—वे लोग जो मृत्यु के बाद भी हमारे दिलों में जीवित रहते हैं—और प्रभु में उनसे मिलने और संगति करने से हमारे भीतर जो खूबसूरत यादें बस जाती हैं, उनकी भी। जो लोग ऐसी खूबसूरत यादों को अपने दिलों में गहराई से संजोकर रखते हैं, वे सचमुच धन्य और सच्चे अर्थों में अमीर हैं।

वह समय आएगा। एक दिन ज़रूर आएगा जब हमें यह दुनिया छोड़कर प्रभु के पास जाना होगा। मौत के बारे में इस नज़रिए के साथ, हमें उन मुलाकातों की कद्र करनी चाहिए जो भगवान हमें इस दुनिया में रहने के दौरान देते हैं। हमें इन मुलाकातों के ज़रिए प्रभु में खूबसूरत यादें बनाने के लिए खुद को समर्पित करना चाहिए। भले ही हमारा पापी स्वभाव हमें एक-दूसरे को दुखद यादें देने के लिए उकसाए, फिर भी हमें प्रभु में ढेर सारी अच्छी यादें बनाने की कोशिश करनी चाहिए—ऐसी यादें जो आखिरकार बुरी यादों पर भारी पड़ सकें। जैसे-जैसे हमारे बिछड़ने का समय करीब आए, हमें प्रभु द्वारा दी गई अच्छी यादों का इस्तेमाल एक-दूसरे पर सकारात्मक प्रभाव डालने के लिए करना चाहिए। इस आपसी सकारात्मक प्रभाव के ज़रिए, हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि धरती पर भी प्रभु की इच्छा वैसे ही पूरी हो जैसे स्वर्ग में होती है। दूसरे शब्दों में, हमें विनम्रता, आँसुओं और धैर्य के साथ प्रभु की सेवा करनी चाहिए और अपना जीवन उनके सुसमाचार का प्रचार करने के काम में समर्पित कर देना चाहिए। मिशन की इस अटूट भावना के साथ, हमें उस पल के लिए तैयारी करनी चाहिए जब हम अपने प्रियजनों से अलग होंगे—धरती पर होने वाले उस थोड़े समय के अलगाव के लिए तैयारी। मैं दिल से प्रार्थना करता हूँ कि मौत की सच्चाई को ध्यान में रखते हुए, हम ऐसी कई खूबसूरत यादें बनाएँ जो प्रभु द्वारा दी गई मुलाकातों में यीशु की खुशबू को दर्शाएँ, ताकि हमारे गुज़र जाने के बाद भी हम अपने प्रियजनों पर सकारात्मक प्रभाव डालते रहें।

दिन 4: सच्चा ईसाई कौन है?

[रोमियों 2:17-29 पर मनन]

पास्टर ए. डब्ल्यू. टोज़र, जिन्हें 21वीं सदी का पैगंबर कहा जाता था, की किताब *Am I Real or Fake?* (क्या मैं असली हूँ या नकली?) में "एक सच्चे ईसाई की आत्म-जाँच" (Self-Diagnosis for a True Christian) नाम का एक अध्याय है। इसमें, पास्टर टोज़र खुद को जानने के लिए सात सवाल पूछते हैं ताकि हम समझ सकें कि एक सच्चे ईसाई की पहचान कैसे की जाए। भले ही ये सवाल हमारे बारे में सब कुछ न बता पाएँ, लेकिन ये कम से कम थोड़ी मदद ज़रूर करेंगे। मुझे उम्मीद है कि आप इस समय खुद से ये सवाल पूछेंगे: पहला, मैं सबसे ज़्यादा क्या चाहता हूँ? दूसरा, मैं सबसे ज़्यादा किसके बारे में सोचता हूँ? तीसरा, मैं अपना पैसा कैसे खर्च करता हूँ? चौथा, मैं अपना खाली समय कैसे बिताता हूँ? पाँचवाँ, मैं किन लोगों के साथ उठता-बैठता हूँ? छठा, मैं किसका सम्मान करता हूँ और किस चीज़ के लिए उत्साहित रहता हूँ? और सातवाँ, किस चीज़ से मुझे हँसी आती है? इन सवालों को पूछते हुए, पास्टर टोज़र ने आठ तरह के "नकली" लोगों की पहचान की:

- a. नकली ईसाई 'तुरंत' वाला होता है: "तुरंत वाला ईसाई धर्म यह सिखाता है कि विश्वास के एक ही काम से सब कुछ पूरा हो जाता है। नतीजतन, यह और ज़्यादा आध्यात्मिक प्रगति की इच्छा को दबा देता है।"
- b. नकली ईसाई चरित्र में बदलाव को नज़रअंदाज़ करता है: "इस भ्रम से बाहर निकलना कि समय बीतने के साथ समस्याएँ हल हो जाएँगी, समस्याओं को सुलझाने की दिशा में पहला कदम है। हमें समय की नहीं, बल्कि बदलाव की ज़रूरत है। सिर्फ़ परमेश्वर ही हमें बदल सकते हैं।"

c. d. नकली ईसाई कामों के ज़रिए पापों की माफ़ी चाहता है: "कामों के ज़रिए माफ़ी पाने की कोशिशें कभी सफल नहीं हो सकतीं, क्योंकि कोई नहीं जान सकता कि अपनी गलतियों की भरपाई के लिए कितने अच्छे काम करने होंगे।"

e. नकली ईसाई धार्मिक सिद्धांतों (creeds) को नज़रअंदाज़ करता है: "हमें यह नहीं कहना चाहिए कि हम सिद्धांतों के ज्ञान के बिना परमेश्वर के रहस्यों का अनुभव कर सकते हैं और ऐसा अनुभव ही काफ़ी है। सच्चाई वह चीज़ है जिसे शब्दों में बताया जा सकता है, और सिद्धांत बस उसी सच्चाई को शब्दों में बयान करना है।"

f. नकली ईसाई धर्म-विज्ञान (theology) को कम महत्व देता है: "इस दुनिया में सही ढंग से जीने और स्वर्ग के अनंत राज्य को पाने के लिए धर्म-विज्ञान ज़रूरी है। हमें कई मुश्किलों का सामना करना पड़ता है क्योंकि हम बहुत मेहनत से सीखते हैं लेकिन बहुत आसानी से भूल जाते हैं। इसलिए, हमें धर्म-विज्ञान का अध्ययन करने का पक्का इरादा करना चाहिए।" g. नकली चीज़ भावनाओं को नज़रअंदाज़ करती है: "हमें अपनी भावनाओं से डरना या उन्हें नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए, क्योंकि वे हमारे स्वभाव का एक सामान्य हिस्सा हैं, जो हमें ईश्वर ने तब दिए थे जब उन्होंने हमें बनाया था।"

h. नकली चीज़ में आध्यात्मिक संतुलन की कमी होती है: "सच्चाई एक पक्षी की तरह है; यह सिर्फ़ एक पंख से नहीं उड़ सकती। फिर भी, अपनी नादानी में, हम एक पंख को ज़ोर-ज़ोर से फड़फड़ाकर उड़ने की कोशिश करते हैं, जबकि दूसरे पंख को दबाकर रखते हैं।"

आज के अंश—रोमियों 2:28-29—में प्रेरित पौलुस, रोम में विश्वासियों को लिखते हुए, "बाहर से यहूदी" और "अंदर से यहूदी" के बारे में बात करते हैं। प्रेरित पौलुस रोम के संतों को लिखे अपने पत्र में "बाहरी तौर पर यहूदी" और "अंदरूनी तौर पर यहूदी" की बात क्यों करते हैं? इसका कारण उन यहूदी विश्वासियों को यह सिखाना है—जो आध्यात्मिक श्रेष्ठता की भावना के कारण अपने गैर-यहूदी भाइयों को माफ़ करने के बजाय उनकी बुराई करते थे ("न्याय" करते थे)—कि बाहरी तौर पर यहूदी होने से कोई सच्चा यहूदी नहीं बन जाता; बल्कि, अंदरूनी तौर पर यहूदी होना ही सच्चा यहूदी होना है। जब मैंने पौलुस की इस शिक्षा पर मनन किया,

तो मैंने खुद से पूछा: "तो फिर, सच्चा ईसाई कौन है, और कौन केवल बाहरी तौर पर ईसाई है—यानी, कोई ऐसा व्यक्ति जो केवल ऊपर-ऊपर से ईसाई दिखता है?"

आइए सबसे पहले "बाहरी तौर पर ईसाई" (ऊपरी तौर पर ईसाई) पर विचार करें।

सबसे पहले, ऊपरी तौर पर ईसाई खुद को "ईसाई" कहता है।

आज के वचन, रोमियों 2:17 में, हम देखते हैं कि जो यहूदी केवल बाहरी तौर पर यहूदी थे, वे खुद को "यहूदी" कहते थे। वे खुद को "यहूदी" क्यों कहते थे, जबकि वे सच्चे यहूदी नहीं थे? ऐसा इसलिए था क्योंकि उनमें विशेषाधिकार की भावना थी। पौलुस के समय में, ये यहूदी गर्व से खुद को "यहूदी" कहते थे क्योंकि उनका मानना था कि केवल उन्हें ही परमेश्वर से विशेष अधिकार मिले हैं। परमेश्वर से मिले वे विशेष विशेषाधिकार क्या थे जिनके बारे में वे डींगें मारते थे? हम तीन मुख्य पहलुओं की पहचान कर सकते हैं: चुने हुए लोगों में शामिल होना, व्यवस्था पर भरोसा करना, और परमेश्वर के साथ विशेष संबंध (NICNT)। इस प्रकार, परमेश्वर के साथ अपने विशेष संबंध के विशेषाधिकार और आध्यात्मिक श्रेष्ठता की भावना से प्रेरित होकर, ये ऊपरी तौर पर यहूदी लोग उसी समुदाय में अपने गैर-यहूदी भाइयों के सामने परमेश्वर के बारे में डींगें मारते थे (वचन 17)। हालाँकि ऐसी डींगें ऊपर-ऊपर से परमेश्वर के बारे में लग सकती हैं, लेकिन असल में यह खुद के बारे में डींगें मारने का एक तरीका है।

इसी तरह, "ऊपरी तौर पर ईसाई"—जो केवल बाहर से ईसाई दिखते हैं—उनमें भी हक जताने की भावना होती है। वे चर्च के भीतर ऐसे विशेष विशेषाधिकारों का इस्तेमाल करना चाहते हैं जो उनके अनुसार केवल उन्हीं के हैं। हालाँकि वे परमेश्वर के बारे में डींगें मारते हुए दिखते हैं, लेकिन अपने दिल की गहराइयों में—जहाँ परमेश्वर सब कुछ देखते हैं—वे चुपके से आध्यात्मिक श्रेष्ठता और गर्व के कारण खुद को ऊँचा उठाने में खुशी महसूस करते हैं। उनका अंतिम लक्ष्य व्यक्तिगत महिमा और दूसरों से पहचान पाना होता है; नतीजतन, वे इंसानी तारीफ के भूखे होते हैं। बाइबल बताती है कि परमेश्वर का क्रोध (1:18-32) और न्याय (2:1-16) उन लोगों का इंतज़ार कर रहा है जो ईसाई होने का दावा तो करते हैं, लेकिन खुद को बहुत खास समझते हैं, अपनी डींगें मारते हैं और चर्च में खास अधिकारों की मांग करते हैं।

दूसरी बात, दिखावटी ईसाई खुद को सच्चे ईसाई मानते हैं।

आज के हिस्से—रोमियों 2:19-20—में हम देखते हैं कि दिखावटी यहूदी खुद को अंधों, अंधेरे में रहने वालों, नासमझों और अपरिपक्व लोगों का मार्गदर्शक और शिक्षक मानते थे। फिर भी, हैरानी की बात है कि ये दिखावटी यहूदी यह नहीं समझ पाए कि असल में अंधे, अंधेरे में रहने वाले, नासमझ और अपरिपक्व तो *वे खुद* थे। इस अज्ञानता की जड़ थी आध्यात्मिक श्रेष्ठता की भावना—दूसरे शब्दों में, घमंड। घमंड हमें अंधा बना देता है। आध्यात्मिक घमंड हमें अपनी कमज़ोरियों और कमियों पर सोचने से रोकता है; इसके बजाय, यह हमें दूसरे विश्वासियों की कमज़ोरियों और खामियों को उजागर करने और खुद को उनसे बेहतर दिखाने के लिए उनकी तुलना अपने आप से करने के लिए उकसाता है। मेरा मानना है कि यह बात खासकर उन लोगों में देखी जाती है जो ऐसे बात करते हैं जैसे उन्हें बहुत कुछ पता हो। इसका कारण यह है कि जो लोग अपनी अज्ञानता को स्वीकार करते हैं, वे अपनी अज्ञानता में भी विनम्र रहते हैं और उनमें सीखने की सच्ची इच्छा और उत्साह होता है; इसके विपरीत, जो लोग लंबे समय से चर्च की गतिविधियों में शामिल हैं और बाइबल को अच्छी तरह जानते हैं, वे अक्सर आध्यात्मिक श्रेष्ठता की भावना और खुद को ऊंचा दिखाने की इच्छा के शिकार हो जाते हैं। नतीजतन, वे चर्च की शांति भंग करते हैं और परेशानियां खड़ी करते हैं।

तीसरी बात, दिखावटी ईसाई दूसरों को सिखाना तो पसंद करते हैं, लेकिन खुद को नहीं सिखाते।

आज के हिस्से, रोमियों 2:21 में, पौलुस रोम के पवित्र लोगों—खासकर यहूदी विश्वासियों—को ये शब्द लिखते हैं: "तो तुम, जो दूसरों को सिखाते हो, क्या तुम खुद को नहीं सिखाते?" "तुम जो चोरी न करने की शिक्षा देते हो, क्या तुम खुद चोरी करते हो?" मूसा के ज़रिए परमेश्वर से नियम पाने वाले इन यहूदी विश्वासियों को नियम पर भरोसा था (वचन 17) और वे गलतफहमी में थे कि वे इसकी शिक्षाओं से परमेश्वर की इच्छा को समझते हैं (वचन 18); अपने घमंड में, उन्हें दूसरों को सिखाने में मज़ा आता था। हालाँकि वे नियम की मनाही वाली बातों—जैसे "चोरी न करना" (वचन 21), "व्यभिचार न करना," और "मूर्तियों से घृणा करना" (वचन 22)—को सिखाने के लिए उत्सुक थे, फिर भी वे इन सीखों को अपने जीवन में लागू करने में नाकाम रहे और वही पाप किए जिनसे वे दूसरों को रोकते थे। इसलिए, वचन 23-24 में, पौलुस उन्हें फटकारता है: "तुम जो नियम पर गर्व करते हो, क्या नियम तोड़कर परमेश्वर का अनादर करते हो? जैसा कि लिखा है: 'तुम्हारी वजह से

गैर-यहूदियों के बीच परमेश्वर के नाम की निंदा होती है।" किसी व्यक्ति के पास बाइबल का बहुत ज्ञान हो सकता है—और वह बाइबल के अनुसार सही बातें सिखा भी सकता है—फिर भी उसे "ढोंगी" माना जा सकता है; इसका कारण यह है कि भले ही वे दूसरों को सिखाने में माहिर हों, लेकिन वे खुद को सिखाने में नाकाम रहे हैं।

मैंने एक बार अपने सबसे छोटे बच्चे, ये-उन को सिखाया था कि "धैर्य" का मतलब है "अच्छे से इंतज़ार करना।" फिर भी, मैं खुद धैर्य रखना नहीं सीख पाया। हालाँकि बच्चों को बाइबल की शिक्षाएँ देना माता-पिता का फ़र्ज़ है, लेकिन मैंने खुद को परमेश्वर के सामने सिखाने के शुरुआती कदम को नज़रअंदाज़ कर दिया था। नतीजतन, क्योंकि मैंने खुद धैर्य अपनाए बिना अपने बच्चे को धैर्य के बारे में सिखाने की कोशिश की, इसलिए मैं उसके दिल पर कोई स्थायी छाप छोड़ने में नाकाम रहा। डॉ. पार्क युन-सन ने एक बार कहा था: "ऐसे व्यक्ति की दी गई शिक्षा दूसरों के प्रति दया की भावना से नहीं, बल्कि अहंकार या तिरस्कार की भावना से निकलती है। ऐसी शिक्षा सीखने वाले को प्रेरित करने में विफल रहती है; इसके बजाय, यह नाराज़गी पैदा करती है।"

चौथी और आखिरी बात, दिखावटी ईसाई मुख्य रूप से अपनी बाहरी ज़िंदगी पर ध्यान देते हैं।

रोम में यहूदी विश्वासियों को कानून और खतना के बारे में संबोधित करते हुए, पौलुस उन्हें समझाते हैं कि केवल कानून का होना या उसे सुनना काफ़ी नहीं है; उसे असल में अमल में लाना ज़रूरी है (पद 13)। वह कहते हैं कि अगर कोई कानून का पालन नहीं करता है, तो खतना बेमानी हो जाता है—असल में बिना खतना वाले व्यक्ति से कोई फ़र्क नहीं रह जाता (पद 25)। पौलुस यहूदी विश्वासियों से इस तरह इसलिए बात करते हैं क्योंकि कानून और खतना ही वे चीज़ें थीं जिन पर उन्हें गर्व था—उनकी विशेषाधिकार की भावना के मुख्य तत्व। यहूदियों के लिए, कानून और खतना परमेश्वर के चुने हुए लोगों की पहचान थे, जो बहुत गर्व का स्रोत थे। हालाँकि, समस्या यह थी कि ये यहूदी कानून का पूरी तरह से पालन नहीं करते थे। ऐसा करने में, उन्होंने आध्यात्मिक अहंकार और घमंड का पाप किया, अपनी स्थिति के बारे में डींगें मारीं और दूसरों (गैर-यहूदियों) की निंदा करने के लिए इसका इस्तेमाल किया। यही "दिखावटी ईसाइयों" का स्वभाव है—वे जो केवल बाहर

से ईसाई दिखते हैं। क्योंकि उन्होंने अपने विश्वास के बाहरी पहलुओं पर इतना ज़्यादा ध्यान दिया, वे पाखंडी बन गए; आखिरकार, वे ऐसी ईसाई ज़िंदगी जीने में लग गए जो दूसरों के सामने सिर्फ़ दिखावे के लिए थी।

तो फिर, सच्चा ईसाई कौन है? सच्चा ईसाई वह नहीं है जो केवल ऊपर-ऊपर से ईसाई है, बल्कि वह है जो अंदर से—दिल से—ईसाई है। यह "अंदरूनी ईसाई" कौन है? हम तीन विशेषताओं पर विचार कर सकते हैं।

पहली बात, एक अंदरूनी ईसाई यह मानता है कि उसे केवल परमेश्वर की कृपा से ही बचाया गया है। आज के वचन, रोमियों 2:29 में, पौलुस रोम के विश्वासियों को बताते हैं कि एक सच्चा यहूदी—अंदरूनी तौर पर—वह है जिसके दिल का खतना पवित्र आत्मा द्वारा किया गया है। इसका मतलब है कि जिन्हें परमेश्वर ने सच्चे यहूदी या ईसाई के रूप में चुना है, वे इसलिए बचाए गए हैं क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें प्यार से चुना और यीशु मसीह पर विश्वास करने के लिए प्रेरित किया, न कि इसलिए कि उन्होंने व्यवस्था के काम किए। पौलुस ने रोम के यहूदी विश्वासियों पर इस बात का ज़ोर दिया क्योंकि वे मानते थे कि उद्धार शर्तों पर आधारित है—यानी व्यवस्था का पालन करने से मिलता है—जबकि उन्हें इसे परमेश्वर की बिना शर्त कृपा के रूप में समझना चाहिए था। चूँकि वे यीशु के क्रूस की योग्यता के बजाय इंसानी योग्यता पर भरोसा करने की गलती कर रहे थे, इसलिए पौलुस ने उन्हें परमेश्वर की बिना शर्त कृपा से मिलने वाले उद्धार के बारे में सिखाने के लिए यह पत्र लिखा। एक अंदरूनी ईसाई—एक सच्चा ईसाई—इफिसियों 2:8-9 के शब्दों पर पूरा विश्वास करता है: "क्योंकि तुम्हें अनुग्रह से ही विश्वास के द्वारा उद्धार मिला है—और यह तुम्हारी ओर से नहीं, बल्कि परमेश्वर का वरदान है—कामों के कारण नहीं, ताकि कोई घमंड न कर सके।" सच्चे ईसाई समझते हैं कि विश्वास और उद्धार दोनों परमेश्वर के वरदान हैं; वे जानते हैं कि ये चीज़ें उनके अपने कामों से नहीं मिलतीं। नतीजतन, उन्हें एहसास होता है कि उनके पास खुद पर घमंड करने का कोई आधार या इच्छा नहीं है।

दूसरी बात, "अंदरूनी ईसाई" ऐसे विश्वास के साथ जीता है जिसमें काम भी शामिल होते हैं।

"बाहरी ईसाई" के विपरीत, अंदरूनी ईसाई कभी भी सिर्फ़ जुबान से विश्वास का दिखावा नहीं करता, जबकि मन में व्यवस्था या खतने को लेकर अहंकार या घमंड पाले बैठा हो। वे ऐसे लोग नहीं हैं जो बस परमेश्वर का वचन सुनते हैं और उसके बारे में बातें करते हैं; बल्कि, वे परमेश्वर का वचन सुनते हैं, उसका पालन करते हैं और अच्छे फल लाते हैं। जब वे दुनिया में जाते हैं, तो वे सिर्फ़ यह नहीं कहते कि "मैं चर्च जाता हूँ" या "मैं यीशु पर विश्वास करता हूँ।" इसके बजाय, वे अंधेरी दुनिया में कदम रखते हैं और ऐसा जीवन जीते हैं जो सचमुच यीशु मसीह की रोशनी को दर्शाता है। अगर हम सच्चे ईसाई हैं, तो मेरा मानना है कि हमें शर्म महसूस होनी चाहिए—हमें लज्जित होना चाहिए। कारण यह है कि हम ऐसा जीवन जीने में नाकाम हो रहे हैं जो दुनिया में रोशनी की तरह चमके; दूसरे शब्दों में, चर्च अपनी असली पहचान बनाए रखने में नाकाम हो रहा है। एक गॉस्पेल गीत के बोल कहते हैं कि हमें शर्म आनी चाहिए कि भले ही हमारे होंठ यीशु जैसे दिखते हों, लेकिन हमारे काम और ज़िंदगी अक्सर उनसे बहुत अलग होते हैं। हमें पछतावा करना चाहिए। प्रभु की कलीसिया को पछतावा करना चाहिए। हमें वापस मुड़ना चाहिए, परमेश्वर के वचन को सुनना चाहिए और अपने कामों से सच्चा, जीवंत विश्वास दिखाना चाहिए।

तीसरी बात, जो ईसाई अंदरूनी जीवन पर ध्यान देते हैं, वे बाहरी दिखावे के बजाय अपने अंदर के आध्यात्मिक जीवन पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

ऐसे ईसाइयों के लिए, लोगों से नहीं बल्कि परमेश्वर से प्रशंसा पाना मायने रखता है (पद 29b)। वे लोगों के बजाय परमेश्वर द्वारा पहचाने जाने की कोशिश करते हैं। विश्वास का जीवन जो सचमुच किसी के अंदरूनी व्यक्तित्व को निखारता है, वह सुंदर होता है। कोरिया के सामिल चर्च के पादरी जियोन ब्योंग-वूक के एक उपदेश का सार यह संदेश देता है: "विश्वास का सार बाहरी आवरण में नहीं, बल्कि अंदरूनी व्यक्तित्व में होता है। सच्चा विश्वास बाहरी दिखावे के बारे में नहीं है; यह अपने अंदरूनी विश्वास के अनुसार जीने के बारे में है। विश्वास केवल दूसरों पर निर्भर रहने या उनका पक्ष लेने के बारे में नहीं है; बल्कि, कोई व्यक्ति जिस तरह से जीता है, वही उसका विश्वास है। इसलिए, विश्वास का अर्थ है अपने अंदरूनी संसार में जो माना है, उसके अनुसार जीना। तो, जीने का अर्थ बाहरी आवरण से परिभाषित जीवन जीना नहीं है, बल्कि ऐसा जीवन जीना है जो भीतर से फूटकर बाहर आता है।"

इससे भजन 518, "मैं एक विश्वासी बनना चाहता हूँ" (I Want to Be a Believer) की याद आती है। इसके बोलों में "सच्चाई से" (sincerely) वाक्यांश बीस बार आता है। हम "विश्वासी बनने," "प्रेम करने," "पवित्र बनने" और "यीशु जैसा बनने" की सच्चाई से इच्छा रखने के बारे में गाते हैं। इस भजन की पृष्ठभूमि पर शोध करने से पता चलता है कि यह एक 'नीग्रो स्पिरिचुअल' (अश्वेत आध्यात्मिक गीत) है। नीग्रो स्पिरिचुअल वे गीत हैं जो अश्वेत गुलामों—जिन्हें अफ्रीका से अमेरिका लाया गया था और जिन्होंने केवल अपनी त्वचा के रंग के कारण हर तरह का अपमान और तिरस्कार सहा था—की आध्यात्मिक चाहतों और गहरी भावनाओं को कई वर्षों के दौरान व्यक्त करते थे। सचमुच, इतने अपमान और तिरस्कार को सहने वाले ये अश्वेत गुलाम, यहूदी विश्वासियों की तरह आध्यात्मिक श्रेष्ठता की भावना के साथ "सच्चे विश्वासी" होने का दावा कैसे कर सकते थे या दूसरों को सिखाने में खुशी कैसे मना सकते थे? वे भला कौन से बाहरी प्रमाण दिखा सकते थे? क्या आप सच्चे विश्वासपात्र बनने की सच्ची और गहरी इच्छा के साथ, अपने दिल की गहराइयों से परमेश्वर को नहीं पुकारेंगे? मेरी प्रार्थना है कि हम सिर्फ ऊपर-ऊपर से नहीं, बल्कि अपने मन की गहराइयों से विश्वासपात्र बनें। मुझे उम्मीद है कि हम पूरे दिल से विश्वासपात्र बनेंगे और यह जानेंगे कि हम परमेश्वर की कृपा से बचाए गए हैं। मुझे उम्मीद है कि हमारा विश्वास ऐसा होगा जिसके साथ काम भी जुड़े हों। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम ऐसे सच्चे विश्वासपात्र बनें जो बाहरी दिखावे पर ध्यान देने के बजाय अपने अंदर अच्छाई और सुंदरता को विकसित करें।

दिन 5: आध्यात्मिक मनोवृत्ति

[लूका 18:9 पर मनन]

“यीशु ने यह दृष्टांत उन लोगों को सुनाया जो खुद को धर्मी समझते थे और दूसरों को तुच्छ समझते थे” (लूका 18:9)।

“आप किस तरह के इंसान हैं, यह इस बात से कहीं ज़्यादा ज़रूरी है कि आप किस तरह का काम करते हैं।” जब हमें यह एहसास होता है कि हम क्या करते हैं, उससे कहीं ज़्यादा ज़रूरी यह है कि हम कौन हैं, तो हमें अपने दिलों में सही आध्यात्मिक मनोवृत्ति विकसित करनी चाहिए—जो आस्था रखने वाले व्यक्ति के लिए सबसे ज़रूरी प्राथमिकताओं में से एक है। और जिन ज़रूरी आध्यात्मिक मनोवृत्तियों को हमें विकसित करना चाहिए, उनमें से एक है विनम्रता।

आज के वचन, लूका 18:9 में, हम एक फरीसी से मिलते हैं जो खुद को धर्मी मानता था और दूसरों को तुच्छ समझता था। वह ऐसा व्यक्ति था जो लोगों के सामने खुद को सही ठहराता था और चाहता था कि लोग उसकी तारीफ़ करें (16:15)। उसकी आध्यात्मिक मनोवृत्ति अहंकार से भरी थी; उसमें आध्यात्मिक श्रेष्ठता की भावना थी। वह खुद को कर वसूलने वालों और दूसरे पापियों से कहीं ऊपर समझता था। यीशु के दृष्टांत में फरीसी की प्रार्थना पर गौर करें: “हे परमेश्वर, मैं तेरा धन्यवाद करता हूँ कि मैं दूसरे लोगों—लुटेरों, बुरे काम करने वालों, व्यभिचारियों—या यहाँ तक कि इस कर वसूलने वाले जैसा नहीं हूँ। मैं हफ़्ते में दो बार उपवास करता हूँ और अपनी सारी कमाई का दसवाँ हिस्सा देता हूँ” (वचन 11-12)। फरीसी में ऐसी आध्यात्मिक श्रेष्ठता की भावना क्यों थी? ऐसा इसलिए था क्योंकि उसने इस बात पर ध्यान केंद्रित किया कि *उसने*

परमेश्वर के लिए क्या किया है, न कि इस बात पर कि *परमेश्वर* ने क्या किया है। अपनी किताब *द ग्रेस अवेकनिंग* में, पादरी चार्ल्स स्विंडोल इस सोच को "पाखंडों का पाखंड" कहते हैं। हमारे लिए इस पाखंड में पड़ना बहुत आसान है। जब हम इस बात पर ध्यान केंद्रित करते हैं कि हमने परमेश्वर के लिए क्या किया है, बजाय इसके कि यीशु मसीह में हमारे उद्धार के लिए परमेश्वर ने क्या किया है, तो आध्यात्मिक अहंकार और श्रेष्ठता की भावना में पड़ना आसान हो जाता है। अगर हम इससे सावधान नहीं रहते, तो हमारे दिल धीरे-धीरे आध्यात्मिक अहंकार और श्रेष्ठता की भावना से भर जाएँगे और हमें इसका पता भी नहीं चलेगा। फरीसी के विपरीत, कर वसूलने वाला प्रार्थना करने के लिए मंदिर गया और दूर खड़ा रहा; उसने स्वर्ग की ओर आँखें उठाने की हिम्मत भी नहीं की, बल्कि अपनी छाती पीटी और प्रार्थना की, "हे परमेश्वर, मुझ पापी पर दया कर" (वचन 13)। कम से कम, जब वह टैक्स वसूलने वाला प्रार्थना करने के लिए परमेश्वर के सामने आया, तो उसने माना और स्वीकार किया कि वह एक पापी है। इसीलिए उसने पुकारा, "हे परमेश्वर, मुझ पर दया कर।" यह एक आशीष है। पवित्र परमेश्वर के सामने खुद को पापी समझना एक आशीष है। इसके अलावा, अपने पापों को स्वीकार करना और उस अनमोल एहसास के साथ परमेश्वर की दया की विनती करना सचमुच एक आशीष है। परमेश्वर के सामने खुद को नम्र करना एक आशीष है। हमें परमेश्वर के सामने खुद को नम्र करना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे उस टैक्स वसूलने वाले ने किया था। हमें इस आशीष की चाहत रखनी चाहिए कि परमेश्वर की पवित्र उपस्थिति में हमारे पाप उजागर हों। जब परमेश्वर का पवित्र वचन हमारे अंतःकरण को भेदता है, तो हमें अपने पापों को स्वीकार करना चाहिए और उनके सामने उन्हें मानना चाहिए। ऐसा करते समय, हमें दूसरों को खुद से बेहतर समझना चाहिए, जैसा कि फिलिप्पियों 2:3 सिखाता है।

परमेश्वर घमंडी लोगों का विरोध करता है लेकिन नम्र लोगों को अनुग्रह देता है (याकूब 4:6)। हमें पवित्र परमेश्वर के सामने खुद को नम्र करना चाहिए। हमें कभी भी खुद को धर्मी नहीं समझना चाहिए, जैसा कि फरीसी करते थे। इससे बचने के लिए, हमें फरीसियों के विपरीत, लोगों के सामने नहीं बल्कि परमेश्वर के सामने अपने विश्वास के अनुसार जीना चाहिए। हमें लगातार परमेश्वर के पवित्र वचन की रोशनी में खुद को परखना चाहिए और अपने दिलों और इरादों में छिपे पापों के लिए भी उनसे पश्चाताप करना चाहिए। ऐसा करते समय, हमें विश्वास के साथ उस बात पर ध्यान देना चाहिए जो परमेश्वर ने यीशु मसीह में हमारे लिए पूरी की है। हमें क्रूस पर बहाए गए यीशु के अनमोल लहू पर भरोसा करते हुए अपने पापों से पश्चाताप करना चाहिए। हमें पश्चाताप में परमेश्वर के सामने नम्रता से झुकना चाहिए और पूरी तरह से यीशु की धार्मिकता पर

भरोसा करना चाहिए। यीशु के क्रूस की योग्यता पर भरोसा करते हुए, हमें परमेश्वर के अनुग्रह के सिंहासन के पास जाना चाहिए और नम्रता से उनकी मदद मांगनी चाहिए।

छठा दिन: अविश्वास, आज्ञा न मानना और असंतोष

[व्यवस्थाविवरण 1:32 पर मनन]

"इस मामले में, तुमने अपने परमेश्वर यहोवा पर भरोसा नहीं किया।" (व्यवस्थाविवरण 1:32)

जो लोग परमेश्वर पर विश्वास करते हैं, वे उसके वचन को मानते हैं, और जो उसके वचन को मानते हैं, वे परमेश्वर पर विश्वास करते हैं। हम जितना ज़्यादा परमेश्वर के वचन का पालन करते हैं, उतना ही ज़्यादा उसकी उपस्थिति का अनुभव करते हैं, जिससे स्वाभाविक रूप से उस पर हमारा भरोसा और भी बढ़ जाता है। इसके अलावा, जैसे-जैसे हम परमेश्वर की आज्ञा मानते हैं, हम गहराई से जान पाते हैं कि परमेश्वर असल में कौन है। इसके विपरीत, जो लोग परमेश्वर पर विश्वास नहीं करते, वे उसके वचन को नहीं मानते, और जो उसके वचन को नहीं मानते, वे परमेश्वर पर विश्वास नहीं करते। हम जितना ज़्यादा परमेश्वर के वचन की अवहेलना करते हैं, उतना ही कम उसकी उपस्थिति का अनुभव करते हैं, जिससे हम और भी ज़्यादा अविश्वास में डूबते चले जाते हैं। जब हम परमेश्वर की आज्ञा नहीं मानते, तो हम न केवल उसके स्वभाव से, बल्कि खुद से भी अनजान हो जाते हैं; इससे दिल कठोर हो जाता है और अहंकार पैदा होता है, जो हमें उसके विरुद्ध और भी ज़्यादा पाप करने के लिए उकसाता है। जो लोग परमेश्वर पर विश्वास नहीं करते और उसके विरुद्ध पाप करते हैं, उनके जीवन में पाप का जो फल मिलता है, वह है आज्ञा न मानना और असंतोष। दूसरे शब्दों में, अविश्वास का पापपूर्ण फल आज्ञा न मानना और असंतोष है।

आज के वचन, व्यवस्थाविवरण 1:32 में जिन इस्राएलियों का ज़िक्र है, उन्होंने परमेश्वर पर विश्वास नहीं किया। अपने अविश्वास के कारण, उन्होंने परमेश्वर की आज्ञा नहीं मानी। हालाँकि परमेश्वर ने उन्हें आज्ञा दी थी कि "ऊपर जाओ और कनान देश पर अधिकार कर लो—डरो मत; हिचकिचाओ मत" (पद 21), फिर भी इस्राएलियों ने ऊपर जाने से इनकार कर दिया और परमेश्वर की आज्ञा के विरुद्ध विद्रोह किया (पद 26)।

उन्होंने न केवल परमेश्वर की आज्ञा को ठुकराया, बल्कि उसके विरुद्ध अपनी शिकायतें भी ज़ाहिर कीं। उन्होंने परमेश्वर के विरुद्ध बड़बड़ाहट की। संक्षेप में, उनकी शिकायत यह थी कि "परमेश्वर हमसे नफ़रत करता है" (पद 27)। उनका कहना था कि परमेश्वर उन्हें मिस्र देश से इसलिए बाहर लाया था ताकि उन्हें अमोरी लोगों के हाथों बर्बाद होने के लिए सौंप दे। इस्राएली परमेश्वर से सचमुच बेतुकी बात कह रहे थे। अगर परमेश्वर उनसे नफ़रत करता, तो वह उन्हें मिस्र से बचाता ही क्यों? परमेश्वर ने साफ़ तौर पर उन्हें प्यार के कारण बचाया था, फिर भी उनका मानना था कि वह उनसे नफ़रत करता है। उन्होंने ऐसा क्यों सोचा? मेरा मानना है कि इसकी मूल वजह उनका अविश्वास था। दूसरे शब्दों में, क्योंकि उन्हें परमेश्वर पर भरोसा नहीं था और उन्होंने उसकी आज्ञा नहीं मानी, इसलिए वे उसके प्यार को महसूस नहीं कर पाए; और क्योंकि वे उस प्यार को महसूस नहीं कर सके, इसलिए वे असंतुष्ट हो गए। आखिर में, अविश्वास का नतीजा सिर्फ़ आज्ञा न मानना और असंतोष ही नहीं था, बल्कि आध्यात्मिक संवेदनहीनता भी थी—यानी परमेश्वर के प्यार को महसूस न कर पाना। इसके अलावा, अपनी असंतुष्टि में, उन्होंने सिर्फ़ परमेश्वर के खिलाफ़ शिकायत ही नहीं की; बल्कि उन दस जासूसों से भी नाराज़गी जताई जो कनान की जासूसी करके अविश्वास भरी रिपोर्ट लेकर लौटे थे—जबकि जोशुआ और कालेब विश्वास भरी रिपोर्ट लाए थे। उनकी शिकायत यह थी कि इन दस जासूसों की वजह से उनका हौसला टूट गया (वचन 28)। इससे मेरे मन में एक बात आती है। जब परमेश्वर ने आज्ञा दी, "ऊपर जाओ और उस पर कब्ज़ा कर लो; डरो मत और हिचकिचाओ मत" (वचन 21), तो इस्राएलियों को बस "हाँ" कहकर आज्ञा मान लेनी चाहिए थी। इसके बजाय, उन्होंने एक योजना बनाई और उसे लागू किया: "आओ हम अपने आगे कुछ लोगों को भेजें ताकि वे हमारे लिए ज़मीन की जासूसी करें और उस रास्ते और उन शहरों के बारे में रिपोर्ट लाएँ जहाँ हमें जाना है" (वचन 22)। वे परमेश्वर की बात को तुरंत मान सकते थे; फिर उन्होंने यह योजना क्यों बनाई और उसे क्यों लागू किया, और आखिर में उन दस जासूसों से नाराज़गी का पाप क्यों किया जो अविश्वास भरी रिपोर्ट लाए थे? वजह यह है कि उन्हें परमेश्वर पर भरोसा नहीं था। दूसरे शब्दों में, इस्राएलियों को उस परमेश्वर पर विश्वास नहीं था जो उनके आगे-आगे चल रहा था (वचन 30)। इसीलिए उन्होंने अपने आगे जासूस भेजे (वचन 22)। क्योंकि उन्हें यह भरोसा नहीं था कि परमेश्वर उनके आगे चलेगा और उनकी तरफ़ से लड़ेगा, इसलिए एमोरियों से लड़ने की बात सुनकर वे डर गए; नतीजतन, उन्होंने परमेश्वर के खिलाफ़ बड़बड़ाहट की और जासूसों—जो उनके अपने भाई थे—से नाराज़गी जताई। आखिर में, बड़बड़ाहट का पाप अविश्वास का ही कड़वा फल है—यानी परमेश्वर पर भरोसा न कर पाना।

हमें परमेश्वर पर भरोसा करना चाहिए। हमें उस परमेश्वर पर विश्वास करना चाहिए जिसने हमें शैतान के राज्य—जैसे मिस्र—से बचाया है और हमें 'वादे की ज़मीन', यानी परमेश्वर के राज्य की ओर ले जा रहा है। इसके अलावा, हमें उस पर विश्वास रखते हुए परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करना चाहिए। जब हम परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करते हैं, तो हम उस प्रेम को साफ़ महसूस कर सकते हैं जो वह हम पर बरसाता है। और जब हम उस प्रेम का अनुभव करते हैं, तो हम बिना किसी डर या हिचकिचाहट के, विश्वास के साथ उसकी आज्ञाओं का पालन कर सकते हैं। हम उस परमेश्वर पर विश्वास करके उसकी आज्ञाओं का निडरता से पालन कर सकते हैं जो हमारे आगे चलता है और हमारी ओर से लड़ता है। इसके अलावा, हम अपने प्रभु परमेश्वर पर भरोसा रखते हुए आज्ञाकारिता में आगे बढ़ सकते हैं—वही परमेश्वर जिसने हमारी यात्रा में हमें वैसे ही संभाला है जैसे एक पिता अपने बेटे को गोद में उठाकर चलता है, और हमें इस जगह तक पहुँचाया है (वचन 31)। हम अपने प्रेम करने वाले पिता परमेश्वर की गोद में आराम पाते हुए, कृतज्ञता और संतोष से भरे दिलों के साथ परमेश्वर के वचन का पालन करते हुए आगे बढ़ सकते हैं। क्या हम सचमुच विश्वास से उपजे कृतज्ञ हृदय के साथ परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन कर रहे हैं? क्या हम सचमुच केवल प्रभु में ही पूरी संतुष्टि पाते हुए उसकी आज्ञाओं का पालन कर रहे हैं?

दिन 7: आइए हम भौतिक आशीषें पाने से डरें

[व्यवस्थाविवरण 8:17 पर मनन]

“और कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने मन में कहो, ‘मैंने यह धन अपनी शक्ति और अपने हाथ के बल से कमाया है’” (व्यवस्थाविवरण 8:17)।

ऐसा लगता है कि हममें से जो लोग यीशु पर विश्वास करते हैं, उन्हें भौतिक आशीषें पाना बहुत पसंद है। जब हम लोगों को लगातार आशीषों के बारे में बात करते हुए देखते हैं, तो ऐसा लगता है कि हम विश्वासी परमेश्वर और धन, दोनों की सेवा कर रहे हैं (मत्ती 6:24)। यह सच्चा विश्वास नहीं है। यह अलग-अलग मान्यताओं का मिला-जुला रूप (syncretism) है। हमें या तो परमेश्वर की सेवा करनी चाहिए या धन की, लेकिन हम दोनों की सेवा कर रहे हैं। शायद हम धन के लिए ही परमेश्वर की सेवा कर रहे हैं। भौतिक चीज़ों को इतना महत्व देने से हम अंततः भौतिक चीज़ों के गुलाम बन जाते हैं, और अपना जीवन उन्हीं चीज़ों के लिए जीते हैं। हम भौतिक चीज़ों के लिए पढ़ाई करते हैं और भौतिक चीज़ों के लिए काम करते हैं। यहाँ तक कि हम अपना धार्मिक जीवन भी भौतिक चीज़ों के लिए जीते हैं। इसलिए, जब हम प्रार्थना करते हैं, तो हम परमेश्वर से भौतिक आशीषें मांगते हैं, और जब हम पादरियों से आशीष पाते हैं, तो हम भौतिक आशीषों के लिए प्रार्थना पाने की बहुत इच्छा रखते हैं। हमारे होंठ और कान दोनों ही भौतिक आशीषों के लिए तरसते हैं। और हमारे हाथ-पैर भी भौतिक आशीषों को पाने की कोशिश में लगे रहते हैं। इसका कारण यह है कि हमारे दिल भौतिक चीज़ों में लगे हैं। मुझे यीशु के शब्द याद आते हैं: “जहाँ तुम्हारा धन है, वहीं तुम्हारा मन भी होगा” (मत्ती 6:21)। दुनिया के खजानों ने हमारे दिलों को चुरा लिया है। नहीं, हमें इस दुनिया के खजानों की लत लग गई है। हमें डरना चाहिए। हमें पैसे से प्यार करने से डरना चाहिए (1 तीमुथियुस 6:10)। हमें भौतिक आशीषें पाने से डरना चाहिए। हमें लापरवाही से परमेश्वर से भौतिक आशीषें नहीं मांगनी चाहिए।

आज के वचन, व्यवस्थाविवरण 8:17 में, हम देखते हैं कि मूसा को एक डर था। उसे डर था कि कहीं इस्राएल के लोग अपने मन में यह न कहें, "मेरी शक्ति और मेरे हाथ के बल ने मेरे लिए यह धन कमाया है।" हालाँकि यह स्पष्ट था कि परमेश्वर ने ही उन्हें धन कमाने की क्षमता दी थी (वचन 18), फिर भी मूसा को डर था कि वे उस धन का श्रेय अपनी ही शक्ति और बल को देंगे। संक्षेप में, मूसा को डर था कि इस्राएली घमंडी हो जाएंगे और परमेश्वर को भूल जाएंगे (पद 14)। इस्राएलियों के घमंडी होने का खतरा कब था? तब, जब उनके पास बहुत सारी संपत्ति जमा हो गई (पद 13)। दूसरे शब्दों में, खतरा तब पैदा हुआ जब वे कनान में दाखिल हुए—एक "अच्छी ज़मीन" (पद 7) जहाँ उन्हें "किसी चीज़ की कमी नहीं होगी" (पद 9)—और उन्होंने पेट भरकर खाना खाया (पद 10, 12), सुंदर घर बनाए और उनमें रहे (पद 12), अपने झुंडों को बढ़ते देखा, और अपने सोने-चाँदी को बढ़ते हुए देखा जब तक कि उनके पास बहुत सारी संपत्ति जमा नहीं हो गई। मूसा को इसी स्थिति का डर था। हमें भी यह डर होना चाहिए। हमें घमंडी होने की संभावना से डरना चाहिए। हमें डरना चाहिए कि, बिना जाने ही, हम लापरवाह और अहंकारी हो सकते हैं, और इस तरह परमेश्वर को भूल सकते हैं। खासकर हममें से जो लोग इस संपन्न देश—संयुक्त राज्य अमेरिका—में रहते हैं, जहाँ हमें किसी चीज़ की कमी नहीं लगती—हमें अपनी समृद्धि के कारण घमंडी होने से डरना चाहिए। हमें "दिल के मोटापे" से सावधान रहना चाहिए। हमें सतर्क रहना चाहिए कि कहीं हमारे दिलों में बिना हमारी जानकारी के "आध्यात्मिक मोटापा" न पनप जाए, जो हमें लालच और लोभ का गुलाम बना दे। हमें अपने दिलों के घमंडी होने की संभावना से डरना चाहिए। तो फिर, हमें क्या करना चाहिए? हमें स्वेच्छा से जंगल में जाना चाहिए। और उस जंगल में, हमें खुद को विनम्र बनाना चाहिए—खुद को और भी नीचे झुकाना चाहिए। दूसरे शब्दों में, समृद्ध शहरों में रहते हुए भौतिक सुख-सुविधाओं के पीछे भागने के बजाय, हमें खुशी-खुशी जंगल में कदम रखना चाहिए और, कमी और भूख के बीच, जंगल के आशीषों के लिए और भी अधिक तरसना चाहिए। जंगल के ये आशीष क्या हैं? उन्हें एक या दो बिंदुओं में संक्षेपित किया जा सकता है। पहला, जंगल का आशीष चरित्र का आशीष है। दूसरे शब्दों में, जंगल का जो आशीष परमेश्वर हमें देता है, वह विनम्रता है। परमेश्वर ही हमें विनम्र बनाने के लिए जंगल में ले जाता है (पद 2, 3, 16; होशे 2:14 देखें)। हमें विनम्रता के इस आशीष की ईमानदारी से इच्छा करनी चाहिए। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि दुनिया के लोगों के सामने ऊँचा उठने की तुलना में परमेश्वर के सामने खुद को विनम्र बनाना कहीं अधिक कीमती और महान आशीष है। इसलिए, हमें स्वेच्छा से जंगल में जाना चाहिए, विनम्रता से झुकना चाहिए और परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए। यह

मानते हुए कि प्रार्थना की जगह—जहाँ हम परमेश्वर को खोजने के लिए अपने एकांत कमरे में जाते हैं—उनकी नज़र में सबसे ऊँची जगह है, हमें विनम्रता से उनसे अपनी विनती करनी चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो परमेश्वर प्रार्थना करने वाले विनम्र व्यक्ति को ऊपर उठाते हैं और प्रभु की महिमा और महानता को प्रकट करने के लिए उसका इस्तेमाल करते हैं। दूसरी बात, जंगल का आशीर्वाद परमेश्वर के वचन का आशीर्वाद है। व्यवस्थाविवरण 8:3 को देखें: "उन्होंने तुम्हें विनम्र बनाया, तुम्हें भूखा रखा, और तुम्हें मन्ना खिलाया जिसके बारे में न तो तुम जानते थे और न ही तुम्हारे पूर्वज जानते थे, ताकि वे तुम्हें यह बता सकें कि मनुष्य केवल रोटी से जीवित नहीं रहता; बल्कि मनुष्य परमेश्वर के मुँह से निकलने वाले हर वचन से जीवित रहता है।" इस्राएलियों को चालीस साल तक जंगल के रास्ते पर चलाने के पीछे परमेश्वर का मकसद सिर्फ़ उन्हें विनम्र बनाना नहीं था, बल्कि उन्हें यह बताना था कि "मनुष्य केवल रोटी से जीवित नहीं रहता, बल्कि परमेश्वर के मुँह से निकलने वाले हर वचन से जीवित रहता है।" सचमुच, हमें अपनी मर्ज़ी से जंगल में जाना चाहिए और यह समझना चाहिए कि हम केवल भोजन से नहीं, बल्कि परमेश्वर के हर वचन से जीवित रहते हैं। इसलिए, हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए और उनकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए (पद 6)।

हमें भौतिक आशीर्षे पाने के मामले में सावधान रहना चाहिए, क्योंकि ऐसी आशीर्षे हमें अहंकारी बना सकती हैं और हमें परमेश्वर को भुला सकती हैं। इसलिए, जब हमारी भौतिक संपत्ति बढ़े तो हमें सावधान रहना चाहिए। जब हमारा व्यापार फले-फूले तो हमें सतर्क रहना चाहिए। जब मंडली में लोगों की संख्या बढ़े तो हमें चौकन्ना रहना चाहिए। हमें संतुष्ट और अमीर होने के प्रति सावधान रहना चाहिए। हमें अपने दिलों में आध्यात्मिक मोटापे से बचना चाहिए। हमें लालच और लोभ का गुलाम बनने से बचना चाहिए। हमें परमेश्वर के वचन को भूलने से बचना चाहिए। हमें अपनी मर्ज़ी से जंगल में जाना चाहिए। शहर के बीचों-बीच सांसारिक सुख-सुविधाओं का आनंद लेने के बजाय, हमें जंगल में जाना और परमेश्वर द्वारा दिए गए ईश्वरीय चरित्र और उनके वचन के आशीर्वाद का आनंद लेना पसंद करना चाहिए। हमें सुनसान जंगल को एकांत के बगीचे में बदलना चाहिए (नाउवेन)। जंगल में, हमें परमेश्वर की पवित्र उपस्थिति से विनम्र—पूरी तरह विनम्र—होना चाहिए। जंगल में ही हमारे चरित्र को ढला जाना चाहिए। और जंगल में, हमें परमेश्वर की आवाज़ सुनने में आनंद लेना चाहिए जब वे हमारे दिलों से अपना वचन कहते हैं (भजन 500, पद 1)। हमें परमेश्वर की उस आवाज़ को सुनना चाहिए और उसका पालन करना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम परमेश्वर द्वारा दिए गए चरित्र और उनके वचन के आशीर्षे का आनंद ले सकते हैं। हमें इस बात से बहुत डरना चाहिए कि

हम शहर के बीचों-बीच रहते हुए भी ईश्वरीय चरित्र और वचन के आशीषों को तो ठुकरा दें, लेकिन दुनिया से भौतिक आशीष पाने की इच्छा रखें।

दिन 8: पाखंड

[भजन संहिता 50 पर मनन]

एड्रियन गोस्टिक और डाना टेलफोर्ड की किताब *द इंटीग्रिटी एडवांटेज* में, लेखक ईमानदारी वाले व्यक्ति की दस खूबियां बताते हैं। इनमें से तीसरी खूबी है "गलती होने पर ईमानदारी से उसे मान लेना।" इस खूबी के बारे में लेखक एक गहरी बात कहते हैं: "गलती करना कोई बहुत बड़ा अपराध नहीं है; असल में बड़ा अपराध उसे छिपाने की कोशिश करना है।" फिर भी, हमारी फितरत अपनी गलतियों को छिपाने की होती है। दूसरे शब्दों में, अपने पापों को छिपाने की कोशिश करना हमारा पापी स्वभाव है। शायद इसीलिए "पाखंड" का कॉन्सेप्ट है। पाखंड क्या है? हिब्रू भाषा में इसका मतलब है "खुद को छिपाने वाला" या "दिखावा करने वाला।" न्यू टेस्टामेंट में, ग्रीक शब्द *हाइपोक्रिटिस*—जो असल में स्टेज पर मास्क पहनने वाले एक्टर के लिए इस्तेमाल होता था—बाद में पाखंडी या दिखावा करने वाले के लिए इस्तेमाल होने लगा। यह शब्द एक झूठे रवैये को बताता है—जो अक्सर धार्मिक लोगों में पाया जाता है—जिसमें बाहर से तो धार्मिक होने का दिखावा होता है, लेकिन असल में उसमें कोई ताकत नहीं होती। पाखंड का मतलब है बाहर से तो सच्चा ईसाई दिखना, लेकिन अंदर झूठ और पाखंड पालना। यीशु के समय में फरीसी ऐसे पाखंडियों के सबसे बड़े उदाहरण थे।

किसी वजह से, पाखंड के बारे में सोचते ही दाऊद का पाप याद आ जाता है, जिस पर मैंने आज सुबह की प्रार्थना सभा में मनन किया था। दाऊद ने अपने पाप को छिपाने के लिए ऊरिय्याह को उसकी गर्भवती पत्नी बतशेबा के पास भेजने की कोशिश की; जब वफादार ऊरिय्याह घर जाने को तैयार नहीं हुआ, तो दाऊद ने जनरल योआब के साथ मिलकर उस वफादार सैनिक को एक विदेशी की तलवार से मरवा दिया। फिर भी, जब दाऊद इन सभी गलत कामों को छिपाने की कोशिश कर रहा था, तो परमेश्वर ने उसके पाप को उजागर

करने के लिए नबी नातान को भेजा। परमेश्वर ने उससे कहा: "तुमने यह काम छिपकर किया, लेकिन मैं यह काम सबके सामने, पूरे इस्राएल के सामने करूंगा" (2 शमूएल 12:12)। भले ही हम छिपकर पाप करें, पवित्र परमेश्वर उन्हें सबके सामने उजागर कर देते हैं।

आज के वचन, भजन संहिता 50:5 में, परमेश्वर आज्ञा देते हैं: "मेरे पवित्र लोगों को मेरे पास इकट्ठा करो।" यहाँ, भजनकार आसाफ इन पवित्र लोगों को ऐसे लोगों के रूप में परिभाषित करते हैं जिन्होंने बलिदान के ज़रिए परमेश्वर के साथ वाचा बांधी है। इसे अपनी ज़िंदगी में लागू करते हुए, हम उन ईसाइयों की पहचान कर सकते हैं—जो क्रूस पर यीशु के बलिदान के ज़रिए परमेश्वर के साथ एक नए समझौते (नियम) में आए हैं—उन्हें "मेरे संत" या परमेश्वर के संत कहा जा सकता है। परमेश्वर क्यों यह हुक्म देते हैं कि उनके संतों को उनके सामने इकट्ठा किया जाए? संक्षेप में, ऐसा इसलिए था क्योंकि इज़राइल के लोग, जो उनके संत थे, पाखंडी थे (पार्क युन-सन)। आइए उन तीन बातों पर गौर करें जो परमेश्वर इन पाखंडी संतों से कहना चाहते हैं जब वह उन्हें इकट्ठा करते हैं; मुझे पूरी उम्मीद है कि यह हमारे लिए परमेश्वर की फटकार पर ध्यान देने और पश्चाताप करने का एक मौका बनेगा।

पहला, परमेश्वर घोषणा करते हैं कि वह हमारे पाखंड का न्याय करेंगे।

आज के हिस्से में भजन संहिता 50:6 को देखें: "आकाश उसकी धार्मिकता की घोषणा करते हैं, क्योंकि परमेश्वर स्वयं न्यायकर्ता हैं" (सेलाह)। भजनकार आसाफ घोषणा करते हैं कि परमेश्वर—न्यायकर्ता के रूप में काम करते हुए—सार्वजनिक रूप से और हर जगह अपनी धार्मिकता का ऐलान करते हैं जब वह इज़राइल के पाखंडी लोगों का न्याय करते हैं। आसाफ उनके पाप की गंभीरता को ज़ोरदार ढंग से इस प्रकार बताते हैं: (1) पहला, वह पूरी दुनिया को इन पाखंडी इज़राइलियों के खिलाफ न्याय के दृश्य का गवाह बनने के लिए बुलाते हैं (पद 1)। यह न्याय की एक डरावनी घोषणा है: भले ही लोग छिपकर पाप करते हों, परमेश्वर उन्हें सबके सामने उजागर करना चाहते हैं, और हर किसी को उनके गलत कामों के खुलासे का गवाह बनने के लिए बुलाते हैं। यह संदेश हम पर भी लागू होता है। जैसा कि इफिसियों 5:11 में कहा गया है, अगर हम—ज्योति की संतान के रूप में—अंधेरे के कामों को उजागर करने में नाकाम रहते हैं और इसके बजाय उनमें

शामिल होते हैं, तो पवित्र परमेश्वर हमारे पापों को सबके सामने उजागर कर देंगे। (2) दूसरा, इन पाखंडी इज़राइलियों का न्याय करते समय, परमेश्वर मुख्य रूप से अपने प्रकट किए गए वचन (पद 2) के ज़रिए काम करते हैं—एक ऐसा वचन जो आग या तेज़ तूफ़ान जितना भयानक है (पद 3)। इसका मतलब है कि न्याय परमेश्वर द्वारा स्थापित सच्चे कलीसिया (मंडली) के सत्य (ज्योति) के अनुसार किया जाता है। यीशु ने स्वयं घोषणा की थी कि उनका वचन ही अंततः न्याय का पैमाना होगा (यूहन्ना 12:48)। भजन संहिता 119:130 कहती है, "तेरे वचनों का खुलना ज्योति देता है; यह साधारण लोगों को समझ देता है।" जब हम छिपकर पाप करते रहते हैं, तो हम अनिवार्य रूप से मूर्ख बन जाते हैं; हमारे दिल कठोर हो जाते हैं, और हम पाप को पाप के रूप में पहचानना बंद कर देते हैं। फिर भी, ऐसे मूर्ख लोगों के लिए, परमेश्वर अपने वचन को हमारे दिलों में चमकाते हैं, जिससे हम अपने पापों को समझ सकें और उन्हें मान सकें। (3) तीसरी बात, परमेश्वर कहते हैं कि वे सबसे पहले पाखंडी विश्वासियों का न्याय करेंगे (पद 4)। क्योंकि परमेश्वर की कलीसिया को खास आशीर्ष मिली हैं, इसलिए उस पर एक बड़ी ज़िम्मेदारी भी है। इसलिए, न्याय परमेश्वर के घर—यानी कलीसिया—से शुरू होता है (1 पतरस 4:17) (पार्क युन-सन)।

दूसरी बात, परमेश्वर हमारे पाखंडी दिखावे के खिलाफ चेतावनी देते हैं।

आज के वचन, भजन संहिता 50:7 को देखें: "हे मेरे लोगों, सुनो, मैं बोलूंगा; हे इस्राएल, मैं तुम्हारे खिलाफ गवाही दूंगा; मैं परमेश्वर हूँ, तुम्हारा परमेश्वर!" यहां, परमेश्वर कहते हैं कि वे पाखंडी इस्राएल के खिलाफ गवाही देंगे। यह संदेश इस्राएल के लोगों के पाखंड—खासकर दिखावे—के खिलाफ एक चेतावनी है। वह दिखावा उस समय के यहूदियों की इस सोच पर आधारित था कि वे सिर्फ मंदिर जाकर और बलिदान चढ़ाकर परमेश्वर को खुश कर सकते हैं (पार्क युन-सन)। इस्राएल के वे लोग जो आत्मा और सच्चाई से परमेश्वर की आराधना करने के बजाय बाहरी रस्में निभाने में लगे हुए थे, उनके लिए भजनकार आसाफ आराधना के बारे में तीन सबक देते हैं: (1) पहली बात, वे उन्हें धन्यवाद के साथ बलिदान (आराधना) चढ़ाने का निर्देश देते हैं [(पद 14) "परमेश्वर को धन्यवाद का बलिदान चढ़ाओ..."]। हमें धन्यवाद के साथ परमेश्वर की आराधना क्यों करनी चाहिए? कारण यह है कि ऐसा करने से परमेश्वर की महिमा होती है (पद 23)। इसके अलावा, जो लोग धन्यवाद के साथ आराधना करते हैं, वे केवल मुंह से कहने के बजाय सचमुच आभारी जीवन जीते हैं। वे सिर्फ धन्यवाद के साथ आराधना नहीं करते; वे आराधना वाला जीवन जीते हैं। (2) दूसरी बात, वे उन्हें परमेश्वर से

की गई मन्त्रों को पूरा करने के लिए कहते हैं [(पद 14b) "...और परमप्रधान के प्रति अपनी मन्त्रों पूरी करो"]। एक सच्चे विश्वासी की खासियत यह होती है कि वह हमेशा अपने वादे पूरे करता है। लेकिन, आजकल हमारे आस-पास कितने सच्चे विश्वासी ऐसे हैं जो अपने वादे इतनी अच्छी तरह निभाते हैं? हम ऐसी दुनिया में रहते हैं जहां भरोसेमंद लोग मिलना सचमुच मुश्किल है। इससे यह सवाल उठता है: अगर कोई व्यक्ति दूसरों से किए गए वादे पूरे नहीं कर पाता, तो वह परमेश्वर से किया गया वादा कैसे पूरा कर सकता है? परमेश्वर के सामने किए गए वादे को पूरा करना एक ऐसा काम है जो परमेश्वर की कृपा में रुकावट आने से रोकता है (पार्क युन-सन)। इसलिए, जो लोग सच में परमेश्वर की आराधना करते हैं, उन्हें उनसे किए गए वादों को ईमानदारी से पूरा करना चाहिए, ताकि उनकी कृपा बनी रहे। (3) तीसरी बात, हमें मुसीबत के समय परमेश्वर को पुकारने के लिए कहा गया है [(पद 15): "मुसीबत के दिन मुझे पुकार; मैं तुझे छुड़ाऊंगा, और तू मेरी महिमा करेगा"]। परमेश्वर केवल रस्म-रिवाज़ वाली बलि चढ़ाने के बजाय प्रार्थना—जो विश्वास का इज़हार है—को ज़्यादा पसंद करते हैं (रिडरबोस)।

आखिर में, परमेश्वर हमारे पाखंड के पाप की ओर इशारा करते हैं।

पाखंडी इस्राएलियों का पाप क्या था? संक्षेप में, वे सिर्फ़ जुबान से परमेश्वर की भक्ति का दावा करते थे, लेकिन परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन नहीं करते थे (पार्क युन-सन)। आज के वचन, भजन संहिता 50:16 को देखें: "परन्तु दुष्टों से परमेश्वर कहता है: 'तुम्हें मेरे नियमों का प्रचार करने या मेरे वाचा को अपने मुँह में लेने का क्या अधिकार है?'" यह वचन उन पाखंडी इस्राएलियों को फटकारता है जो केवल शब्दों से परमेश्वर के धर्म को मानते हैं (पार्क युन-सन)। वचन 17 को देखें: "तुम शिक्षा से नफ़रत करते हो और मेरे वचनों को अपने पीछे फेंक देते हो।" इसका क्या अर्थ है? पाखंडी इस्राएली परमेश्वर की शिक्षा से नफ़रत करते थे और उसके वचनों को अपनी पीठ के पीछे फेंक देते थे। क्या यह हमारा अपना पाखंड और पाप नहीं है? क्या हम प्रभु के दिन परमेश्वर का वचन नहीं सुनते, और फिर पवित्र स्थान से बाहर निकलकर दुनिया में जाकर फिर से परमेश्वर के विरुद्ध पाप करने के लिए उस वचन को पीछे नहीं छोड़ देते? हम परमेश्वर के वचन को नज़रअंदाज़ करके और उसका अनादर करके क्यों जीते हैं? कैल्विन इसका कारण इस प्रकार बताते हैं: "पाखंडी धर्म की पहचान परमेश्वर के वचन के प्रति आदर की कमी है।" परमेश्वर के प्रति आदर की कमी ही हमें परमेश्वर के वचन से नफ़रत करने और उसे पीछे फेंकने का पाप करने की ओर ले जाती है।

आज के वचन में, इस्राएल के वे लोग—जिन्होंने पाखंडपूर्ण व्यवहार किया और परमेश्वर के प्रति आदर नहीं दिखाया—परमेश्वर की किन आज्ञाओं का पालन करने में विफल रहे? पहला, उन्होंने सातवीं और आठवीं आज्ञाओं का उल्लंघन किया। वचन 18 को देखें: "जब तुमने किसी चोर को देखा, तो तुम उसके साथ मिल गए; तुमने व्यभिचारियों का साथ दिया।" "जब तुमने किसी चोर को देखा, तो तुम उसके साथ मिल गए" वाक्यांश आठवीं आज्ञा, "तू चोरी न करना," को तोड़ने की ओर इशारा करता है, जबकि "तुमने व्यभिचारियों का साथ दिया" सातवीं आज्ञा, "तू व्यभिचार न करना," को तोड़ने की ओर इशारा करता है। दूसरा, उन्होंने नौवीं आज्ञा का उल्लंघन किया। वचन 19 को देखें: "तुम अपने मुँह से बुराई करते हो और अपनी जीभ से छल रचते हो।" उन्होंने नौवीं आज्ञा तोड़ी: "तू अपने पड़ोसी के विरुद्ध झूठी गवाही न देना।" तीसरा, उन्होंने अपने भाइयों से प्रेम न करने का पाप किया। आयत 20 को देखिए: "तुम बैठकर अपने भाई के विरुद्ध बातें करते हो; तुम अपनी ही माँ के बेटे की बुराई करते हो।" यह छठी आज्ञा का उल्लंघन है: "तुम हत्या न करना।" 1 यूहन्ना 3:15 कहता है: "जो कोई अपने भाई से घृणा करता है, वह हत्यारा है..." परमेश्वर ने इस्राएल के पाखंडी लोगों से पश्चाताप करने का आग्रह किया और उन्हें चेतावनी दी, फिर भी उन्होंने गलती से मान लिया कि परमेश्वर भी पाप के प्रति उतने ही उदासीन हैं जितने वे स्वयं थे (आयत 21)। दूसरे शब्दों में, उन्हें लगा कि परमेश्वर उनके पापों का न्याय नहीं करेंगे। नतीजतन, वे अपने पापपूर्ण तरीकों पर चलते रहे। चूँकि परमेश्वर चुप रहे जबकि वे पाप करते रहे, इसलिए उन्होंने "सोचा कि परमेश्वर बिल्कुल उन्हीं के जैसे हैं"—पाप के प्रति उदासीन। फिर भी, परमेश्वर ने उन्हें फटकारा और घोषणा की कि वह उनके पापों का एक-एक करके न्याय करेंगे और उन्हें दंड देंगे। फिर, आज के अंश की आयत 22 में, वह यह चेतावनी देते हैं: "इस बात पर विचार करो, तुम जो परमेश्वर को भूल जाते हो, नहीं तो मैं तुम्हें टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा, और तुम्हें बचाने वाला कोई न होगा।" इस्राएल के लोग, जिन्होंने पाप किया था और परमेश्वर के वचन का अनादर किया था, न केवल उनके वचन को बल्कि स्वयं परमेश्वर को भी भूल गए थे। इसीलिए उन्होंने उनसे "इस बात पर विचार करने" का आग्रह किया—इस तथ्य पर मनन करने के लिए कि वह उनके पापों को उजागर करते हैं, उनके खोखले दिखावे के विरुद्ध चेतावनी देते हैं, और निश्चित रूप से न्याय करेंगे। वह घोषणा करते हैं कि यदि वे ऐसा करने में विफल रहते हैं, तो उन्हें उनके क्रोध और अनुशासन का सामना करना पड़ेगा, और उन्हें बचाने वाला कोई नहीं होगा।

क्या भजन संहिता 50 का संदेश—जो मूल रूप से पाखंडी इस्राएलियों को संबोधित था—आज हम पर लागू नहीं होता? परमेश्वर ने हमें अपने घर में इकट्ठा किया है और हमसे वही शब्द कह रहे हैं। वह हमारे पाखंड के विरुद्ध चेतावनी देते हैं और विस्तार से हमारे पापों को उजागर करते हैं। वह घोषणा करते हैं कि वह हमारे पाखंड का न्याय करेंगे... हमें परमेश्वर के इस वचन को सुनना चाहिए और पाखंड के पाप के लिए पश्चाताप करना चाहिए। हमें कृतज्ञ हृदय से परमेश्वर की आराधना करनी चाहिए। हमें अपनी मन्त्रों को पूरा करना चाहिए और परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करते हुए जीवन जीना चाहिए। हमें सच्ची आराधना का जीवन जीना चाहिए—ऐसा जीवन जो स्वयं आराधना का कार्य हो।

दिन 9: व्यर्थ के सुख

[उपदेशक 2:1-11 पर मनन]

हेडोनिज़्म (सुखवाद) क्या है? विकिपीडिया और डिक्शनरी के अनुसार, इसे इस तरह परिभाषित किया गया है: "यह एक नैतिक सिद्धांत है जो सुख को जीवन का उद्देश्य और सबसे अच्छी चीज़ मानता है, और सुख की खोज और दुख से बचने को अपना नैतिक सिद्धांत बनाता है।" असल में, हेडोनिज़्म इस विश्वास पर आधारित है कि सुख एक ज़रूरी अच्छी चीज़ है और दुख एक बुराई है। यह अहंकार का एक रूप है जो दावा करता है कि खुशी देने वाली हर चीज़ अच्छी है (इंटरनेट)। दावा यह है कि हेडोनिज़्म द्वारा अपनाए गए जीवन का लक्ष्य खुशी है, और खुशी सुख की खोज से मिलती है। व्यक्तिगत रूप से, जब मैं "हेडोनिज़्म" के बारे में सोचता हूँ, तो मुझे प्राचीन ग्रीस का एपिक्यूरियन स्कूल याद आता है। एपिक्यूरियन स्कूल लगभग 300 ईसा पूर्व में हेलेनिस्टिक युग (दूसरा स्टॉइक स्कूल था) के रुझानों का प्रतिनिधित्व करने वाले दर्शनों में से एक के रूप में उभरा, और इसके संस्थापक एपिकुरस थे। यह स्कूल मानता था कि खुशी दुख-मुक्त सुख की स्थिति से प्राप्त की जा सकती है (इंटरनेट)। इस स्कूल ने क्षणिक, इंद्रिय-जनित और शारीरिक सुख के बजाय स्थायी मानसिक सुख पर ज़ोर दिया। कारण यह है कि क्षणिक, इंद्रिय-जनित और शारीरिक सुखों में इच्छा शामिल होती है, और चूँकि उस इच्छा से दुख पैदा होता है, इसलिए एपिक्यूरियन स्कूल ने शारीरिक सुख पर ज़ोर नहीं दिया। चूँकि शारीरिक इच्छाएँ अनंत होती हैं और उन अनंत इच्छाओं को पूरा करने का कोई तरीका नहीं है, इसलिए दुख होता है; इसलिए, इस स्कूल ने, जो बिना दुख के सुख की खोज करता था, शारीरिक सुख के बजाय मानसिक सुख पर ज़ोर दिया। बेशक, मानसिक सुख इच्छा से रहित नहीं होते (जैसे ज्ञान की इच्छा); हालाँकि, विचार यह है कि मनुष्य ऐसी इच्छाओं को कम करके—और इस तरह दुख को कम करके—खुशी प्राप्त करते हैं। एपिक्यूरियन स्कूल इच्छा की इस कम स्थिति को "अटैरेक्सिया" कहता है—मानसिक शांति की स्थिति जो परेशानी से मुक्त हो। यह स्कूल मन की ऐसी शांति को सच्ची खुशी मानता था, जिसे तर्क

के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। इस समूह के अलावा, प्राचीन ग्रीक हेडोनिज़्म का प्रतिनिधित्व करने वाला एक और स्कूल था: साइरेनिक स्कूल। साइरेनिक स्कूल के भीतर हेडोनिज़्म को सबसे पहले इसके संस्थापक, सुकरात के मित्र एरिस्टिपस ने स्पष्ट किया था। सुकरात से प्रभावित होकर, एरिस्टिपस ने खुशी के उन सिद्धांतों पर ज़ोर दिया जिनका पालन एक गुणी व्यक्ति को करना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि गुण आनंद पाने की क्षमता है, और ऐसा आनंद सुख की प्राप्ति से मिलता है। सुख ही एकमात्र भलाई और सर्वोच्च भलाई है। साइरेनिक स्कूल के विचारकों ने तुरंत मिलने वाले शारीरिक और इंद्रिय सुखों पर ज़ोर दिया, क्योंकि उनका तर्क था कि भविष्य हमारे नियंत्रण से बाहर है। एरिस्टिपस के अनुसार, एक बुद्धिमान व्यक्ति—या दार्शनिक—में वर्तमान क्षण का आनंद लेने की क्षमता होती है; इसलिए, वे सुख के गुलाम बनने के बजाय उसके मालिक बन जाते हैं। नतीजतन, सुखवाद (हेडोनिज़्म) का आदर्श वह स्थिति है जिसमें व्यक्ति शारीरिक इच्छाओं को पूरा करता है और साथ ही बुद्धिमानी से सुख पर नियंत्रण भी रखता है।

आज के पाठ, उपदेशक 2:1 में, बुद्धिमान राजा सुलैमान आनंद की खोज और सुख-भोग के ज़रिए खुद को परखने का फैसला करते हैं। दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान ने सुख की खोज का प्रयोग किया (पद 1-2)। आज के अंश में पद 1 के पहले हिस्से को देखें: "मैंने अपने मन में कहा, 'आओ, मैं तुम्हें सुख से परखूँगा; आनंद लो।'" "मैं तुम्हें सुख से परखूँगा" वाक्यांश का अर्थ है कि राजा सुलैमान खुशी या इंद्रिय सुख का प्रयोग करना चाहते थे। वह यह पता लगाना चाहते थे कि क्या अच्छा है—या दूसरे शब्दों में, क्या उन्हें सुख दे सकता है। यह अंश उन तीन मुख्य चीज़ों के बारे में बताता है जिन्हें उन्होंने सुख की इस खोज में आजमाया। जब हम इन तीन चीज़ों पर विचार करते हैं, तो मैं प्रार्थना करता हूँ कि परमेश्वर हम सभी को अनुग्रह दे, ताकि हम बुद्धिमानी से जी सकें।

पहली चीज़ जिसे राजा सुलैमान ने सुख की खोज में आजमाया, वह थी शराब।

उपदेशक 2:3 को देखें: "मैंने अपने मन में सोचा कि शराब से अपने शरीर को कैसे खुश करूँ—मेरा मन अभी भी मुझे बुद्धिमानी से राह दिखा रहा था—और मूर्खता को कैसे अपनाऊँ, ताकि मैं देख सकूँ कि इंसानों के लिए धरती पर उनके जीवन के कुछ दिनों में क्या करना अच्छा है।" व्यक्तिगत आनंद पाने की कोशिश

में सुलैमान ने सबसे पहले शराब को आजमाया। उन्होंने इसके ज़रिए अपने शरीर को खुश करने की कोशिश की। फिर भी, शराब का आनंद लेते हुए भी, उन्होंने अपने दिल की बुद्धिमानी का नियंत्रण बनाए रखा। प्राचीन यूनानी साइरेनैक स्कूल के दर्शन की तरह ही, उन्होंने शराब का आनंद लिया, लेकिन उसके गुलाम नहीं बने; इसके बजाय, वे मालिक बने रहे और बुद्धिमानी से उस अनुभव को नियंत्रित किया। दूसरे शब्दों में, साइरेनैक विचारधारा की तरह ही, राजा सुलैमान ने अपनी समझदारी से उस खुशी पर काबू रखते हुए शराब से खुशी पाने की कोशिश की। उनका क्या नतीजा निकला? आज के हिस्से की तीसरी आयत "मूर्खता को अपनाने" की बात करती है। आसान शब्दों में कहें तो, सुलैमान इस नतीजे पर पहुँचे कि नशे में खुशी ढूँढना मूर्खता है।

तो फिर, शराब से कैसी खुशी मिलती है? लोग नशे की हालत तक क्यों पीते हैं? मुझे एक ऑनलाइन लेख मिला जिसमें बताया गया था कि लोग सोमवार से रविवार तक क्यों पीते हैं: सोमवार को तो बस पीना ही है; मंगलवार को जमकर पीना है; बुधवार को बार-बार पीना है; गुरुवार को तब तक पीना है जब तक धुंधला न दिखने लगे; शुक्रवार को बार-बार पीना है; शनिवार को उल्टी होने तक पीना है; और रविवार को तब तक पीना है जब तक उठने की हिम्मत न बचे। लेख में यह भी कहा गया है: "कहा जाता है कि एक गिलास सेहत के लिए अच्छा होता है; हल्का नशा और पीने की इच्छा जगाता है; नशे से बेपरवाह व्यवहार होता है; और बहुत ज़्यादा नशे से पागलपन हो सकता है।" लोग अच्छा महसूस करने के लिए भी पीते हैं। शराब हमें अच्छा महसूस क्यों कराती है? कहा जाता है कि थोड़ी मात्रा में शराब पीने से शुरू में सेंट्रल और पेरिफेरल नर्वस सिस्टम उत्तेजित होते हैं, गैस्ट्रिक एसिड का स्राव बढ़ता है, और डोपामाइन न्यूरोट्रांसमीटर निकलता है, जिससे मूड बेहतर होता है। हालाँकि, बहुत ज़्यादा, लंबे समय तक या लगातार शराब पीने से दुर्भाग्य से दिमाग की कोशिकाएँ तेज़ी से नष्ट होती हैं और दिमाग का कामकाज धीमा पड़ जाता है। सामान्य हालात में भी, हर दिन 100,000 दिमाग की कोशिकाएँ अपने आप मर जाती हैं, लेकिन ज़्यादा शराब पीने से और भी ज़्यादा कोशिकाएँ मर जाती हैं। पढ़ाई-लिखाई का प्रदर्शन, याददाश्त और सोचने-समझने की क्षमता कम हो जाती है, और कहा जाता है कि यह गिरावट सीधे तौर पर शरीर में शराब की मात्रा से जुड़ी होती है। बहुत ज़्यादा शराब पीने से नशे की हालत में कहीं या की गई बातें याद नहीं रहतीं—इस स्थिति को आम तौर पर "ब्लैकआउट" कहा जाता है। लोग शराब पीने के कई कारण बताते हैं: "जब कुछ अच्छा होता है तो मैं पीता हूँ। जब कुछ बुरा होता है तो मैं पीता हूँ। जश्न मनाने के लिए पीता हूँ। दूसरों से घुलने-मिलने के लिए पीता हूँ। कोई बात कबूल करने के लिए पीता हूँ। किसी की याद भुलाने के लिए पीता हूँ। परेशान होने पर पीता हूँ। किसी की याद आने पर पीता हूँ। उदास होने पर या बारिश होने पर पीता हूँ। थका हुआ होने पर पीता हूँ।

दोस्ती बढ़ाने के लिए पीता हूँ। उत्सुकता की वजह से पीता हूँ। अकेलापन महसूस होने पर पीता हूँ।" अपने अनुभव की बात करूँ तो, किशोरावस्था के दौरान शराब पीना शुरू करने में उत्सुकता की सबसे बड़ी भूमिका थी। भीड़-चाल का पालन करते हुए, मैं भी अपने दोस्तों के साथ शराब पीने लगा; यहाँ तक कि मैं इतना पीता था कि नशे में धुत हो जाता था और उल्टी भी कर देता था। हालाँकि, कॉलेज के पहले साल में मुझे आध्यात्मिक प्रेरणा मिली और यूनिवर्सिटी मिनिस्ट्री रिट्रीट के दौरान मैंने पश्चाताप किया, जिसके बाद शराब में मेरी कोई दिलचस्पी नहीं रही। उसके बाद भी, मैं अक्सर ऐसी पार्टियों में जाता था जहाँ शराब परोसी जाती थी। ऐसे मौकों पर, मैं सोचता था कि क्या शराब पीने का कोई असली फ़ायदा है। असल में, जिन दोस्तों के साथ मैं घूमता-फिरता था, उनमें से दो की गोली मारकर हत्या कर दी गई—एक ऐसी त्रासदी जिसका संबंध शराब से था। मुझे आज भी अपने दोस्तों के अंतिम संस्कार की कई बातें याद हैं। शराब का कोई फ़ायदा नहीं है; यह पूरी तरह बेकार है।

इफिसियों 5:18 में, प्रेरित पौलुस कहते हैं: "दाखरस के नशे में मत पड़ो, क्योंकि इससे व्यभिचार फैलता है। इसके बजाय, पवित्र आत्मा से भरे रहो।" उत्पत्ति 9 में नूह की कहानी है—जिसे बाढ़ के बाद परमेश्वर का आशीर्वाद मिला था (वचन 1)—उसने खेती शुरू की और अंगूर का बाग लगाया (वचन 20); एक दिन, उसने दाखरस पिया, नशे में हो गया, और अपने तंबू के अंदर नंगा लेट गया (वचन 21)। उत्पत्ति 6:9 के अनुसार, नूह एक धर्मी व्यक्ति था, अपने समय के लोगों में बेदाग था, और परमेश्वर के साथ ईमानदारी से चलता था; फिर भी, यहाँ वह दाखरस के नशे में धुत और नंगा पड़ा था। नूह की इस तस्वीर पर विचार करने से मत्ती 24:37-39 के शब्द याद आते हैं: "जैसा नूह के दिनों में हुआ था, वैसा ही मनुष्य के पुत्र के आने के समय भी होगा। क्योंकि बाढ़ से पहले के दिनों में, लोग खाते-पीते थे, शादी-ब्याह करते थे, उस दिन तक जब नूह जहाज में गया; और उन्हें कुछ पता नहीं चला कि क्या होने वाला है, जब तक कि बाढ़ नहीं आई और उन सभी को बहा ले गई। मनुष्य के पुत्र के आने के समय भी ऐसा ही होगा।" ऐसा लगता है कि हमारा वर्तमान युग, नूह के दिनों की तरह ही है, जहाँ लोग विनाश के आसन्न खतरे को महसूस किए बिना खाते-पीते हैं। लोग विभिन्न प्रकार के सुखों—धन और महिमा, यौन संतुष्टि, और हर तरह की लत—के नशे में डूबे हुए दिखाई देते हैं। शराब की लत निश्चित रूप से उनमें से एक गंभीर समस्या है। राजा सुलैमान नशे की प्रकृति को एक ही वाक्यांश में संक्षेप में बताते हैं: "नशा करना मूर्खता को गले लगाना है।"

दूसरी बात, सुख का अनुभव करने के लिए राजा सुलैमान ने जो प्रयोग किए, उनमें से एक था बड़े "प्रोजेक्ट" शुरू करना। आज के पाठ में उपदेशक 2:4 के पहले भाग को देखें: "मैंने बड़े-बड़े काम शुरू किए..." राजा सुलैमान का दूसरा प्रयास—यह पता लगाने के लिए एक प्रयोग के रूप में कि मानव जीवन की छोटी अवधि के दौरान सच्चा सुख क्या है (वचन 3b)—बड़े प्रोजेक्ट्स का प्रबंधन करना था (वचन 4)। सुलैमान ने जो "बड़े प्रोजेक्ट" किए, वे परमेश्वर के लिए नहीं बल्कि अपने लिए थे: घर बनाना और अंगूर के बाग लगाना (वचन 4b); तरह-तरह के फलों के पेड़ों वाले बगीचे और बाग लगाना (v. 5); और पेड़ों के झुंडों की सिंचाई के लिए तालाब खोदना (v. 6)। इन संपत्तियों—घरों, अंगूर के बागों, बगीचों और फलों के बागों—की देखभाल के लिए उसने पुरुष और महिला नौकर रखे, जिनमें उसके घर में पैदा हुए नौकर भी शामिल थे (v. 7)। उसने इतने बड़े प्रोजेक्ट क्यों शुरू किए? इसका कारण क्या था? हालाँकि वह निश्चित रूप से अनुभव के ज़रिए सुख पाना चाहता था, लेकिन उस सुख को पाने का मुख्य ज़रिया अंततः धन ही था। आयत 7 के बाद वाले हिस्से से लेकर आयत 8 के शुरुआती हिस्से तक देखिए: "...मुझसे पहले यरूशलेम में किसी के पास भी मुझसे ज़्यादा पशुओं के झुंड नहीं थे; मैंने चाँदी और सोना, राजाओं और प्रांतों का खज़ाना इकट्ठा किया..." राजा सुलैमान ने ऐसी सांसारिक शान-शौकत अपने लिए चाही थी। उसका नैतिक पतन शांति के समय में हुआ (1 इतिहास 22:9) (पार्क युन-सन)।

हम भी, जब समय शांतिपूर्ण होता है, तो विलासितापूर्ण जीवन जीने के बड़े जोखिम का सामना करते हैं— ठीक वैसे ही जैसे राजा सुलैमान ने किया था। और ऐसा विलासितापूर्ण जीवन अंततः हमारे चरित्र को बिगाड़ देता है (पार्क युन-सन)। विलासिता क्या है? इसका मतलब है "ज़रूरत से ज़्यादा पैसा या संसाधन खर्च करना, या अपनी क्षमता से बढ़कर जीवनशैली जीना" (इंटरनेट)। मुझे ऑनलाइन समाचार साइट OhmyNews पर एक लेख मिला जिसका शीर्षक था "लोग विलासिता की चीज़ों के प्रति इतने जुनूनी क्यों हैं?" इसमें, *Luxury Korea: A Nation of Extravagance* के लेखक किम रैंडो विलासिता की चीज़ों की खपत को चार मुख्य प्रकारों में बाँटते हैं: "दिखावे वाली विलासिता," "ईर्ष्या से प्रेरित विलासिता," "कल्पना से प्रेरित विलासिता," और "अनुकरण-आधारित विलासिता।" (1) दिखावे वाली विलासिता का मतलब है अमीर लोगों द्वारा की गई खरीदारी जो अपनी वर्ग-स्थिति के प्रति जागरूक होते हैं; उन्हें आम होने से डर लगता है। पूँजीवादी समाज

में धन होने के कारण, वे खुद को खास मानते हैं और उस पूँजी पर आधारित वर्ग-चेतना रखते हैं। उनके लिए, विलासिता दिखावा करने का एक ज़रिया है। (2) दूसरा प्रकार, ईर्ष्या से प्रेरित विलासिता, में "नकली अमीर" लोग शामिल होते हैं जो सचमुच अमीर लोगों की नकल करने की कोशिश करते हैं। वे अमीरों से ईर्ष्या करते हैं, फिर भी नीची नज़र से देखे जाने से बचने के लिए बहुत संघर्ष करते हैं, और आर्थिक साधन न होने पर भी विलासितापूर्ण चीज़ों का उपभोग करना नहीं छोड़ते। (3) तीसरे तरह का लगज़री शौक 'फ़ैंटेसी-ड्रिवन लगज़री' (कल्पना पर आधारित विलासिता) है। इसमें ऐसे लोग शामिल होते हैं जिनमें खुद को बहुत ज़्यादा अहमियत देने की प्रवृत्ति (narcissistic tendencies) होती है। उन्हें खराब या साधारण दिखने से डर लगता है और वे खुद को बदलने या बेहतर दिखाने का सपना देखते हैं। वे महंगी और मशहूर चीज़ें खरीदने के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि ऐसा करने से उनका स्टेटस (रुतबा) बढ़ेगा। हालांकि, यह समझना मुश्किल नहीं है कि हर किसी में थोड़ा-बहुत खुद से प्यार करने का भाव होता है, लेकिन इस तरह का लगज़री शौक चिंताजनक है क्योंकि इसके खतरनाक नतीजे हो सकते हैं, जैसे कि इसकी लत लग जाना। (4) आखिर में, 'कॉन्फ़ॉर्मिस्ट लगज़री' (दूसरों की देखा-देखी विलासिता) आती है। यह तब होता है जब लोग अपने दोस्तों या साथियों के स्टैंडर्ड से मेल खाने और समाज से अलग-थलग न पड़ने के लिए चीज़ें खरीदते हैं। इसका एक आम उदाहरण यह सोच है कि महंगे ब्रांड के कपड़े पहनने चाहिए क्योंकि आपके दोस्त भी ऐसा ही करते हैं; यह चलन खासकर टीनएजर्स में ज़्यादा देखा जाता है। वे लगज़री सामान खरीदने—भले ही इसके लिए उन्हें अपनी क्षमता से ज़्यादा खर्च करना पड़े—को इस तर्क से सही ठहराते हैं कि "बाकी सब भी तो यही खरीद रहे हैं," और इस तरह वे किसी भी तरह के पछतावे या अपराध-बोध से बच जाते हैं; समस्या यह है कि यह व्यवहार बड़े होने पर भी बना रह सकता है। हमें अपनी क्षमता से ज़्यादा खर्च करके नहीं जीना चाहिए। इससे बचने के लिए, अपनी सीमाओं को समझना बहुत ज़रूरी है। मैं कोरियाई-अमेरिकी प्रवासी समुदाय में प्रचलित एक व्यंग्यात्मक किस्सा साझा करना चाहूंगा: कहा जाता है कि जब प्रवासी अमेरिका आते हैं, तो लॉस एंजिल्स में बसने वाले लोग सबसे पहले लगज़री कार खरीदते हैं, भले ही वे किराए के कमरे में रह रहे हों; न्यूयॉर्क वाले पहले कोई बिज़नेस शुरू करते हैं; और शिकागो वाले पहले घर खरीदते हैं। यह कहानी न्यूयॉर्क और शिकागो के प्रवासियों की व्यावहारिक सोच—जो असलियत और भविष्य के लिए मज़बूत आधार बनाने को प्राथमिकता देते हैं—की तुलना लॉस एंजिल्स के प्रवासियों की दिखावे वाली सोच से करती है, जिन्हें दिखावे और अपनी इज़्ज़त बचाने को प्राथमिकता देने वाले के तौर पर दिखाया जाता

है (हालांकि असल में ऐसा नहीं है)। क्या आपने कभी *सुबुन्जिजोक* (守分知足) शब्द सुना है? इसके तीन हिस्से हैं: *सुबुन* (अपनी सीमाओं में रहना), *जिबुन्* (अपनी सीमाओं को जानना), और *अनबुन* (उन सीमाओं में संतोष पाना)। हर किसी की अपनी सीमाएं होती हैं। हमें अपनी सीमाओं को समझना चाहिए, उसी के अनुसार काम करना चाहिए और अपनी क्षमता से ज़्यादा खर्च करके जीने से बचना चाहिए। अपनी क्षमता से ज़्यादा खर्च करके जीने को *ग्वाबुन* (過分) कहा जाता है। किसी भी चीज़ में हद से ज़्यादा आगे बढ़ना नुकसानदेह होता है। चीनी अक्षर *ग्वा* (過) के दो अर्थ हैं: "अत्यधिक" और "गलती"। अति करने से गलतियाँ होना तय है। *ग्वा* (Gwa) दुर्भाग्य और बीमारी, दोनों की मुख्य वजह है। ज़रूरत से ज़्यादा खाना-पीना, बहुत ज़्यादा काम करना, सेक्स में अति करना और बेहिसाब खर्च करना—ये सब हमारी सेहत को नुकसान पहुँचाते हैं और हमारी खुशी को खत्म करते हैं। असल में, अपनी हद में रहने का मतलब है हर चीज़ में अति से बचना। हमें अपनी ज़िंदगी में संतोष करना और जहाँ हम हैं, वहीं खुश रहना सीखना चाहिए; हमें चीज़ों को अपना बनाने की चाहत से बचना चाहिए। यह बात खासकर उन लोगों पर लागू होती है जो राजा सुलैमान की तरह बड़े-बड़े व्यापारिक काम शुरू करते हैं। आखिर में, चीज़ों को अपना बनाने की चाहत हमें कभी पूरी तरह संतुष्ट नहीं कर सकती। राजा सुलैमान के बारे में सोचिए: हालाँकि उन्होंने यरूशलेम पर राज करने वाले अपने पहले के किसी भी राजा से ज़्यादा मवेशी और भेड़ें जमा की थीं (वचन 7), फिर भी वे उससे संतुष्ट नहीं थे; उन्होंने राजाओं और प्रांतों से चाँदी, सोना और खज़ाना जमा करना जारी रखा (वचन 8)। इन सभी चीज़ों को अपना बनाने की चाहत कभी पूरी तरह संतुष्ट नहीं हो सकती। इस चाहत की फितरत ही ऐसी है कि इंसान के पास जितना ज़्यादा होता है, उसकी चाहत उतनी ही बढ़ती जाती है। आखिर में, चीज़ों को अपना बनाने की यह चाहत भी बेकार है। इसलिए, राजा सुलैमान मानते हैं कि यह दूसरी कोशिश—बड़े-बड़े व्यापारिक प्रोजेक्ट शुरू करना—महज़ एक बेवकूफी भरा काम था (वचन 3)।

तीसरी बात, खुशी पाने की अपनी कोशिशों के तहत, राजा सुलैमान ने "कई पत्नियाँ और रखैलें" रखकर अपनी शारीरिक इच्छाओं को पूरा करने की कोशिश की।

आज के हिस्से में सभोपदेशक 2:8 के बाद वाले भाग को देखें: "...और मैंने गाने-बजाने वाले पुरुष और स्त्रियाँ, और इंसानों के लिए खुशी की चीज़ें—बहुत सी रखैलें—इकट्ठी कीं।" व्यवस्थाविवरण 17:17 में इस्राएल के

राजा के बारे में एक आज्ञा है: "वह अपने लिए बहुत सी पत्नियाँ न रखे, ताकि उसका मन भटक न जाए; न ही वह अपने लिए बहुत सारा सोना-चाँदी जमा करे।" फिर भी, जैसा कि हम जानते हैं, राजा सुलैमान ने इस आज्ञा को तोड़ा। 1 राजा 11:1-3 साफ तौर पर दिखाता है कि परमेश्वर ने इस्राएल के लोगों को आज्ञा दी थी कि वे न तो विदेशियों से शादी करें और न ही विदेशियों को अपने लोगों से शादी करने दें (वचन 2)। परमेश्वर ने ऐसा इसलिए मना किया था क्योंकि वह जानता था कि वे विदेशी इस्राएलियों का मन विदेशी देवताओं के पीछे चलने के लिए भटका देंगे (वचन 2)। हालाँकि, राजा सुलैमान ने फिरोन की बेटी के अलावा कई विदेशी महिलाओं से भी प्रेम किया (वचन 1)। उसकी 700 पत्नियाँ और 300 रखैलें थीं (वचन 3); इन महिलाओं ने राजा सुलैमान का मन भटका दिया (वचन 3), और जैसे-जैसे वह बूढ़ा होता गया, उसकी पत्नियों ने उसका मन दूसरे देवताओं के पीछे चलने के लिए मोड़ दिया (वचन 4)। आखिरकार, शारीरिक इच्छाओं को पूरा करने की सुलैमान की चाहत उसे आध्यात्मिक व्यभिचार—मूर्तिपूजा—के पाप की ओर ले गई। दूसरे शब्दों में, शारीरिक वासनाओं को पूरा करने के लिए किए गए शारीरिक व्यभिचार का नतीजा आखिरकार आध्यात्मिक व्यभिचार के पाप के रूप में सामने आया। पिछले शुक्रवार, मैंने याहू न्यूज़ का एक लेख पढ़ा जिसका शीर्षक था "'यौन संबंध परमेश्वर की इच्छा'... पादरी ने महिला अनुयायियों का यौन शोषण किया।" लेख में बताया गया कि धार्मिक समूह "T" के "पादरी A" (46) के खिलाफ अर्ध-बलात्कार (quasi-rape) के आरोप में गिरफ्तारी वारंट की मांग की गई थी। सियोल के डोंगजाक-गु में समूह की स्थापना के बाद, पादरी A पर आरोप है कि उसने एक दशक के दौरान बीस-तीस साल की उम्र की छह महिला अनुयायियों का दर्जनों बार यौन शोषण किया। उसने दावा किया कि ये काम "परमेश्वर की इच्छा" थे और उसके साथ यौन संबंध बनाने से "सारे पाप धुल जाएँगे।" जब मैंने देखा कि लोग समूह "T" की पहचान यूनिफिकेशन चर्च के तौर पर कर रहे हैं, तो मुझे थोड़ी राहत मिली; फिर भी, मेरा मानना है कि यौन अनैतिकता के ऐसे अपराध एक सच्चाई हैं जिनसे ईसाई धर्म भी बच नहीं सकता। जब हम शारीरिक इच्छाओं की बात करते हैं, तो यौन इच्छा इसका एक मुख्य उदाहरण है। खाने और सोने की ज़रूरत की तरह ही, यौन इच्छा को भी इंसानों की तीन बुनियादी ज़रूरतों में से एक माना जाता है। जब कोई पुरुष या महिला इस शारीरिक चाहत के गुलाम बन जाते हैं, तो वे बलात्कार जैसे गंभीर पाप कर सकते हैं। बलात्कार इस बात का एक बड़ा उदाहरण है कि कैसे यौन इच्छा अचानक एक बेकाबू और विनाशकारी काम में बदल सकती है। आज की इन बातों पर गौर करें: अमीर लोगों में बिना किसी पछतावे के जीवनसाथी की अदला-बदली (spouse-swapping); शादी के विचार को ही खत्म कर देने वाले बिना शादी के साथ रहने के तरीके; "प्यार" के नाम पर शादी से पहले

बेरोकटोक सेक्स और सिर्फ़ प्यार कम हो जाने पर आसानी से हो जाने वाले तलाक; हर उम्र के लोगों के बीच फ़ोन सेक्स और वीडियो सेक्स; कैमरा फ़ोन और वेबकैम से अश्लील तस्वीरें तुरंत भेजना; इंटरनेट चैट के ज़रिए किशोरों का वेश्यावृत्ति में पड़ना; यौन गतिविधियों का तेज़ी से फैलना—न सिर्फ़ कॉलेज और हाई स्कूल के छात्रों में, बल्कि प्राइमरी स्कूल के बच्चों में भी; और इंटरनेट या साइबर पोर्नोग्राफी जिसकी लत पुरुषों और महिलाओं दोनों को लग जाती है। हमारी यौन संस्कृति को देखें—जो दिन-ब-दिन ज़्यादा सनसनीखेज, साफ़-साफ़ दिखाने वाली और सामान्य से हटकर होती जा रही है—तो अक्सर ऐसा लगता है कि कोई भी अपनी यौन इच्छाओं पर काबू नहीं रख सकता, और समय, जगह या साथी की परवाह किए बिना उन इच्छाओं को पूरा करना एक बिल्कुल स्वाभाविक बात मानी जाती है। यह सचमुच एक गंभीर सामाजिक समस्या है। आज समाज में यह सोच आम हो गई है कि शादी के दौरान कम से कम एक बार अफेयर करना तो आम बात है। हम ऐसे दौर में जी रहे हैं जहाँ यौन सुख की चाहत बेकाबू हो गई है। ऐसे समय में, हमें आज के लेख के ज़रिए यह समझना होगा कि राजा सुलैमान की शारीरिक वासनाओं को संतुष्ट करने की कोशिशें—सुख की खोज के दौरान—कितनी खतरनाक और मूर्खतापूर्ण थीं।

आखिर में, राजा सुलैमान हमें क्या मुख्य संदेश देते हैं—शराब, बड़े-बड़े कामों से मिली दौलत और चीज़ों, और अपनी शारीरिक इच्छाओं को पूरा करने के लिए रखी गई हज़ारों महिलाओं के ज़रिए सुख का अनुभव करने के बाद, और यह सब अपने दिल की समझदारी से करते हुए? कृपया उपदेशक (Ecclesiastes) अध्याय 2 की आयत 1 के दूसरे हिस्से और आयत 2 को देखें: "मैंने अपने मन में कहा, 'आओ, मैं तुम्हें सुख-सुविधाओं से परखूंगा; मज़ा करो।' लेकिन देखो, यह भी व्यर्थ था। मैंने हंसी के बारे में कहा, 'यह पागलपन है,' और सुख के बारे में, 'इससे क्या हासिल होता है?'" दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान ने सुखवाद (hedonism)—यानी खुद को सुख और मजे में डुबोए रखना—का अनुभव किया और उनका निष्कर्ष यही था कि "यह भी व्यर्थ था।" सुख की खोज बेकार क्यों है? राजा सुलैमान को कैसे एहसास हुआ कि सुख बेकार है? ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उन्होंने यही सवाल पूछा था: "सुख के बारे में, 'इससे क्या हासिल होता है?'" दूसरे शब्दों में, उन्होंने पूछा, "सुख से असल में क्या मिलता है?" राजा सुलैमान आयत 11 में इस सवाल का जवाब देते हैं: "तब मैंने उन सभी कामों पर विचार किया जो मेरे हाथों ने किए थे और उन्हें करने में मैंने जो मेहनत की थी, और देखा कि सब कुछ व्यर्थ था और हवा को पकड़ने की कोशिश जैसा था, और इस दुनिया

में कुछ भी हासिल करने लायक नहीं था।" आखिरकार, भले ही राजा सुलैमान ने वे सभी चीजों की जिनकी उनकी आँखों ने इच्छा की और जिनसे उनके दिल को खुशी मिली (आयत 10), लेकिन उस अनुभव से वे इसी नतीजे पर पहुँचे कि यह सब "व्यर्थ और हवा को पकड़ने की कोशिश जैसा था, और इस दुनिया में कुछ भी हासिल करने लायक नहीं था।" संक्षेप में, सुख बेकार और बिना किसी फायदे का है।

तो फिर, हमें कैसे जीना चाहिए? जब हम उपदेशक, राजा सुलैमान का संदेश सुनते हैं—जिन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि दुनिया पूरी तरह से व्यर्थ है और जिस सुख की उन्होंने खोज की थी, वह असल अनुभव में बेकार और बिना किसी फायदे का था—तो हमें अपना जीवन कैसे जीना चाहिए? मैंने इसका जवाब वेस्टमिंस्टर शॉर्टर कैटेकिज़्म (Westminster Shorter Catechism) के सवाल 1 में पाया: हमें परमेश्वर की महिमा के लिए जीना है और उसी में अपनी खुशी ढूँढनी है। इस संदर्भ में "परमेश्वर का आनंद लेना"—भजन संहिता 43:4 के नज़रिए से देखें तो—इसका मतलब है परमेश्वर को अपनी सबसे बड़ी खुशी (अपना "अत्यधिक आनंद") बनाना। जो जीवन परमेश्वर को अपनी सबसे बड़ी खुशी मानता है, वही जीवन परमेश्वर का भय मानता है और खुशी-खुशी उसकी आज्ञाओं का पालन करता है (उपदेशक 12:13)। इस तरह, यूहन्ना 15:9–11 में प्रेरित यूहन्ना हमें बताते हैं कि हमारी खुशी तब पूरी होगी जब हम प्रभु की आज्ञाओं को मानकर उनके प्रेम में बने रहेंगे। यही आज्ञा मानने की खुशी है। हमें प्रभु की आज्ञाओं को मानने से मिलने वाली इस खुशी को पाना चाहिए। प्रेरित पौलुस, जिन्होंने इस खुशी का अनुभव किया था, उन्होंने सुसमाचार का प्रचार करने की प्रभु की आज्ञा का पालन किया; फिलिप्पी के विश्वासियों को लिखते हुए—जिनके बीच उन्होंने निडर होकर यीशु मसीह के सुसमाचार का प्रचार किया था—उन्होंने उन्हें "मेरे भाइयों, जिनसे मैं प्रेम करता हूँ और जिनसे मिलने की लालसा रखता हूँ, जो मेरी खुशी और मेरा मुकुट हैं" कहा (फिलिप्पियों 4:1)। मेरी प्रार्थना है कि हम भी यीशु को अपनी सबसे बड़ी खुशी बनाएँ और सुसमाचार का प्रचार करने तथा चेले बनाने की उनकी आज्ञा का पालन करें। यीशु के प्रिय चेलों की संख्या—जो हमारी खुशी और मुकुट हैं—बढ़े, और प्रभु की खुशी हममें पूरी हो।

1. हे प्रभु, तू ही मेरी खुशी, मेरी आशा और मेरा जीवन है;
हालाँकि मैं दिन-रात तेरी स्तुति करता हूँ, फिर भी मेरा मन और अधिक की लालसा करता है।

5. हे यीशु, जिसे मैं सचमुच बहुत प्यार करता हूँ, तेरी आवाज़ कितनी सुखद है;
मेरा जीवन और मेरी सच्ची आशा केवल प्रभु यीशु में ही मिलती है।
(भजन संख्या 82)।

दिन 10: “तुम अपनी सीमा से आगे बढ़ गए हो”

[गिनती 16:3, 7 पर मनन]

“तब वे सब इकट्ठा होकर मूसा और हारून से कहने लगे, ‘तुम अपनी सीमा से आगे बढ़ गए हो। सारी मंडली पवित्र है, और यहोवा उनके बीच में है; तुम यहोवा की सभा से ऊपर क्यों उठते हो? ... कल यहोवा के सामने धूपदान में आग जलाकर उस पर धूप डालो; तब यहोवा के चुने हुए लोग पवित्र किए जाएँगे। हे लेवियों, तुम अपनी सीमा से आगे बढ़ गए हो।’” (गिनती 16:3, 7)

कलीसिया सुसमाचार प्रचार में बाधा डाल रही है। कलीसिया इस अंधकारमय संसार में प्रकाश और नमक के रूप में अपनी भूमिका निभाने में विफल हो रही है। कलीसिया को संसार को परमेश्वर का प्रेम दिखाना चाहिए, फिर भी उसमें ईर्ष्या, जलन, लड़ाई-झगड़ा, कलह और संघर्ष आम बात है। कलीसिया को परमेश्वर की पवित्रता प्रकट करनी चाहिए, फिर भी वह बहुत अधिक धर्मनिरपेक्ष हो गई है। तो फिर, एक ऐसे चर्च में चल रहे संघर्ष का कारण क्या है जो इतना धर्मनिरपेक्ष होता जा रहा है? मुझे इसका एक उत्तर आज के पाठ, गिनती 16:3 और 7 में मिला। वह उत्तर है सीमाओं का उल्लंघन करना।

आज के पाठ, गिनती 16 को देखने पर, हम पाते हैं कि लेवी के वंशज कोरह और रूबेन के वंशज दातान, अबीराम और ओन ने मिलकर एक गुट बनाया (पद 1)। उन्होंने मूसा (पद 2) और हारून के विरुद्ध विद्रोह किया, साथ ही इस्राएलियों की सभा द्वारा चुने गए 250 पुरुषों को भी अपने साथ लिया—अर्थात् सभा के कुछ प्रमुख कुलपतियों को (पद 3)। वे एकत्रित हुए और मूसा और हारून को चुनौती देते हुए कहा, “तुमने अपनी सीमाएँ पार कर दी हैं... तुम यहोवा की सभा से ऊपर क्यों उठते हो?” (पद 3)। उनका विद्रोह हारून और

उसके पुत्रों द्वारा धारित याजकीय पद के प्रति ईर्ष्या से उपजा था; लेवी उस पद की लालसा रखते थे (पार्क युन-सुन)। लेवियों ने हारून और उसके बेटों के पुरोहित पद की लालसा क्यों की? इसका कारण यह था कि वे अपने कर्तव्यों को महत्वहीन समझते थे। सोचिए मूसा ने लेवियों से क्या कहा था: “क्या तुम्हारे लिए यह कोई छोटी बात है कि इस्राएल के परमेश्वर ने तुम्हें इस्राएल की मंडली से अलग किया है, ताकि तुम उनके करीब आ सको, प्रभु के पवित्र डेरे का काम कर सको और मंडली की सेवा करने के लिए उनके सामने खड़े हो सको?” (पद 9)। उनकी अपनी भूमिका किसी भी तरह से मामूली नहीं थी, फिर भी क्योंकि वे इसे मामूली समझते थे, इसलिए उन्होंने हारून और उसके बेटों के याजक-पद की लालसा की, जो ज़्यादा सम्मानजनक लगता था। हालाँकि उन्हें अपनी-अपनी ज़िम्मेदारियों की कद्र करनी चाहिए थी और उन्हें ईमानदारी से पूरा करना चाहिए था, लेकिन लेवियों के मन में ऐसी बातें आईं जो उनकी हद से बाहर थीं, जिसके कारण उन्होंने ऐसी बातें कहीं और ऐसे काम किए जो उनकी हैसियत से बढ़कर थे।

जब हम अपनी हद से बाहर की बातें सोचते हैं, तो इस बात का बहुत ज़्यादा खतरा होता है कि हम ऐसी बातें भी बोलें। बातचीत में हद पार करने का एक उदाहरण वह आरोप है जो लेवियों ने मूसा और हारून पर लगाया था: “तुमने बहुत ज़्यादा अधिकार अपने हाथ में ले लिया है” (पद 3)। जब हम ऐसे घमंडी विचार मन में लाते हैं और ऐसी बातें कहते हैं जो हमारी हैसियत से बाहर होती हैं, तो हम अनजाने में ऐसे काम भी करने लगते हैं जो घमंड दिखाते हैं। ऐसा ही एक काम है अपने नेताओं की बात न मानना। जो लोग ऐसे घमंडी विचारों के कारण अपने नेताओं की बात नहीं मानते, वे अक्सर गुट बना लेते हैं। ठीक वैसे ही जैसे कोरह (एक लेवी) और दातान, अबीराम और ओन (रूबेनी) ने एक गुट बनाया (पद 1) और इस्राएली सभा के 250 प्रमुख नेताओं के साथ मिलकर मूसा और हारून के खिलाफ खड़े हो गए (पद 2), वैसे ही कलीसिया में भी, जो लोग खुद को बहुत अहम समझते हैं, वे गुट बना लेते हैं और कलीसिया के प्रमुख या वरिष्ठ सदस्यों के साथ मिलकर कलीसिया के नेताओं के खिलाफ खड़े हो जाते हैं। ऐसे लोग, जो खुद को बहुत अहम समझते हैं, कलीसिया के नेताओं का विरोध क्यों करते हैं? इसलिए क्योंकि वे खुद को ऊँचा दिखाना चाहते हैं (पद 3)। कलीसिया में रुतबा पाने की चाहत में, वे गुट बनाते हैं, प्रभावशाली लोगों को अपने साथ मिलाते हैं और नेतृत्व को चुनौती देते हैं। आखिरकार, वे कलीसिया में फूट और झगड़े पैदा करते हैं। वे शांति बनाने वाले नहीं होते; बल्कि, वे शांति बिगाड़ने वाले और झगड़े भड़काने वाले होते हैं। ऐसे ही लोगों की वजह से दुनिया में कलीसिया की बदनामी होती है।

जब हम कलीसिया में झगड़े देखते हैं, तो अक्सर वे नेताओं के बीच ही होते हैं—खासकर वरिष्ठ पादरी और एल्डर्स (बुजुर्गों/अगुओं) के बीच। बेशक, जीवनसाथी—जैसे पादरी की पत्नी और एल्डर्स की पत्नियाँ (जो *क्वोंसा* या डीकन के तौर पर सेवा कर सकती हैं)—अक्सर इन झगड़ों में भूमिका निभाती हैं। हालाँकि, चर्च के झगड़ों की हालिया रिपोर्टों से पता चलता है कि नियुक्त डीकन भी अक्सर ऐसे झगड़ों में सबसे आगे होते हैं। असल में, चर्च के ज़्यादातर अंदरूनी झगड़े उन लोगों के बीच होते हैं जो चर्च की सेवा के लिए समर्पित होते हैं। हम एक-दूसरे से क्यों लड़ते-झगड़ते और बहस करते हैं? इसकी वजह है घमंड। यह खुद को ऊँचा दिखाने की इच्छा से पैदा होता है, न कि प्रभु को ऊँचा दिखाने की इच्छा से, जो चर्च के मुखिया हैं। अगर हम प्रभु के सामने खुद को विनम्र बनाएँ, तो वह सही समय पर हमें ऊँचा उठाएँगे; लेकिन, क्योंकि हम खुद को ऊँचा दिखाना चाहते हैं, इसलिए हम चर्च के अंदर झगड़े पैदा करते हैं। खुद को ऊँचा दिखाने की कोशिश सही हद से ज़्यादा हो जाती है। हमें होश में आना चाहिए (रोमियों 12:3) और विश्वास के पैमाने के अनुसार सोचना चाहिए (पद 6)। इसके अलावा, हमें कभी भी अपने पद या भूमिका को मामूली नहीं समझना चाहिए। अगर हम अपनी सौंपी गई भूमिका को मामूली समझते हैं, तो हम उसे एक सच्ची बुलाहट के बजाय सिर्फ़ रुतबे वाली जगह के तौर पर देखने लगते हैं। नतीजतन, हम उन पदों से जलने और उन्हें पाने की इच्छा करने लगते हैं जो ज़्यादा प्रतिष्ठित लगते हैं। ऐसा लगता है कि इसीलिए हर कोई एल्डर या सीनियर डीकनेस बनने की होड़ में लगा रहता है। यह देखना हैरान करने वाला है कि चर्च एल्डर्स को चुनने के लिए कैसे "चुनाव" करवाते हैं—जो धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक अखाड़ों जैसे लगते हैं। इसके अलावा, पत्नियाँ अक्सर अपने पतियों को एल्डर के तौर पर चुनवाने के लिए प्रचार में आगे रहती हैं; उनकी सक्रिय भागीदारी से ये चुनाव प्रक्रियाएँ और भी शोर-शराबे वाली और अव्यवस्थित हो जाती हैं। ऐसा लगता है कि इन मुकाबलों के दौरान पैसे और भौतिक उपहारों का भी लेन-देन होता है। और भी अजीब बात यह है कि चर्च के अंदर एल्डर्स के लिए वोटिंग क्षेत्रीय आधार पर बँट सकती है—जैसे ग्योंगसांग और जियोला गुट—ठीक वैसे ही जैसे धर्मनिरपेक्ष दुनिया में होता है। उदाहरण के लिए, अगर कोई उम्मीदवार ग्योंगसांग इलाके से है, तो उसी इलाके के वोटर उसे ही वोट देते हैं। मुझे पक्का नहीं पता कि चर्च के अंदर सच में ऐसी चीज़ें होती हैं या नहीं; ये बस सुनी-सुनाई बातें हैं, फिर भी किसी तरह, ये सिर्फ़ मनगढ़ंत कहानियाँ नहीं लगतीं। प्रभु के पवित्र चर्च में ऐसी अजीब और बेतुकी घटनाओं को देखकर और उनके बारे में सुनकर मुझे—और हम सभी को—इस बात पर गहराई से

सोचने की ज़रूरत महसूस होती है कि हमें चर्च की सेवा कैसे करनी चाहिए, जो कि मसीह का शरीर है। और हमें इस बात पर पूरी गंभीरता से विचार करना चाहिए।

तो फिर, आपको और मुझे प्रभु के शरीर, यानी चर्च की सेवा कैसे करनी चाहिए? सबसे पहले, हमें विनम्रता के साथ सेवा करनी चाहिए। भजन 347, "विनम्रता से प्रभु की सेवा करें," याद आता है। पहले पद के बोल कुछ इस तरह हैं: "जब मैं विनम्रता से प्रभु की सेवा करता हूँ, तो कई परीक्षाएँ आती हैं; हे उद्धारकर्ता, मुझे उन्हें अच्छी तरह सहने की शक्ति दें।" जब हम चर्च—मसीह के शरीर—की विनम्रता से सेवा करते हैं, तो हमें निश्चित रूप से कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। फिर भी, हमें प्रभु द्वारा दी गई शक्ति से चर्च की सेवा करते रहना चाहिए। हमें किस तरह की शक्ति से सेवा करनी चाहिए? हमें प्रभु द्वारा दी गई कृपा की शक्ति से निष्ठापूर्वक चर्च की सेवा करनी चाहिए। हमें कृपा की शक्ति से सेवा करनी चाहिए। हमारी अपनी कोई योग्यता नहीं है; केवल यीशु के क्रूस की ही योग्यता है। जब हम चर्च की सेवा करते हैं, तो हमें अपनी व्यक्तिगत योग्यता के किसी भी भाव को त्याग देना चाहिए—हमें इसे पूरी तरह से छोड़ देना चाहिए। इसके बजाय, सेवा के लिए समर्पित हृदय के साथ, हमें परमेश्वर द्वारा दी गई कृपा के माध्यम से विनम्रता और निष्ठा के साथ चर्च की सेवा करनी चाहिए। हमें कभी भी हमें सौंपे गए बुलावे या पद को हल्के में नहीं लेना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि हम इस पवित्र बुलावे को परमेश्वर की कृपा का एक महान उपहार मानें, और उस कृपा से सशक्त होकर, हम विनम्रता और निष्ठा के साथ चर्च—मसीह के शरीर—की सेवा करें।

दिन 10: "तुम अपनी सीमा से आगे बढ़ गए हो"

[गिनती 16:3, 7 पर मनन]

"तब वे सब इकट्ठा होकर मूसा और हारून से कहने लगे, 'तुम अपनी सीमा से आगे बढ़ गए हो। सारी मंडली पवित्र है, और यहोवा उनके बीच में है; तुम यहोवा की सभा से ऊपर क्यों उठते हो? ... कल यहोवा के सामने धूपदान में आग जलाकर उस पर धूप डालो; तब यहोवा के चुने हुए लोग पवित्र किए जाएंगे। हे लेवियों, तुम अपनी सीमा से आगे बढ़ गए हो।'" (गिनती 16:3, 7)

कलीसिया सुसमाचार प्रचार में बाधा डाल रही है। कलीसिया इस अंधकारमय संसार में प्रकाश और नमक के रूप में अपनी भूमिका निभाने में विफल हो रही है। कलीसिया को संसार को परमेश्वर का प्रेम दिखाना चाहिए, फिर भी उसमें ईर्ष्या, जलन, लड़ाई-झगड़ा, कलह और संघर्ष आम बात है। कलीसिया को परमेश्वर की पवित्रता प्रकट करनी चाहिए, फिर भी वह बहुत अधिक धर्मनिरपेक्ष हो गई है। तो फिर, एक ऐसे चर्च में चल रहे संघर्ष का कारण क्या है जो इतना धर्मनिरपेक्ष होता जा रहा है? मुझे इसका एक उत्तर आज के पाठ, गिनती 16:3 और 7 में मिला। वह उत्तर है सीमाओं का उल्लंघन करना।

आज के पाठ, गिनती 16 को देखने पर, हम पाते हैं कि लेवी के वंशज कोरह और रूबेन के वंशज दातान, अबीराम और ओन ने मिलकर एक गुट बनाया (पद 1)। उन्होंने मूसा (पद 2) और हारून के विरुद्ध विद्रोह किया, साथ ही इस्राएलियों की सभा द्वारा चुने गए 250 पुरुषों को भी अपने साथ लिया—अर्थात् सभा के कुछ प्रमुख कुलपतियों को (पद 3)। वे एकत्रित हुए और मूसा और हारून को चुनौती देते हुए कहा, “तुमने अपनी सीमाएँ पार कर दी हैं... तुम यहोवा की सभा से ऊपर क्यों उठते हो?” (पद 3)। उनका विद्रोह हारून और उसके पुत्रों द्वारा धारित याजकीय पद के प्रति ईर्ष्या से उपजा था; लेवी उस पद की लालसा रखते थे (पार्क युन-सुन)। लेवियों ने हारून और उसके बेटों के पुरोहित पद की लालसा क्यों की? इसका कारण यह था कि वे अपने कर्तव्यों को महत्वहीन समझते थे। सोचिए मूसा ने लेवियों से क्या कहा था: “क्या तुम्हारे लिए यह कोई छोटी बात है कि इस्राएल के परमेश्वर ने तुम्हें इस्राएल की मंडली से अलग किया है, ताकि तुम उनके करीब आ सको, प्रभु के पवित्र डेरे का काम कर सको और मंडली की सेवा करने के लिए उनके सामने खड़े हो सको?” (पद 9)। उनकी अपनी भूमिका किसी भी तरह से मामूली नहीं थी, फिर भी क्योंकि वे इसे मामूली समझते थे, इसलिए उन्होंने हारून और उसके बेटों के याजक-पद की लालसा की, जो ज़्यादा सम्मानजनक लगता था। हालाँकि उन्हें अपनी-अपनी ज़िम्मेदारियों की कद्र करनी चाहिए थी और उन्हें ईमानदारी से पूरा करना चाहिए था, लेकिन लेवियों के मन में ऐसी बातें आईं जो उनकी हद से बाहर थीं, जिसके कारण उन्होंने ऐसी बातें कहीं और ऐसे काम किए जो उनकी हैसियत से बढ़कर थे।

जब हम अपनी हद से बाहर की बातें सोचते हैं, तो इस बात का बहुत ज़्यादा खतरा होता है कि हम ऐसी बातें भी बोलें। बातचीत में हद पार करने का एक उदाहरण वह आरोप है जो लेवियों ने मूसा और हारून पर

लगाया था: “तुमने बहुत ज़्यादा अधिकार अपने हाथ में ले लिया है” (पद 3)। जब हम ऐसे घमंडी विचार मन में लाते हैं और ऐसी बातें कहते हैं जो हमारी हैसियत से बाहर होती हैं, तो हम अनजाने में ऐसे काम भी करने लगते हैं जो घमंड दिखाते हैं। ऐसा ही एक काम है अपने नेताओं की बात न मानना। जो लोग ऐसे घमंडी विचारों के कारण अपने नेताओं की बात नहीं मानते, वे अक्सर गुट बना लेते हैं। ठीक वैसे ही जैसे कोरह (एक लेवी) और दातान, अबीराम और ओन (रूबेनी) ने एक गुट बनाया (पद 1) और इस्राएली सभा के 250 प्रमुख नेताओं के साथ मिलकर मूसा और हारून के खिलाफ खड़े हो गए (पद 2), वैसे ही कलीसिया में भी, जो लोग खुद को बहुत अहम समझते हैं, वे गुट बना लेते हैं और कलीसिया के प्रमुख या वरिष्ठ सदस्यों के साथ मिलकर कलीसिया के नेताओं के खिलाफ खड़े हो जाते हैं। ऐसे लोग, जो खुद को बहुत अहम समझते हैं, कलीसिया के नेताओं का विरोध क्यों करते हैं? इसलिए क्योंकि वे खुद को ऊँचा दिखाना चाहते हैं (पद 3)। कलीसिया में रुतबा पाने की चाहत में, वे गुट बनाते हैं, प्रभावशाली लोगों को अपने साथ मिलाते हैं और नेतृत्व को चुनौती देते हैं। आखिरकार, वे कलीसिया में फूट और झगड़े पैदा करते हैं। वे शांति बनाने वाले नहीं होते; बल्कि, वे शांति बिगाड़ने वाले और झगड़े भड़काने वाले होते हैं। ऐसे ही लोगों की वजह से दुनिया में कलीसिया की बदनामी होती है।

जब हम कलीसिया में झगड़े देखते हैं, तो अक्सर वे नेताओं के बीच ही होते हैं—खासकर वरिष्ठ पादरी और एल्डर्स (बुजुर्गों/अगुओं) के बीच। बेशक, जीवनसाथी—जैसे पादरी की पत्नी और एल्डर्स की पत्नियाँ (जो *क्रॉसा* या डीकन के तौर पर सेवा कर सकती हैं)—अक्सर इन झगड़ों में भूमिका निभाती हैं। हालाँकि, चर्च के झगड़ों की हालिया रिपोर्टों से पता चलता है कि नियुक्त डीकन भी अक्सर ऐसे झगड़ों में सबसे आगे होते हैं। असल में, चर्च के ज़्यादातर अंदरूनी झगड़े उन लोगों के बीच होते हैं जो चर्च की सेवा के लिए समर्पित होते हैं। हम एक-दूसरे से क्यों लड़ते-झगड़ते और बहस करते हैं? इसकी वजह है घमंड। यह खुद को ऊँचा दिखाने की इच्छा से पैदा होता है, न कि प्रभु को ऊँचा दिखाने की इच्छा से, जो चर्च के मुखिया हैं। अगर हम प्रभु के सामने खुद को विनम्र बनाएँ, तो वह सही समय पर हमें ऊँचा उठाएँगे; लेकिन, क्योंकि हम खुद को ऊँचा दिखाना चाहते हैं, इसलिए हम चर्च के अंदर झगड़े पैदा करते हैं। खुद को ऊँचा दिखाने की कोशिश सही हद से ज़्यादा हो जाती है। हमें होश में आना चाहिए (रोमियों 12:3) और विश्वास के पैमाने के अनुसार सोचना चाहिए (पद 6)। इसके अलावा, हमें कभी भी अपने पद या भूमिका को मामूली नहीं समझना चाहिए। अगर हम अपनी सौंपी गई भूमिका को मामूली समझते हैं, तो हम उसे एक सच्ची बुलाहट के बजाय सिर्फ़

रुतबे वाली जगह के तौर पर देखने लगते हैं। नतीजतन, हम उन पदों से जलने और उन्हें पाने की इच्छा करने लगते हैं जो ज़्यादा प्रतिष्ठित लगते हैं। ऐसा लगता है कि इसीलिए हर कोई एल्डर या सीनियर डीकनेस बनने की होड़ में लगा रहता है। यह देखना हैरान करने वाला है कि चर्च एल्डर्स को चुनने के लिए कैसे "चुनाव" करवाते हैं—जो धर्मनिरपेक्ष राजनीतिक अखाड़ों जैसे लगते हैं। इसके अलावा, पत्नियाँ अक्सर अपने पतियों को एल्डर के तौर पर चुनवाने के लिए प्रचार में आगे रहती हैं; उनकी सक्रिय भागीदारी से ये चुनाव प्रक्रियाएँ और भी शोर-शराबे वाली और अव्यवस्थित हो जाती हैं। ऐसा लगता है कि इन मुकाबलों के दौरान पैसे और भौतिक उपहारों का भी लेन-देन होता है। और भी अजीब बात यह है कि चर्च के अंदर एल्डर्स के लिए वोटिंग क्षेत्रीय आधार पर बँट सकती है—जैसे ग्योंगसांग और जियोला गुट—ठीक वैसे ही जैसे धर्मनिरपेक्ष दुनिया में होता है। उदाहरण के लिए, अगर कोई उम्मीदवार ग्योंगसांग इलाके से है, तो उसी इलाके के वोटर उसे ही वोट देते हैं। मुझे पक्का नहीं पता कि चर्च के अंदर सच में ऐसी चीज़ें होती हैं या नहीं; ये बस सुनी-सुनाई बातें हैं, फिर भी किसी तरह, ये सिर्फ़ मनगढ़ंत कहानियाँ नहीं लगतीं। प्रभु के पवित्र चर्च में ऐसी अजीब और बेतुकी घटनाओं को देखकर और उनके बारे में सुनकर मुझे—और हम सभी को—इस बात पर गहराई से सोचने की ज़रूरत महसूस होती है कि हमें चर्च की सेवा कैसे करनी चाहिए, जो कि मसीह का शरीर है। और हमें इस बात पर पूरी गंभीरता से विचार करना चाहिए।

तो फिर, आपको और मुझे प्रभु के शरीर, यानी चर्च की सेवा कैसे करनी चाहिए? सबसे पहले, हमें विनम्रता के साथ सेवा करनी चाहिए। भजन 347, "विनम्रता से प्रभु की सेवा करें," याद आता है। पहले पद के बोल कुछ इस तरह हैं: "जब मैं विनम्रता से प्रभु की सेवा करता हूँ, तो कई परीक्षाएँ आती हैं; हे उद्धारकर्ता, मुझे उन्हें अच्छी तरह सहने की शक्ति दें।" जब हम चर्च—मसीह के शरीर—की विनम्रता से सेवा करते हैं, तो हमें निश्चित रूप से कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। फिर भी, हमें प्रभु द्वारा दी गई शक्ति से चर्च की सेवा करते रहना चाहिए। हमें किस तरह की शक्ति से सेवा करनी चाहिए? हमें प्रभु द्वारा दी गई कृपा की शक्ति से निष्ठापूर्वक चर्च की सेवा करनी चाहिए। हमें कृपा की शक्ति से सेवा करनी चाहिए। हमारी अपनी कोई योग्यता नहीं है; केवल यीशु के क्रूस की ही योग्यता है। जब हम चर्च की सेवा करते हैं, तो हमें अपनी व्यक्तिगत योग्यता के किसी भी भाव को त्याग देना चाहिए—हमें इसे पूरी तरह से छोड़ देना चाहिए। इसके बजाय, सेवा के लिए समर्पित हृदय के साथ, हमें परमेश्वर द्वारा दी गई कृपा के माध्यम से विनम्रता और

निष्ठा के साथ चर्च की सेवा करनी चाहिए। हमें कभी भी हमें सौंपे गए बुलावे या पद को हल्के में नहीं लेना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि हम इस पवित्र बुलावे को परमेश्वर की कृपा का एक महान उपहार मानें, और उस कृपा से सशक्त होकर, हम विनम्रता और निष्ठा के साथ चर्च—मसीह के शरीर—की सेवा करें।

दिन 11: जलन भरी नज़रें

[1 शमूएल 18:9 पर मनन]

"उस दिन से शाऊल दाऊद पर नज़र रखने लगा" (1 शमूएल 18:9)।

जब मैं "जलन" (jealousy) शब्द सुनता हूँ, तो मुझे उसी नाम के उस नाटक की याद आती है जो जून और जुलाई 1992 में MBC पर प्रसारित हुआ था। चोई सू-जोंग और स्वर्गीय चोई जिन-सिल अभिनीत इस नाटक में युवाओं की मासूम लेकिन दिल को छू लेने वाली प्रेम कहानी दिखाई गई थी। कहा जाता है कि यह नाटक उस समय का एक बेहतरीन मेलोड्रामा माना जाता था, जिसने परिपक्व प्यार को समझने में शामिल दर्द, इंतज़ार और सुंदरता को हल्के-फुल्के अंदाज़ में दिखाया था (इंटरनेट)। मुझे अभी भी नाटक के थीम सॉन्ग "जलन" (Jealousy) के बोल धुंधले-धुंधले याद हैं: "तुम आखिर किसे देख रहे हो? मैं तो तुम्हारी आँखों के सामने ही खड़ा हूँ... मैं ज़्यादा कुछ नहीं माँगता, बस प्यार भरी एक नज़र चाहिए। जब मैं अपने दिल की बात कहने की कोशिश करता हूँ, तब भी तुम्हारी आँखें कुछ और ही कहती हैं..." (इंटरनेट)। उस समय मैं 24 साल का था, और मेरा मानना है कि उस नाटक और उसके थीम सॉन्ग ने एक युवा कुंवारे के दिल को छू लिया था। इसे लिखते समय, मैं वही थीम सॉन्ग फिर से सुन रहा हूँ। बेशक, अब यह काफी फीका लगता है, उस समय की तुलना में जब मैंने इसे पहली बार सुना था। हालाँकि, यह एक अटल सच्चाई है कि "जलन" को इतनी मामूली बात नहीं माना जा सकता। ऐसा क्यों है? क्योंकि जलन किसी इंसान की जान भी ले सकती है। मेरा सचमुच मानना है कि जलन शैतान का एक भयानक हथियार है।

जलन क्या है? विकिपीडिया के अनुसार, इसे इस तरह परिभाषित किया गया है: "किसी दूसरे व्यक्ति के पास जो चीज़ है, उसे पाने की इच्छा रखना (नाखुशी के कारण), या बिना किसी कारण के उससे नफ़रत करना और उसे नष्ट करने की कोशिश करना" (इंटरनेट)। इस परिभाषा को बार-बार पढ़ने और खुद पर विचार

करने के बाद, मेरे पास सचमुच कहने के लिए शब्द नहीं हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि मुझे एक ऐसा समय याद आया जब मैंने मसीह की देह (कलीसिया) के एक साथी सदस्य के प्रति बिना किसी कारण के सच्ची नफ़रत महसूस की थी। उस व्यक्ति ने मेरे साथ कुछ भी गलत नहीं किया था, फिर भी मैं उनसे नफ़रत करता था; न चाहते हुए भी, मैं बार-बार नफ़रत की भावनाएँ महसूस करता था। बेशक, मैं अब भी अपने अंदर वह पहलू देखता हूँ—दूसरों को मुझसे ज़्यादा तारीफ़ और पहचान मिलने पर जलन या ईर्ष्या महसूस करने की आदत। ज़ाहिर है, यह मेरे मन की हालत को दिखाता है। मेरे दिल में उठने वाली जलन या ईर्ष्या असल में घमंड से पैदा होती है। अगर मैं सच में परमेश्वर के सामने विनम्र होता, तो मुझमें ऐसी दुनियावी और शैतानी जलन नहीं होती; बल्कि मैं अपने दिल को वैसे ही खाली कर देता जैसा यीशु ने किया था (फिलिप्पियों 2:5-8)। अगर मैं सच में यीशु के दिल जैसा बनने की कोशिश करता, तो जलन या ईर्ष्या महसूस करने के बजाय—विनम्र मन से—दूसरों को खुद से बेहतर समझता (फिलिप्पियों 2:3)।

बेशक, बाइबल सिर्फ़ दुनियावी और शैतानी जलन के बारे में ही नहीं बताती; यह परमेश्वर की जलन के बारे में भी बताती है। मिसाल के लिए, गिनती 25:11 में, परमेश्वर मूसा से फ़्रीनहास के बारे में बात करते हैं—जो एलीआज़र का बेटा और याजक हारून का पोता था—और कहते हैं, "फ़्रीनहास... ने इस्राएलियों पर से मेरा क्रोध हटा दिया है, क्योंकि उसने उनके बीच मेरे लिए वैसी ही जलन दिखाई जैसी मुझे है, ताकि मैं अपनी जलन में इस्राएलियों को खत्म न कर दूँ।" फ़्रीनहास ने जो जलन दिखाई, वह "ऊपर से" थी (याकूब 3:17); वह बाइबल के अनुसार थी और परमेश्वर को पसंद आई। हमें ठीक इसी तरह की ईश्वरीय जलन को अपनाना चाहिए। हालाँकि, हमें उस तरह की जलन नहीं रखनी चाहिए जैसी शाऊल ने आज के हिस्से, 1 शमूएल 18:9 में दिखाई थी, क्योंकि शाऊल की जलन दुनियावी, गैर-आध्यात्मिक और शैतानी थी (याकूब 3:15)। आज के हिस्से, 1 शमूएल 18:9 में, हम देखते हैं कि राजा शाऊल जलन से भरा हुआ था। बाइबल हमें बताती है कि उसने दाऊद को—जो परमेश्वर के मन के मुताबिक इंसान था—जलन भरी नज़रों से देखा। जहाँ कोरियाई बाइबल बस यह कहती है कि उसने "करीबी नज़र रखी" (*jumok-hayeotdeora*), वहीं न्यू इंटरनेशनल वर्ज़न (NIV) साफ़ करता है कि उसने उस समय से "दाऊद पर जलन भरी नज़र रखी"। *द न्यू स्ट्रॉन्स डिक्शनरी ऑफ़ हिब्रू एंड ग्रीक वर्ड्स* के अनुसार, यहाँ इस्तेमाल की गई हिब्रू क्रिया का असल मतलब है "जलन भरी नज़रों से देखना"। शाऊल ने दाऊद को इतनी जलन से क्यों देखा? इसका जवाब "उस दिन से"

(1 शमूएल 18:9) वाक्यांश में छिपा है। विस्तार से कहें तो, "उस दिन" का मतलब है वह समय जब दाऊद फ़िलिस्तीनी दानव गोलियत को मारकर लौटा था। इसराइल के सभी शहरों की औरतें नाचते-गाते बाहर आईं और कहा, "शाऊल ने हज़ारों को मारा है, और दाऊद ने दसियों हज़ारों को" (पद 7)। शाऊल इन बातों से बहुत नाराज़ और गुस्से में था, उसने कहा, "उन्होंने दाऊद को दसियों हज़ारों का श्रेय दिया है, लेकिन मुझे सिर्फ़ हज़ारों का—अब उसके पास राज्य के अलावा और क्या बचा है?" (पद 8)। उस दिन से, शाऊल दाऊद को जलन भरी नज़रों से देखने लगा। ज़रा सोचिए: राजा शाऊल इस नाटक का मुख्य पात्र था, लेकिन गोलियत के मारे जाने के बाद, दाऊद—एक चरवाहा लड़का जो सहायक निर्देशक भी नहीं था—नया मुख्य पात्र बन गया और सबका ध्यान और प्यार पाने लगा। दाऊद सबके ध्यान और प्यार का केंद्र बन गया था। शाऊल का बेटा योनातन, दाऊद से अपनी जान से भी ज़्यादा प्यार करता था (पद 1, 3); शाऊल की बेटी मीकल भी उससे प्यार करती थी (पद 20, 28); और सच तो यह है कि इसराइल और यहूदा के सभी लोग दाऊद से प्यार करते थे (पद 16)। तो फिर, शाऊल को कैसा लगा होगा? खासकर शाऊल—जो यह देख और जान चुका था कि परमेश्वर उससे दूर हो गए हैं और दाऊद के साथ हैं (पद 12, 14, 28)—दाऊद को जलन भरी नज़रों से देखने लगा, क्योंकि परमेश्वर की भेजी हुई बुरी आत्मा ने उसे ज़ोर से जकड़ लिया था (पद 10)। शाऊल लगातार दाऊद को जलन से देखता रहा। सचमुच डरावनी बात यह है कि जलन भरी इसी नज़र की वजह से शाऊल ने आखिरकार दाऊद को मारने की कोशिश की। जब दाऊद वीणा बजा रहा था, तो शाऊल ने अपने हाथ में पकड़ा हुआ भाला उस पर फेंका, ताकि दाऊद दीवार से चिपक जाए (पद 10-11)। हालाँकि वह कोशिश नाकाम रही, लेकिन शाऊल ने उस समय के बाद भी दाऊद को मारने की कोशिशें जारी रखीं। जलन का स्वभाव ही ऐसा है: यह इंसान को हत्या जैसा पाप करने के लिए उकसा सकती है। आखिरकार, क्योंकि शाऊल ने देखा और जाना कि परमेश्वर दाऊद के साथ हैं, इसलिए वह उससे और भी ज़्यादा डरने लगा और उसका जीवन भर का दुश्मन बन गया (पद 29)। उसने अपनी पूरी ज़िंदगी डेविड को मारने की कोशिश में बिता दी। फिर भी, जैसा कि हम जानते हैं, क्योंकि परमेश्वर डेविड के साथ था, इसलिए डेविड इज़राइल का राजा बना, जबकि राजा शाऊल लड़ाई में मारा गया। शाऊल, जिसने जलन की वजह से डेविड को मारने की कोशिश की थी, खुद अपनी मौत मरा। यह उस दुखद अंत का उदाहरण है, जिसकी वजह बुरी जलन बनती है।

तो फिर, हम ऐसी बुरी जलन पर कैसे काबू पा सकते हैं? मुझे इसका जवाब भजन 73 में मिला। भजन रचने वाले आसाफ का पैर लगभग डगमगा गया था (पद 2) जब उसने बुरे लोगों की खुशहाली देखकर घमंडी लोगों से जलन की (पद 3); लेकिन, वह इस बुरी जलन पर तभी काबू पा सका जब वह परमेश्वर के पवित्र स्थान में गया और उसने बुरे लोगों के आखिरी अंजाम को समझा (पद 17)। दूसरे शब्दों में, आसाफ ने अपनी बुरी जलन पर तब जीत हासिल की जब उसने अपना ध्यान परमेश्वर पर लगाया—यह समझते हुए कि पवित्र और न्याय करने वाला परमेश्वर बुरे लोगों का न्याय कैसे करता है (पद 17–20)—और जब उसे एहसास हुआ कि धरती पर प्रभु के अलावा उसकी और कोई चाहत नहीं है (पद 25)। यही मुख्य बात है। हमें दूसरों को बुरी, जानलेवा जलन भरी नज़रों से नहीं देखना चाहिए; इसके बजाय, हमें सिर्फ प्रभु की ओर ईश्वरीय जलन भरी नज़रों से देखना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम अपने दिलों में पनपने वाली जलन पर काबू पा सकते हैं—ऐसी जलन जो दुनियावी, शारीरिक और शैतानी होती है। हम जीतेंगे क्योंकि परमेश्वर अपनी जलन भरी नज़रों से हमारी देखभाल करता है, और वह कभी ऊँघता या सोता नहीं है।

दिन 12: पति का पाप

[एस्तेर 1:11 पर मनन]

"रानी वश्टी को उसके मुकुट के साथ बुलाओ, और उसे राजा के सामने लाओ ताकि वह अपनी सुंदरता सभी लोगों और राजकुमारों को दिखा सके, क्योंकि वह देखने में बहुत सुंदर थी।" (एस्तेर 1:11)

हम ऐसे दौर में आ गए हैं जहाँ पतियों का घटता हुआ अधिकार एक सच्चाई है जिसे नकारा नहीं जा सकता। इसके कारणों पर विचार करते हुए, मैंने एक-दो बातें देखीं। पहली बात है नारीवाद (feminism)। हालाँकि ऊपर से यह सच लग सकता है कि महिलाओं के अधिकार उन्हें वापस मिल गए हैं, लेकिन इसकी मूल विचारधारा बाइबिल के खिलाफ है; इसलिए, मेरा मानना है कि महिलाओं के अधिकार बहाल करने के "इलाज" ने आखिरकार पतियों के घटते अधिकार की "बीमारी" को जन्म दिया है। दूसरी बात, मेरा मानना है कि पति की गैर-ज़िम्मेदारी ही इस घटते अधिकार का कारण है। मुझे लगता है कि ऐसा इसलिए है क्योंकि हमारे पति एक पति, पिता और घर के मुखिया के तौर पर अपनी ज़िम्मेदारियाँ ठीक से नहीं निभा पा रहे हैं। खासकर, मेरा मानना है कि पति का अधिकार इसलिए कम हो रहा है क्योंकि वह अपनी आर्थिक ज़िम्मेदारियाँ पूरी नहीं कर पा रहा है। पति के अधिकार में इस गिरावट का नतीजा तानाशाही है। क्योंकि वह उस बाइबिल-सम्मत अधिकार को नहीं निभा पाता जो परमेश्वर ने उसे दिया है, इसलिए वह उस अधिकार का गलत इस्तेमाल करता है और आखिरकार एक तानाशाह पति बन जाता है। आज, एस्तेर अध्याय 1 की बातों पर ध्यान देते हुए, मैं यह देखना चाहता हूँ कि ऐसा तानाशाह पति अपनी पत्नी के खिलाफ क्या पाप करता है। इसके लिए मैं फारस (आज का ईरान) के राजा अहशवेरोश द्वारा अपनी पत्नी, रानी वश्टी के खिलाफ किए गए तीन पापों पर ध्यान केंद्रित करूँगा।

पहली बात, राजा अहश्वेरोश अपनी पत्नी का सम्मान नहीं करता था। एस्तेर 1:1-9 में तीन दावतों का ज़िक्र है। पहली दावत राजा अहश्वेरोश ने "अपने सभी राजकुमारों और सेवकों" के लिए आयोजित की थी और यह 180 दिनों—यानी लगभग छह महीने—तक चली (वचन 3)। इसका मकसद अपने शानदार राज्य की भव्य संपत्ति और शान-ओ-शौकत दिखाना था (वचन 4)। दूसरी दावत राजा ने सूसा के किले के सभी लोगों के लिए आयोजित की थी—बड़े से लेकर छोटे तक—और यह सात दिनों तक चली (वचन 5)। इन दो घटनाओं के उलट, एस्तेर की किताब का लेखक रानी वशती द्वारा आयोजित दावत का वर्णन सिर्फ़ एक आयत (v. 9) में करता है। इस फ़र्क की वजह से रानी की दावत राजा की दावत के मुकाबले बहुत मामूली लगती है। जहाँ राजा ने अपने विशाल साम्राज्य—जो भारत से लेकर कूश तक फैला था—की शान-ओ-शौकत दिखाने के लिए दो बार शानदार दावतें दीं, वहीं अपनी पत्नी को सबके सामने लाने के लिए दावत देने का विचार उसे बाद में आया (v. 11)। गौर करने वाली बात यह है कि दूसरी दावत में उसने ऊँचे से लेकर नीचे दर्जे तक के सभी लोगों को बुलाया, उन्हें अपनी मर्ज़ी से शराब पीने की छूट दी (v. 8) और अपनी अपार दौलत के मुताबिक दावत का इंतज़ाम किया (v. 7); फिर भी, बाइबल इस बारे में कुछ नहीं कहती कि उसने अपनी पत्नी—जो असल में उसका अपना ही शरीर थी—के लिए क्या किया। राजा अहश्वेरोश ने असल में रानी वशती को आम लोगों से भी कम अहमियत महसूस कराई। अगर उसने अपनी पत्नी से अपने शरीर की तरह प्यार करने के बाइबल के हुक्म (इफिसियों 5:28) को माना होता, तो वह रानी वशती को इतना मामूली नहीं दिखाता।

मेरा मानना है कि राजा अहश्वेरोश की तरह, आज भी कई पति अपनी पत्नियों की कद्र न करने का पाप करते हैं। पति शायद कुछ और कहें, लेकिन पत्नी के नज़रिए से वे शायद यही एहसास दिला रहे हों। भले ही असलियत कुछ और हो, लेकिन अगर पति का बर्ताव पत्नी को मामूली या कम अहमियत वाला महसूस कराता है, तो वह उसके प्यार को महसूस नहीं कर सकती।

दूसरी बात, राजा अहश्वेरोश अपनी पत्नी से नाराज़ हो गया।

गुस्से का पाप—हम पति अपनी पत्नियों के खिलाफ़ कितनी बार यह पाप करते हैं? एस्तेर 1:10-12 के अनुसार, दूसरी दावत के दौरान, जब राजा अहश्वेरोश शराब के नशे में खुशमिज़ाज था, तो उसने सात शाही खोजों (eunuchs) के ज़रिए रानी वशती को बुलवाया। उसका मकसद लोगों को उसकी खूबसूरती दिखाना था। लेकिन उम्मीद के उलट, रानी वशती ने राजा का हुक्म मानने से इनकार कर दिया (आयत 12)। इस पर राजा अहश्वेरोश गुस्से से आग-बबूला हो गया (आयत 12)। यहाँ हमें यह सवाल पूछना चाहिए कि क्या राजा अहश्वेरोश का गुस्सा जायज़ था। आखिरकार, पत्नी को अपने पति की बात माननी चाहिए, फिर भी रानी वशती ने राजा का हुक्म नहीं माना था। हालांकि, यहूदी इतिहासकार जोसेफ़स बताते हैं कि उस समय रानी वशती असल में फ़ारसी कानून का पालन कर रही थीं। फ़ारसी कानून के अनुसार, शाही महिलाओं का सार्वजनिक जगहों पर अपना चेहरा दिखाना मना था। इस तरह, रानी वशती ने राजा के आदेश को तो नहीं माना, लेकिन देश के कानून का सम्मान किया। उस कानून का पालन करके, उन्होंने अपने पति—राजा—या उनके शाही अधिकार का अपमान होने से बचाया। फिर भी, राजा अहासवेरस बहुत गुस्से में थे। उनके गुस्से की वजह पर सोचने पर मुझे लगता है कि यह उनके आहत अहंकार (ego) का नतीजा था। राजा अहासवेरस का अहंकार बुरी तरह आहत हुआ होगा जब उन्होंने सोचा कि जो राजा 127 प्रांतों पर राज करता है, वह अपनी ही पत्नी को आदेश नहीं दे सकता। जबकि वे अपनी प्रजा को अपनी मर्ज़ी से काम करने की आज्ञा दी देते थे, वे रानी वशती पर अपनी मनमानी चलाना चाहते थे और उन्हें अपनी मर्ज़ी से काम नहीं करने देना चाहते थे।

पति अक्सर अपनी पत्नियों पर गुस्सा हो जाते हैं, लेकिन बाद में उन्हें एहसास होता है कि उनकी पत्नियाँ सही थीं और वे खुद गलत थे। रानी वशती के फैसले और कामों—फ़ारसी कानून को न तोड़ने—ने उनके पति और उनकी प्रजा के सामने उनकी ईमानदारी और कानून के प्रति सम्मान को दिखाया; फिर भी, राजा अहासवेरस ने उनके व्यवहार को सिर्फ़ आज्ञा न मानने के तौर पर देखा। जब सबके सामने उनकी इज़्ज़त और अधिकार को कम किया गया, तो उनके अहंकार को इतनी गहरी चोट पहुँची कि वे अपनी पत्नी पर गुस्सा निकाले बिना नहीं रह सके।

आखिरकार, तीसरी बात यह है कि राजा अहासवेरस ने अपनी पत्नी को छोड़ दिया।

गुस्से में, राजा अहासवेरस ने मेमुकान (पद 16) की सलाह मानी, जो राज्य के सबसे ऊँचे ओहदों पर बैठने वाले अधिकारियों में से एक था और राजा के मूड को समझने में माहिर था (पद 14)। मेमुकान को राजा के गुस्से का अच्छी तरह पता था; इसके अलावा, एक ऊँचे ओहदे वाले महत्वाकांक्षी व्यक्ति के तौर पर, उसने गुस्से में भरे राजा को खुश करने के लिए ही अपनी बातें कही होंगी। आखिरकार, मेमुकान ने रानी वशती को दोषी ठहराया और तर्क दिया कि उन्होंने न सिर्फ राजा के साथ, बल्कि प्रांतों के गवर्नरों और राज्य के सभी लोगों के साथ भी गलत किया था (पद 16)। इसके अलावा, उसने राजा अहश्वेरोश से कहा कि रानी के बात न मानने की वजह से सभी औरतें अपने पतियों का अनादर करने लगेंगी (वचन 17) और आखिर में उसने राजा से कहा कि "उसका शाही पद किसी ऐसी औरत को दे दिया जाए जो उससे बेहतर हो" (वचन 19)। ये बातें राजा के गुस्से को और भड़काने वाली थीं। गुस्से में अंधे हो चुके राजा अहश्वेरोश ने—इस बात से नाराज़ होकर कि रानी ने फारस के कानूनों के बावजूद उसकी बात नहीं मानी—अपनी पत्नी को हटाने की सलाह मान ली (और इसी तरह एस्तेर बाद में रानी बनी)। उसने एक आदेश जारी किया कि हर पति को "अपने घर का मालिक" होना चाहिए (वचन 22)। यह सचमुच एक बेतुका और तानाशाही भरा काम था: उसने खुद अपनी पत्नी की खूबसूरती को सबके सामने दिखाकर मर्यादा के नियम को तोड़ा था, फिर भी उसने यह आदेश जारी किया कि पतियों को अपने घरों का मालिक होना चाहिए। हम पति भी कितनी बार राजा अहश्वेरोश की तरह अपनी पत्नियों के साथ ऐसी ही गलतियाँ करते हैं?

जो पति अपनी पत्नी से प्यार करता है, उस पर गुस्सा नहीं करता, और शादी के समय लिए गए वचनों को निभाता है—ऐसा ही आदमी बाइबल के अनुसार एक अच्छा पति होता है जो घर में सही अधिकार कायम करता है। ऐसे पतियों के ज़रिए, परमेश्वर हर परिवार को यीशु मसीह की मज़बूत चट्टान पर खड़ा करता है।

दिन 13: “तुम ही हो वो व्यक्ति”

[2 शमूएल 12:7 पर मनन]

“नाथन ने दाऊद से कहा, ‘तुम ही हो वो व्यक्ति’...” (2 शमूएल 12:7)

जब मैं स्वयं को देखता हूँ, तो अक्सर मुझे कई बातें समझ आती हैं, भले ही देर से। बेशक, उनमें से एक है परमेश्वर की कृपा। समय बीतने के बाद ही मुझे परमेश्वर के मार्गदर्शन, सहायता, प्रावधान आदि का एहसास होता है। एक और बात जो मुझे देर से समझ आती है, वह यह है कि मैंने अहंकारपूर्वक बातें की हैं। विशेष रूप से, किसी से बातचीत करने के बाद और बाद में उस विषय पर विचार करने पर, मुझे अक्सर एहसास होता है कि वे बातें मुझ पर भी लागू होती हैं, लेकिन मैं ऐसे बोलता हूँ जैसे किसी और के बारे में बात कर रहा हूँ। उदाहरण के लिए, यह उस बातचीत में स्पष्ट है जो मैंने हाल ही में हुई एक प्रेस्बिटरि बैठक के बाद रात्रिभोज के दौरान कई पादरियों के साथ की थी। जैसे पादरी किसी नए चर्च में शामिल होते समय तबादला पत्र लाते हैं, वैसे ही मैंने भी आत्मविश्वास से(?) यह राय व्यक्त की कि एक चर्च से हमारे चर्च में आने वाले सदस्यों को कम से कम अपने पूर्व पादरी से अनुमति अवश्य लेनी चाहिए। बाद में, जब मैंने आत्मचिंतन किया, तो मुझे एहसास हुआ कि मैंने ऐसा केवल एक बार किया था, फिर भी मैंने उस एक घटना के आधार पर ऐसे बात की जैसे मैं हमेशा से ऐसा करता आया हूँ। इसके अलावा, मुझे अपने कहे पर पछतावा हुआ जब मुझे एहसास हुआ कि मैंने कई पादरियों के सामने इतनी ज़ोर से बोला था कि वे सब सुन सकें कि "आपको ऐसा करना चाहिए, और यही सही तरीका है"—मुझे इस बात का अफ़सोस हुआ कि मैंने बिना सोचे-समझे ही बोल दिया। हालाँकि, ऐसा लगता है कि मैंने अनगिनत बार ऐसा ही बोला है। उन अनगिनत बातों में से, जब भी मुझे अपनी गलती का एहसास थोड़ा देर से होता है, तो मैं गहराई से सोचने की कोशिश करता हूँ और खुद से कहता हूँ कि अगली बार ज़्यादा सावधानी से बोलूँ लेकिन अक्सर मैं वही गलती फिर

से कर बैठता हूँ। 2 शमूएल 12:7 का वह अंश जिससे हम आज परिचित हैं। अपने वफ़ादार सैनिक उरियाह की पत्नी बतशेबा के साथ सोने (11:4) और उसके गर्भवती होने की खबर सुनने (v. 5) के बाद—बिना इस व्यभिचार को पाप माने—दाऊद ने अपनी गलती छिपाने के लिए एक चालाक योजना बनाई। उसने सोचा कि गर्भावस्था का श्रेय उरियाह, यानी उसके पति को दे दिया जाए (पार्क युन-सन)। इस योजना में उरियाह को युद्ध के मैदान से शाही महल में बुलाना, उसे आराम करने के लिए घर भेजना और यहाँ तक कि उसके लिए भोजन की व्यवस्था करना शामिल था (v. 8)। हालाँकि, वफ़ादार सैनिक उरियाह घर नहीं गया; इसके बजाय, वह महल के गेट पर अपने मालिक के सेवकों के साथ सो गया (v. 9)। नतीजतन, दाऊद ने दूसरी चालाक योजना बनाई। उसने उरियाह को बुलाया, उसे अपनी उपस्थिति में तब तक खिलाया-पिलाया जब तक कि वह नशे में धुत न हो गया, और उसका इरादा था कि उसके बाद वह घर चला जाए (v. 13)। दाऊद ने उरियाह को घर भेजने की कोशिश दो बार क्यों की? उसका मकसद यह दिखाना था कि बतशेबा के गर्भ में पल रहा बच्चा विवाहित जोड़े—उरियाह और बतशेबा—के बीच संबंधों से हुआ है, न कि उसके और बतशेबा के मिलन से। चूँकि उस समय DNA परीक्षण नहीं होता था, इसलिए यह पता लगाने का कोई तरीका नहीं था कि बच्चा दाऊद का है या उरियाह का। फिर भी, जैसा कि हम जानते हैं, उरियाह ने एक बार फिर घर जाने से इनकार कर दिया और इसके बजाय अपने मालिक के सेवकों के बीच सोने के लिए लेट गया (v. 13)। आखिरकार, दाऊद ने ऐसी स्थिति पैदा की जिससे युद्ध में उरियाह की मौत हो गई (vv. 14–25)। जब दाऊद को योआब के दूत से खबर मिली कि उरियाह युद्ध में मारा गया है, तो उसने दूत को योआब से यह कहने का निर्देश दिया, "इस मामले से परेशान न हो, क्योंकि तलवार किसी एक को नहीं, बल्कि सबको निगल जाती है..." (v. 25)। वह यह कैसे कह सकता था कि "तलवार किसी एक को नहीं, बल्कि सबको निगल जाती है," जबकि उसने जान-बूझकर और सोच-समझकर अपने ही वफ़ादार सैनिक की हत्या की थी? वह ऐसी बात कैसे कह सकता था जब वही तो मौत का कारण बना था? क्योंकि डेविड का काम प्रभु की नज़र में बुरा था (वचन 27), इसलिए परमेश्वर ने नबी नाथन को भेजा ताकि वे उसे उरियाह की पत्नी को लेने के पाप के लिए फटकार सकें। नाथन ने एक ही शहर में रहने वाले एक अमीर और एक गरीब आदमी की कहानी सुनाई (12:1–4)। उस पल, डेविड गुस्से से भर गया और जीवित प्रभु की कसम खाई कि जिस आदमी ने ऐसा काम किया है, वह मौत का हकदार है (वचन 5)। शायद इसलिए कि उसने अपने पाप को छिपाने की बहुत कोशिश की थी—यहाँ तक कि इस प्रक्रिया में अपनी अंतरात्मा की आवाज़ को भी दबा दिया था—डेविड यह नहीं समझ पाया कि मौत का हकदार *वही* था। तब, नबी नाथन ने सीधे उसे फटकारते हुए कहा,

"वह आदमी तुम ही हो!" (वचन 7)। यह कितनी चौंकाने वाली फटकार थी। डेविड ने निश्चित रूप से खुद को मौत का हकदार नहीं माना था; जब नाथन ने कहा, "वह आदमी तुम ही हो!" तो वह कितना हैरान हुआ होगा! जब हम अपने पापों को पहचान नहीं पाते, और पवित्र परमेश्वर हमारे कामों को वैसा ही दिखाता है जैसे वे असल में हैं, तो क्या हमारी अंतरात्मा नहीं हिल जाती? हम ही मौत के हकदार हैं, फिर भी हम गलती से सोचते हैं कि वह व्यक्ति कोई और है—हम अपने बारे में कितने अनजान हो सकते हैं। उस व्यक्ति के गुस्से पर विचार करें जो अपने पापों से अनजान है और जिसमें आत्म-जागरूकता की कमी है: "जिस आदमी ने यह किया है, वह मौत का हकदार है!" आप इसके बारे में क्या सोचते हैं?

हर मई में, मैं परिवार पर केंद्रित उपदेश देता हूँ। एक बार, परिवार पर उपदेश के दौरान, मंडली के एक सदस्य ने टिप्पणी की, "यह एक ऐसा संदेश है जिसे मेरी पत्नी को वास्तव में सुनने की ज़रूरत है..." मेरा मानना है कि उस समय मेरे संदेश का मुख्य विषय पत्नियों के लिए अपने पतियों के अधीन रहने का निर्देश था। मैं भी अक्सर परमेश्वर का वचन सुनते हुए सोचता हूँ, "काश फलाँ व्यक्ति इसे सुनता," बजाय इसके कि इसे परमेश्वर की आवाज़ के रूप में पहचानूँ जो सीधे *मुझसे* बात कर रही है। परमेश्वर स्पष्ट रूप से मुझसे बात कर रहा था, फिर भी मैंने इसे किसी दूसरे भाई के लिए संदेश के रूप में सुना। ऐसा तब होता है जब पाप को संबोधित करने या फटकारने वाले संदेश दिए जाते हैं; वचन—आत्मा की तलवार—को मेरे अपने दिल में खंजर की तरह चुभना चाहिए, लेकिन इसके बजाय, मैं यह सोचते हुए उपदेश देता और सुनता हूँ कि तलवार दूसरों के लिए है। समस्या क्या है? यह परमेश्वर के पवित्र वचन—जो एक आध्यात्मिक आईने का काम करता है—के सामने खुद को ध्यान से न परखने का नतीजा है। जब हम आत्म-चिंतन और खुद को परखने में लापरवाही बरतते हैं, तो एक ऐसा पल आता है—अक्सर हमें पता भी नहीं चलता—जब हम पाप को पाप मानना छोड़ देते हैं। नतीजतन, यह मानने के बजाय कि "यह *मेरा* पाप है," हम परमेश्वर की आवाज़ को इस सोच के साथ सुनते हैं कि "यह *उस व्यक्ति* का पाप है।" यह कितना घमंड भरा पाप है कि हम परमेश्वर का वचन तो सुनते हैं, लेकिन यह मानते हैं कि कसूरवार कोई और है, जबकि असल में वह पाप *मैंने* ही किया होता है! जब हम इस तरह अपने किए गए पापों को छिपाने की कोशिश करते हैं, तो हम परमेश्वर की उस भरपूर कृपा को भी धुंधला कर देते हैं जो उसने हम पर की है; अपने घमंड में, हम परमेश्वर की उन डांट और सुधार की बातों को सुनने के काबिल नहीं रह जाते जो वह हमसे कह रहा है। ऐसा लगता

है कि जब कोई इस तरह किए गए पाप को छिपाने की कोशिश करता है, तो उसका ज़मीर, कृपा और कान—सब कुछ ढक जाते हैं। मुझे सच में इस तरह नहीं जीना चाहिए...

दिन 14: हम गलत रास्ते पर चल पड़े हैं।

[यशायाह 53:6 पर मनन]

“हम सब भेड़ों की तरह भटक गए हैं; हम सब अपने-अपने रास्ते पर चल पड़े हैं। और प्रभु ने हम सबकी बुराई का बोझ उस पर डाल दिया है” (यशायाह 53:6)।

हम गलत रास्ते पर चल पड़े हैं। हम भटक गए हैं, हर कोई अपने रास्ते पर जा रहा है—गलत नज़रिए, गलत मूल्यों और गलत विचारों के साथ।

हमारा गलत नज़रिया यह है कि हम यीशु की सुंदरता को नहीं देख पाते (पद 2)। दूसरे शब्दों में, हमारा गलत नज़रिया यीशु की सुंदरता को न देख पाना है; वह यीशु, जिसने परमेश्वर पिता की इच्छा पूरी करने के लिए क्रूस पर अपनी मृत्यु तक आज्ञा मानी। हमें यीशु की आज्ञाकारिता आकर्षक नहीं लगती। इसलिए, हम प्रभु की आज्ञा नहीं मानते। और जब हम अपनी नाफ़रमानी के नज़रिए से आज्ञाकारिता को देखते हैं, तो हम आज्ञाकारिता की सुंदरता को नहीं देख पाते। हमारे गलत नज़रिए को उस घटना से आसानी से समझा जा सकता है जब हव्वा ने भले और बुरे के ज्ञान के पेड़ को देखा और उसे वह देखने में अच्छा लगा। साफ़ है कि आज्ञाकारिता के नज़रिए से, भले और बुरे के ज्ञान का पेड़ देखने में अच्छा नहीं लगना चाहिए था; लेकिन हव्वा के नज़रिए से उसे अच्छा लगने (उत्पत्ति 3:6) से हम देख सकते हैं कि उसके दिल में आज्ञाकारिता की सुंदरता के बजाय नाफ़रमानी की बुराई थी। आँखों की लालसा (1 यूहन्ना 2:16) के कारण, उसने आखिरकार परमेश्वर की आज्ञा न मानकर पाप किया। ऐसा गलत नज़रिया गलत काम करने और आँखों की लालसा के कारण परमेश्वर के विरुद्ध पाप करने की ओर ले जाता है।

हम गलत मूल्यों को मानते हैं। वह गलत मूल्य यीशु को महत्व न देना है (पद 3)। हम यीशु को महत्व इसलिए नहीं देते क्योंकि हमें दुख और तकलीफ़ पसंद नहीं हैं। यीशु ने बहुत दुख सहे। दूसरे शब्दों में, यीशु दुख और पीड़ा सहने वाले व्यक्ति थे। वह पीड़ा से अच्छी तरह परिचित थे; वह इसके आदी थे। लेकिन हम पीड़ा के आदी नहीं हैं। क्योंकि हमें दुख और दर्द पसंद नहीं है, इसलिए हम उनसे मुँह मोड़ लेते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि हमें आनंद, खुशी, आराम और आसानी की आदत हो गई है। नतीजतन, हम यीशु का सम्मान नहीं करते; बल्कि, हम उन्हें नापसंद करते हैं और यहाँ तक कि उनसे नफ़रत भी करते हैं। हमारी गलत सोच और मूल्य शरीर की इच्छाओं से प्रेरित होते हैं। जैसे हव्वा ने भले और बुरे के ज्ञान के पेड़ का फल देखा—उसे आँखों को भाने वाला और खाने में अच्छा समझा—वैसे ही हम दुनिया की कई चीज़ों को गलत नज़रिए से देखते हैं; उन्हें आकर्षक और चाहने लायक मानकर हम परमेश्वर की आज्ञाओं को न मानकर पाप करते हैं। इसकी मूल वजह हमारे अंदर की शारीरिक इच्छा है। यह इच्छा हमें हमेशा रहने वाले मूल्यों को छोड़कर क्षणभंगुर चीज़ों को चुनने के लिए उकसाती है। यह हमें असली कीमती चीज़ और मामूली चीज़ के बीच फ़र्क करने से रोकती है। आखिरकार, शरीर की इच्छा हमें ऐसी बेकार चीज़ों को अपनाने के लिए प्रेरित करती है जो आकर्षक और लुभावनी लगती हैं, और इस तरह हम परमेश्वर के विरुद्ध पाप कर बैठते हैं।

हम गलतफहमियाँ पालते हैं (पद 4)। हमारी गलती यह सोचने में है कि यीशु ने इसलिए दुख सहा क्योंकि परमेश्वर उन्हें सज़ा दे रहे थे और मार रहे थे (पद 4), जबकि हम यह नहीं समझ पाते कि उन्होंने असल में *हमारे* अपराधों और पापों के कारण दुख सहा (पद 5)। हालाँकि यीशु ने साफ़ तौर पर हमारे दुख और पीड़ाएँ उठाईं (पद 4) और हमारे पापों के लिए दुख सहा, फिर भी हम गलतफहमी में यह मानते हैं कि वे क्रूस पर—जो एक शापित पेड़ था—इसलिए मरे क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें मंदिर की निंदा करने और खुद को परमेश्वर का पुत्र बताने के अपराध के लिए सज़ा दी थी। और फिर भी, उनका दुख साफ़ तौर पर हमारे अपराधों और पापों के कारण था। हमारी गलत सोच की जड़ अहंकार है। अहंकार हमारी सोच को बिगाड़ देता है; यह हमें यह मानने के लिए प्रेरित करता है कि हम अपनी नज़र में बुद्धिमान हैं। इसीलिए, जब हव्वा ने भले और बुरे के ज्ञान के पेड़ का फल देखा, तो उसने न केवल यह देखा कि वह आँखों को भाने वाला और खाने में अच्छा था, बल्कि यह भी कि वह बुद्धि पाने के लिए चाहने लायक था। प्रेरित यूहन्ना इसे "जीवन का अहंकार" कहते हैं (1 यूहन्ना 2:16)। यह परमेश्वर की ओर से नहीं आता; यह दुनिया से पैदा होता है (2:16)। इस प्रकार, जीवन का अहंकार हमें गलत सोच की ओर ले जाता है और हमसे परमेश्वर के विरुद्ध पाप करवाता है।

जब हम भटक रहे थे—हर कोई अपने पापी रास्ते पर चल रहा था, गलत नज़रिए, मूल्यों और विचारों से प्रेरित होकर—तब परमेश्वर ने हमारे सारे पाप यीशु पर डाल दिए (यशायाह 53:6)। यीशु ने दुख सहा, हम जैसे लोगों के सभी पापों और अपराधों का बोझ उठाया। तो, जब हम प्रभु की इस कृपा को समझते हैं, तो हमें कैसा जीवन जीना चाहिए? हमें सही नज़रिए के साथ विश्वास का जीवन जीना चाहिए। हमें दुनियादारी वाली सोच को छोड़कर परमेश्वर के नज़रिए से जीना चाहिए। हमें यीशु की सुंदरता को अपनाना चाहिए; उनकी आज्ञाकारिता के उदाहरण का पालन करते हुए, हमें भी प्रभु की आज्ञा मानते हुए जीना चाहिए। इसके अलावा, हमें अपने विश्वास में सही मूल्यों को बनाए रखना चाहिए। हमें क्षणभंगुर और खोखले मूल्यों को छोड़कर शाश्वत मूल्यों को अपनाना चाहिए और जो शाश्वत है, उसके लिए लगन से जीना चाहिए। हमें अपने विश्वास में सही सोच भी विकसित करनी चाहिए। हमें अपने दिलों की सावधानी से रक्षा करनी चाहिए ताकि घमंड भरे विचार कभी भी हमारे अंदर जड़ न जमा सकें। हमें बाइबिल के अनुसार सोच अपनाने की कोशिश करनी चाहिए। हमें परमेश्वर के विचारों को जानने की कोशिश करते हुए अपना जीवन जीना चाहिए। इसलिए, जैसे स्वर्ग में प्रभु की इच्छा पूरी होती है, वैसे ही पृथ्वी पर भी हमारे माध्यम से वह पूरी होनी चाहिए।

दिन 15: “जब आप मुसीबत में हों”

[यशायाह 53:7-9 पर मनन]

“उस पर अत्याचार किया गया और उसे सताया गया, फिर भी उसने अपना मुँह नहीं खोला; जैसे वध के लिए ले जाया जा रहा मेमना, और जैसे ऊन काटने वालों के सामने भेड़ चुप रहती है, वैसे ही उसने अपना मुँह नहीं खोला। उस पर अत्याचार किया गया और उसे नीचे गिरा दिया गया; उसकी पीढ़ी में कौन सोच सकता था कि मेरे लोगों के अपराधों के कारण, जो दंड के पात्र थे, उसे जीवितों की भूमि से निकाल दिया जाएगा? उसने कोई हिंसा नहीं की, न ही उसके मुँह में कोई छल था; फिर भी उसकी कब्र दुष्टों के साथ है, उसका दफ़न स्थान धनियों के साथ है” (यशायाह 53:7-9)।

जब आप मुसीबत में होते हैं तो आप क्या करते हैं? मुझे सुसमाचार का भजन “मुसीबत में प्रभु के मुख की ओर देखो” याद आता है: (पद 1) “मुसीबत में प्रभु के मुख की ओर देखो, शांति के प्रभु पर ध्यान दो; इस संसार में कष्ट सहने वाले मित्रों, सांत्वना के प्रभु की ओर देखो,” (पद 2) “जब तुम शक्तिहीन हो और तुम्हारा हृदय दुर्बल हो, तब सामर्थ्य के प्रभु की ओर देखो; वह उन सभी को शक्ति देगा जो उसके नाम का आह्वान करते हैं और सदा उनकी रक्षा करेगा,” (कोरस) “अपनी आँखें प्रभु की ओर उठाओ, अपनी सारी चिंताएँ उसे सौंप दो; जब तुम दुखी हो, तब प्रभु यीशु के मुख की ओर देखो, प्रेम का प्रभु तुम्हें विश्राम देगा।” लेकिन क्या हम सचमुच मुसीबत में प्रभु के मुख की ओर देखते हैं? या, मुसीबत में, क्या हम अपनी कष्टदायक परिस्थितियों को देखते हैं और निराशा, हताशा और पीड़ा के बीच परमेश्वर से नाराज़गी का पाप करते हैं?

आज के पाठ, यशायाह 53:7 को देखें, तो उसमें लिखा है कि यीशु मसीह “दुख और पीड़ा में थे।” बाइबल के आठवें पद में भी लिखा है कि उन्हें पीड़ा और पूछताछ का सामना करना पड़ा। जब हम इस बात पर मनन करते हैं कि यीशु ने पीड़ा और कष्ट सहते हुए कैसी प्रतिक्रिया दी, तो मैं आपको तीन सबक देना चाहूँगा कि जब हम ऐसी ही पीड़ा का सामना करें तो हमें क्या करना चाहिए।

पहला, जब हम संकट में हों, तो हमें चुप रहना चाहिए।

आज के वचन, यशायाह 53:7 को देखिए: “उस पर जुल्म हुआ और उसे सताया गया, फिर भी उसने अपना मुँह नहीं खोला; उसे मेमने की तरह वध के लिए ले जाया गया, और जैसे भेड़ अपने ऊन कतरने वालों के सामने चुप रहती है, वैसे ही उसने अपना मुँह नहीं खोला।” जब यीशु पर जुल्म हुआ और उन्हें सताया गया, तो वे चुप रहे। भविष्यद्वक्ता यशायाह ने इस आयत में “उसने अपना मुँह नहीं खोला” वाक्यांश को दो बार दोहराया है। मसीह कैसे चुप रह पाए—बिना अपना बचाव किए—तब भी जब उन पर अन्यायपूर्ण आरोप लगाए गए? जब हम पर अन्यायपूर्ण आरोप लगाए जाते हैं, तो हमारी स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है कि हम बोलें और अपना बचाव करें। उदाहरण के लिए, यदि हम पर गलत काम का झूठा आरोप लगाया जाता है, तो अदालत में खड़े होकर वकील से अपना बचाव करवाना स्वाभाविक है। फिर भी यीशु, जो पूरी तरह से पाप-रहित थे, ने अपना मुँह नहीं खोला; वध के लिए ले जाए जाने वाले मेमने या ऊन कतरने वालों के सामने चुप रहने वाली भेड़ की तरह, वे चुप रहे (आयत 7)। अपनी पुस्तक *द लाइफ़ ऑफ़ द बिलव्ड* (The Life of the Beloved) में, हेनरी नूवेन ने यह स्पष्ट बात स्वीकार की: “मुझे निंदा के शब्द सुनने से—या यह सुनने से कि मैं बेकार या नाकाफ़ी हूँ—इतना डर लगता है कि मैं जल्दी ही बोलते रहने के प्रलोभन में आ जाता हूँ। मैं अपने डर पर काबू पाने के लिए ऐसा करता हूँ।” जब हम अन्यायपूर्ण आरोपों के कारण दुख सहते हैं, तो हममें भी डर और शिकायत की भावना के कारण बोलते रहने की प्रवृत्ति होती है। फिर भी, यीशु ने अपना मुँह नहीं खोला। उन्होंने मानवीय प्रवृत्ति से परे जाकर काम किया। यह कैसे संभव है? मुझे इसका उत्तर यशायाह 30:15 में मिलता है: “...शांति और भरोसे में ही तुम्हारी ताकत है...” मसीहा—यीशु मसीह—ने अपना मुँह नहीं खोला, ठीक एक चुप मेमने की तरह (53:7)। दुख के समय में, उन्होंने चुपचाप परमेश्वर पिता पर भरोसा किया।

हमें मुसीबत के समय चुप रहना सीखना चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें हेनरी नूवेन के शब्दों पर ध्यान देना चाहिए: “वचन शांति की ओर ले जाता है, और शांति वचन की ओर ले जाती है। वचन शांति में जन्म लेता है, और शांति वचन के प्रति सबसे गहरी प्रतिक्रिया है।” “शांति वचन के प्रति सबसे गहरी प्रतिक्रिया है” वाक्यांश वास्तव में चुनौतीपूर्ण है। यीशु की तरह, जब हम कठिनाई और दुख का सामना करते हैं, तो हमें परमेश्वर के वचन (और उनके वादों) पर चुपचाप भरोसा करते हुए चुप रहना सीखना चाहिए। भले ही हमें बहुत सी आवाज़ें सुनाई दें और बोलने की ज़बरदस्त इच्छा हो, फिर भी मुश्किल समय में हमें चुप रहना चाहिए। उस खामोशी में, हमें परमेश्वर की धीमी, शांत आवाज़ सुननी चाहिए—वही आवाज़ जो पिता परमेश्वर की थी और जिसे यीशु ने सुना था: “तू मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं बहुत प्रसन्न हूँ।” हेनरी नूवेन ने कहा था: “खामोशी में जाना, दुनिया के शोर-शराबे और परेशानी वाली आवाज़ों को दूर करना, और उस धीमी, करीबी आवाज़ को पहचानना आसान नहीं है जो कहती है, ‘तू मेरी प्रिय संतान है, जिससे मैं बहुत प्रसन्न हूँ।’ फिर भी, अगर हम हिम्मत से अकेलेपन को अपनाएँ और खामोशी को अपना साथी बनाएँ, तो हम उस आवाज़ को पहचान सकते हैं।” हमें हिम्मत से अकेलेपन को अपनाना चाहिए और खामोशी को अपना साथी बनाना चाहिए। दूसरी बात, जब हम मुश्किल में हों, तो हमें चिंतन करना चाहिए।

आज के वचन, यशायाह 53:8 को देखें: “अत्याचार और न्याय के द्वारा उसे ले जाया गया, और उसकी पीढ़ी के लोगों में से किसने इस बात पर ध्यान दिया कि उसे जीवितों की धरती से काट दिया गया—मेरे लोगों के पापों के कारण उसे चोट पहुँचाई गई?” हमने पहले ही मसीहा यीशु के दुखों पर मनन किया है। जबकि उनके समय के यहूदी गलतफहमी में थे कि वे इसलिए दुख सह रहे थे क्योंकि परमेश्वर उन्हें सज़ा दे रहा था और चोट पहुँचा रहा था (वचन 4), असल में उन्होंने अत्याचार और न्याय का सामना किया और *हमारे* पापों के कारण मरे—वे पाप जिनके लिए *हम* सज़ा के हकदार थे (वचन 8)। पाप-रहित होने के नाते, यीशु मसीह ने अत्याचार और न्याय सहा और हमारी जगह क्रूस पर मरे, और इस तरह हमारे पापों का प्रायश्चित किया।

हमें इस तरह का चिंतन करना चाहिए। खामोशी के बीच, जब हम यीशु के दुखों और क्रूस पर उनकी मृत्यु पर मनन करते हैं, तो हमें बाइबल के अनुसार सोचने का नज़रिया अपनाना चाहिए। यह तब और भी ज़रूरी हो

जाता है जब हम मुश्किल में हों, क्योंकि ऐसे समय में हमारे सही ढंग से—यानी बाइबल के अनुसार—सोचने में चूकने का खतरा ज़्यादा होता है। हमारा दुख जितना बड़ा होता है, हमें परमेश्वर के वचन और खामोशी में रहकर बाइबल के अनुसार सोचने की उतनी ही ज़्यादा कोशिश करनी चाहिए। जब हम दुख सहते हैं, तो अक्सर चुप रहना मुश्किल होता है और हम आसानी से शिकायत करने या नाराज़ होने लगते हैं। हम भावनाओं को तर्क और समझ पर हावी होने देते हैं, जिससे हमें जल्दी गुस्सा आ जाता है। इसके अलावा, हम अपने विचारों को परमेश्वर के वचन पर केंद्रित करने के बजाय भावनाओं के बहकावे में आकर गलत सोचने का पाप कर बैठते हैं। फिर भी, जब हम दुख में हों, तो हमें परमेश्वर के वचन पर सोचना चाहिए। हमें यीशु के बारे में सोचना चाहिए। अपनी परेशानी में, हमें चुप रहकर यीशु के दुख और उनकी मृत्यु पर गहराई से मनन करना चाहिए।

आखिर में, तीसरी बात: जब हम परेशानी में हों, तो हमें पाप नहीं करना चाहिए। आज के वचन, यशायाह 53:9 को देखें: "उसने कोई हिंसा नहीं की, और न ही उसके मुँह से कोई छल की बात निकली; फिर भी उसकी कब्र दुष्टों के साथ और उसका मकबरा अमीरों के साथ तय किया गया।" परेशानी में हमसे पाप हो जाना आसान है। हम अपने होंठों से परमेश्वर के विरुद्ध पाप कर सकते हैं, और अपने कामों से भी पाप कर सकते हैं। लेकिन, दुख सहते समय यीशु ने कोई पाप नहीं किया। बाइबल कहती है कि दुख सहते समय उनके मुँह से कोई छल की बात नहीं निकली; दर्द में होने पर भी यीशु ने अपने होंठों से कोई पाप नहीं किया। इसके अलावा, यीशु ने कोई हिंसा नहीं की। दुख सहते समय उन्होंने न तो कोई गलत बात कही और न ही कोई गलत काम किया। हमारे यीशु मृत्यु तक निष्पाप रहे। हालाँकि उनकी कब्र दुष्टों के साथ तय की गई थी और उन्हें अरिमतिया के अमीर आदमी यूसुफ की कब्र में दफनाया गया था, फिर भी यीशु ने किसी भी तरह से परमेश्वर के विरुद्ध पाप नहीं किया—न तो अपने होंठों से और न ही अपने कामों से। क्या आपको लगता है कि यह सचमुच संभव है? बाइबल के पात्र अय्यूब को देखकर हम समझ सकते हैं कि यह संभव है। बहुत ज़्यादा दुख और मुश्किलों के बीच भी, अय्यूब ने न तो कोई गलत बात कही और न ही कोई गलत काम किया। चूँकि अय्यूब—जो हमारी ही तरह एक इंसान थे—ऐसा कर पाए, इसलिए हमारे लिए भी ऐसा करना संभव है। अय्यूब 1:22 और 2:10 के बारे में बाइबल कहती है: "इन सब बातों में अय्यूब ने न तो पाप किया और न ही परमेश्वर पर कोई दोष लगाया" (1:22); "उसने जवाब दिया, 'तुम वैसी बातें कर रही हो जैसी कोई मूर्ख औरत करती है। क्या हम परमेश्वर से केवल अच्छी चीज़ें ही स्वीकार करें और मुसीबतें स्वीकार न करें?' इन सब बातों में अय्यूब ने अपने होंठों से कोई पाप नहीं किया" (2:10)। इसके बजाय, परेशानी में होने पर भी अय्यूब ने परमेश्वर की आराधना की (1:20)।

इसलिए, जब हम परेशानी में हों, तब भी हमें परमेश्वर के विरुद्ध पाप नहीं करना चाहिए—न तो अपने होंठों से और न ही अपने कामों से। इसके बजाय, दुख के समय हमें चुप रहना चाहिए। उस शांति में, हमें परमेश्वर पिता की धीमी, कोमल आवाज़ सुननी चाहिए जो कहती है, "तू मेरा प्रिय पुत्र है, जिससे मैं बहुत प्रसन्न हूँ।" हमें चुपचाप परमेश्वर के अनुग्रह के सिंहासन के सामने बने रहना चाहिए और उनके वादे के शब्दों पर ध्यान देना चाहिए। ऐसा करते हुए, दुखद परिस्थितियों में अपनी भावनाओं के बहकावे में आने के बजाय, हमें परमेश्वर के वचन से मार्गदर्शन लेना चाहिए। हमें अपनी मुश्किल स्थितियों को बाइबल के नज़रिए से देखना चाहिए। सबसे बढ़कर, हमें यीशु पर अपनी नज़र टिकाकर अपनी मुश्किलों पर जीत हासिल करनी चाहिए, जिन्होंने खुद दुख सहा था। जीत!

दिन 16: “जब मेरा मन थक जाता है”

[भजन संहिता 61 पर मनन]

हाल ही में, मैं रेवरेंड डी.एम. लॉयड-जोन्स की लिखी किताब “द क्रिश्चियन वॉरफेयर” (मसीही युद्ध) पढ़ रहा हूँ। इस किताब को पढ़ने की प्रेरणा मुझे एक साथी सहकर्मी के साथ अय्यूब की कहानी और शैतान की ताकतों के बारे में हुई बातचीत से मिली; इससे आध्यात्मिक युद्ध के बारे में और जानने की मेरी दिलचस्पी और ज़रूरत बढ़ गई। इस किताब में, लेखक रेवरेंड लॉयड-जोन्स अय्यूब की किताब पर चर्चा करते हैं और बताते हैं कि शैतान की चालों में से एक यह है कि उसके पास कुछ हद तक प्रकृति पर भी हावी होने की शक्ति है। उदाहरण के लिए, जब शैतान ने परमेश्वर की अनुमति से अय्यूब पर हमला करना शुरू किया, तो अय्यूब का एक नौकर उसके पास आया और बताया कि उसके बैल और गधे छीन लिए गए हैं और उसके पहरेदारों को मार डाला गया है। जब वह बात कर ही रहा था, तभी एक और आदमी आया और अय्यूब से कहा: “...परमेश्वर की आग—यानी बिजली—आकाश से गिरी और भेड़ों और नौकर को जलाकर राख कर दिया। मैं अकेला ही बच पाया, इसलिए आपको बताने आया हूँ, मालिक” (अय्यूब 1:16)। इससे हमें साफ पता चलता है कि बिजली गिराना और बिजली से तबाही मचाना शैतान के अधिकार और शक्ति के दायरे में आता है। इतनी अद्भुत शक्ति रखने वाला शैतान सबसे ज़्यादा दिलचस्पी इस बात में रखता है कि वह चालाकी और डरावनी ताकत से इंसान के सबसे बड़े तोहफ़े—यानी मन—पर ज़ोरदार हमला करे। खास तौर पर, शैतान अलग-अलग चालों से हमारे मन पर हमला करता है, जिनमें से एक है डर की भावना से हमें दबाने की कोशिश करना। प्रेरित पतरस के बारे में सोचिए, जिसने कहा था कि भले ही बाकी सब प्रभु को छोड़ दें, वह कभी नहीं छोड़ेगा; फिर भी, आखिर में उसने तीन बार प्रभु को नकार दिया और कहा कि वह उन्हें बिल्कुल नहीं जानता। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि शैतान—जो घोर आतंक फैलाने वाली शक्ति है—ने उसके मन में अपनी जान खोने का ऐसा डर भर दिया कि वह सुन्न हो

गया। डॉ. मार्टिन लॉयड-जोन्स ने आज की कलीसिया के बारे में एक गंभीर बात कही: “कलीसिया को सुन्न कर दिया गया है; वह बेसुध और गहरी नींद में सो गई है, और उस संघर्ष [आध्यात्मिक युद्ध] से पूरी तरह अनजान है।”

शैतान, जो लगातार जाल और फंदे बिछा रहा है, आज कलीसिया के भीतर सफल होता दिख रहा है। निराशा, हताशा, हार की भावना और घोर निराशा अक्सर शैतान के कामों का नतीजा होती हैं। हममें से कितने ईसाई निराशा, हताशा और हार की भावना के बोझ तले दबे हुए जीवन जीते हैं? हममें से कितने लोग निराशा के साये में जी रहे हैं? हमें प्रभु यीशु की शक्ति पर भरोसा करके शैतान के खिलाफ इस आध्यात्मिक लड़ाई में लड़ना और जीतना है, जिन्होंने पहले ही जीत हासिल कर ली है। हमें अपनी जीत का भरोसा रखते हुए एक योद्धा ईसाई का जीवन जीना चाहिए। हमें आध्यात्मिक युद्ध में शामिल होना चाहिए। आज का हमारा पाठ, भजन संहिता 61, इसका एक उदाहरण देता है। आयत 2 को देखें। भजनकार दाऊद उस समय की बात करते हैं “जब मेरा मन व्याकुल हो जाता है।” यहाँ “व्याकुल” (overwhelmed) शब्द का अर्थ है “खुद में सिमट जाना” या घिर जाना। यह थकान और निराशा की उस स्थिति को बताता है जो तरह-तरह की परेशानियों और चिंताओं से घिरे होने के कारण पैदा होती है (पार्क युन-सन)। दाऊद अपने दुश्मनों के सताए जाने के कारण निराशा में डूब रहे थे। आइए हम चार बातें सीखें कि जब शैतान की बुरी ताकतों से हमारा मन भी इसी तरह व्याकुल हो जाए, तो हम कैसे लड़ सकते हैं और जीत सकते हैं। पहली बात, जब हमारा मन बोझ से दबा हो, तो हमें परमेश्वर से पुकार करनी चाहिए।

आज का पाठ, भजन संहिता 61:1 देखें: “हे परमेश्वर, मेरी पुकार सुन; मेरी प्रार्थना पर ध्यान दे।” मुझे बुधवार की एक प्रार्थना सभा याद है, जहाँ भजन संहिता 42 पर मनन करते हुए हमें यह चुनौती दी गई थी कि हम जीवन की हताशा और निराशा को परमेश्वर के लिए तड़पने के अवसर में बदलें। जब जीवन की विभिन्न मुश्किलों और दुखों के कारण हमारा मन चिंतित, हताश या निराश हो, तो हमें परमेश्वर से वैसे ही पुकार करनी चाहिए जैसे दाऊद ने इस भाग में की थी। और जब हम पुकारते हैं, तो हमें अपनी प्रार्थनाएँ करते समय इस सच्चाई को ध्यान में रखना चाहिए कि परमेश्वर हमसे कहीं ज़्यादा हमें पाने के लिए तड़पते हैं। फिर भी, किसी कारण से, जब हम गहरी परेशानी और तकलीफ में होते हैं, तो हम अक्सर यह भूल जाते हैं कि परमेश्वर हमसे मिलने के लिए तड़प रहे हैं। शायद इसीलिए दाऊद ने आज के भजन में “पृथ्वी के छोर” से प्रभु को पुकारा, जब उनका मन व्याकुल

था। दाऊद ने "पृथ्वी के छोर" की बात क्यों की? ऐसा इसलिए था क्योंकि घोर निराशा की हालत में उसे लगा कि परमेश्वर ने उसे छोड़ दिया है। दूसरे शब्दों में, उसने धरती के छोर से पुकार लगाई क्योंकि उसे लगा कि वह परमेश्वर से बहुत दूर हो गया है। ऐसी भावनाओं के बावजूद, दाऊद ने हार नहीं मानी और न ही निराशा के आगे घुटने टेके। इसके बजाय, उसने परमेश्वर से पुकार लगाई, "मुझे उस चट्टान तक ले चल जो मुझसे ऊँची है।" निराशा की गहराइयों में भी, दाऊद ने अपनी नज़रें खुद से ऊँची चट्टान पर टिकाए रखीं और परमेश्वर को पुकारा। हमें ऐसे विश्वास की ज़रूरत है जो कहे, "फिर भी।" दूसरे शब्दों में, दाऊद की तरह, जब हम गहरी निराशा में डूबे हों, तब भी हमें परमेश्वर की चाहत रखनी चाहिए। हमें प्रभु को पुकारना चाहिए। नबी योना की तरह, जिन्होंने समुद्र की गहराइयों से कहा था, "मैं तेरी नज़रों से दूर कर दिया गया हूँ, फिर भी मैं तेरे पवित्र मंदिर की ओर फिर से देखूँगा" (योना 2:4), हमें भी प्रभु को पुकारना चाहिए, चाहे हालात कैसे भी हों या हमारा दिल कितना भी भारी क्यों न हो।

दूसरी बात, जब हमारा दिल भारी हो, तो हमें प्रभु की शरण लेनी चाहिए।

आज के वचन, भजन संहिता 61:4 को देखें: "मैं हमेशा तेरे तंबू में रहना चाहता हूँ और तेरे पंखों की छाया में शरण लेना चाहता हूँ (सेला)।" निराशा के बीच हम जो कर सकते हैं, वह है परमेश्वर पिता को पुकारना और उनकी शरण लेना। कारण यह है कि केवल परमेश्वर ही हमारे रक्षक हैं। इसलिए, जब दाऊद को परमेश्वर से दूरी का एहसास हुआ और वह बोझ महसूस करने लगा, तो उसने उनसे विनती की और स्वीकार किया कि परमेश्वर असल में कौन हैं: "तू मेरी शरणस्थान है, दुश्मन के खिलाफ एक मज़बूत बुर्ज है" (वचन 3)। इतनी गहरी निराशा और परमेश्वर से अलग होने के एहसास के बीच दाऊद यह कैसे कह सका कि परमेश्वर उसकी शरणस्थान और मज़बूत बुर्ज हैं? मुझे इसका जवाब आज के वचन के 7वें पद के आखिरी हिस्से में मिला: "... 'उसकी रक्षा के लिए दया और सच्चाई को नियुक्त कर।'" डेविड यह मान पाए कि परमेश्वर ही उनकी शरण और एक मज़बूत गढ़ हैं, क्योंकि जब उनका मन भारी था, तब परमेश्वर ने उनके लिए अपनी दया और सच्चाई तैयार की थी। इस तरह, अपनी परेशानी की हालत में भी, डेविड परमेश्वर की दया और सच्चाई से सुरक्षित थे; इसीलिए उन्होंने प्रार्थनाओं के ज़रिए प्रभु की शरण ली। यहाँ हमें यह सीख मिलती है कि जब हमारा मन भारी और परेशान हो, तब भी हमें परमेश्वर की दया और सच्चाई को मज़बूती से थामे रखना चाहिए और कभी नहीं छोड़ना चाहिए। दूसरे शब्दों में, हमें विश्वास के साथ प्रभु के पास जाना चाहिए, यह भरोसा रखते हुए कि जो परमेश्वर हमसे बिना

शर्त प्यार करते हैं, उन्होंने हमारी मुक्ति का वादा किया है (या तय किया है) और वे सच्चाई से उस वादे को पूरा करेंगे (पार्क युन-सन)।

जीवन की निराशा के बीच भी, हमें परमेश्वर के अनंत प्रेम (दया) और सच्चाई को थामे रखना चाहिए। हमें इस उम्मीद से आगे बढ़ना चाहिए कि हम हमेशा परमेश्वर के निवास स्थान में रहेंगे (पद 4)। निराशा के पलों में, हमें परमेश्वर के अनंत निवास स्थान की ओर देखना चाहिए।

तीसरी बात, जब हमारा मन भारी हो, तो हमें उस कृपा को याद करना चाहिए जो परमेश्वर ने अतीत में हम पर की है।

आज के वचन, भजन संहिता 61:5 को देखें: "क्योंकि हे परमेश्वर, तूने मेरी मन्त्रों को सुना है; तूने मुझे उनकी विरासत दी है जो तेरे नाम का भय मानते हैं।" यह उस समय की बात है जब इज़राइल का शासन कुछ समय के लिए अबशालोम के बुरे गुट के हाथ में चला गया था, लेकिन फिर दाऊद के हाथों में वापस आ गया (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में, दाऊद को वह कृपा याद आई जिससे परमेश्वर ने उसे अतीत में उसके बेटे अबशालोम के विद्रोह से बचाया था (पार्क युन-सन)। जब उसका मन दुश्मनों से घिरा हुआ था (पद 3), तो दाऊद ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि उसने परमेश्वर के लिए क्या किया था, बल्कि इस बात पर ध्यान दिया कि परमेश्वर ने अतीत में उसके लिए क्या किया था। ऐसा करना हमारी स्वाभाविक प्रवृत्ति नहीं है। इसके बजाय, जब हमारा मन भारी होता है और हम परमेश्वर को पुकारते हैं, तो हमारी प्रवृत्ति अपने ही कामों या गुणों को सामने लाने की होती है। इसका एक मुख्य उदाहरण एलिय्याह है, जिसका वर्णन 1 राजा 19 में मिलता है। ईज़बेल की धमकी से डरकर एलिय्याह जंगल में भाग गया। बाद में, एक स्वर्गदूत द्वारा सेवा और भोजन मिलने और होरेब पर्वत पर पहुँचने के बाद, परमेश्वर ने उससे पूछा, "एलिय्याह, तुम यहाँ क्या कर रहे हो?" (पद 9 और 13)। जवाब में, एलिय्याह ने परमेश्वर से शिकायत की और परमेश्वर के लिए किए गए अपने कामों—या गुणों—पर ज़ोर देते हुए कहा, "मैं सर्वशक्तिमान प्रभु परमेश्वर के लिए बहुत जोशीला रहा हूँ" (पद 10 और 14)।

मेरा मानना है कि हमारी एक समस्या यह है कि हम उन बातों को नहीं भूल पाते जिन्हें भूल जाना चाहिए, जबकि उन बातों को भूल जाते हैं जिन्हें याद रखना चाहिए। दूसरे शब्दों में, बाइबल हमें बताती है कि परमेश्वर न केवल हमारे उन पापों को क्षमा करते हैं जिनके लिए हमने पश्चाताप किया है, बल्कि उन्हें याद भी नहीं रखते; फिर भी,

हम अक्सर उन्हीं पापों के बारे में सोचते रहते हैं और बार-बार उन्हें याद करते हैं। इसके विपरीत, हम बहुत जल्दी उस कृपा को भूल जाते हैं जो परमेश्वर ने अतीत में हमारे जीवन पर की है—वह कृपा जिसे हमें याद रखना चाहिए। आज के भाग, भजन संहिता 61 में दाऊद की तरह, हमें भी उस कृपा को याद रखना चाहिए जो परमेश्वर ने हमारे पूरे जीवन में हम पर दिखाई है। खासकर जब हमारा मन भारी हो, तो हमें अपने जीवन पर पीछे मुड़कर देखना चाहिए और उस बचाने वाली कृपा को याद करना चाहिए जो परमेश्वर ने हर मुश्किल घड़ी में हमें दी है। ऐसा करते हुए, हमें विश्वास के साथ अपनी वर्तमान कठिन परिस्थितियों का सामना करना चाहिए। जब हमारा मन भारी हो, तो परमेश्वर की पिछली कृपा की याद हमारी निराशा को आशा और उम्मीद में बदल देनी चाहिए।

चौथी और आखिरी बात, जब हमारा मन भारी हो, तो हमें परमेश्वर के अनंत राज्य की चाहत रखनी चाहिए।

आज के भाग में भजन संहिता 61:7 को देखें: "वह सदा परमेश्वर के सम्मुख बना रहे; उसकी रक्षा के लिए अटूट प्रेम और सच्चाई को नियुक्त कर!" दाऊद ने परमेश्वर से विनती की कि वह उसे राजा के रूप में लंबा जीवन दें और उसके वर्षों को कई पीढ़ियों तक बढ़ाएं (पद 6)। वह परमेश्वर से—जो जीवन, मृत्यु और भाग्य को पूरी तरह नियंत्रित करते हैं—अपने जीवन को बढ़ाने के लिए कह रहा था। संक्षेप में, दाऊद ने लंबी उम्र के आशीर्वाद के लिए प्रार्थना की। इसके अलावा, उसने परमेश्वर की उपस्थिति में हमेशा रहने की प्रार्थना की। ज़रा सोचिए। दाऊद निराशा में था, दुश्मनों के कारण उसका मन भारी था; फिर भी, उस स्थिति में भी उसने परमेश्वर की ओर देखा, उनमें शरण ली, और उनकी दी हुई कृपा को याद किया। क्षणिक निराशा के बीच, उसने परमेश्वर की उपस्थिति में हमेशा रहने की इच्छा की। हमें भी दाऊद के उदाहरण का पालन करना चाहिए और परमेश्वर के साथ हमेशा रहने की प्रार्थना करनी चाहिए, भले ही हम क्षणिक निराशा का सामना कर रहे हों। विशेष रूप से, परमेश्वर के राज्य के नागरिकों के रूप में, हमें उस राज्य में हमेशा रहने की प्रार्थना करनी चाहिए जहाँ प्रभु—राजाओं का राजा—हमेशा राज्य करते हैं। ऐसी प्रार्थना करते समय, हमें वह प्रार्थना भी करनी चाहिए जो प्रभु ने हमें सिखाई है: "तेरा राज्य आए।" इसके अलावा, जब यीशु कहते हैं, "जो इन बातों की गवाही देता है, वह कहता है, 'हाँ, मैं जल्द ही आ रहा हूँ,'" तो हमें प्रेरित यूहन्ना की तरह जवाब देना चाहिए: "आमीन। आइए, प्रभु यीशु" (प्रकाशितवाक्य 22:20)।

जब दाऊद का मन भारी था, तो उसने परमेश्वर को पुकारा और उसमें शरण ली; परमेश्वर की पिछली कृपा को याद करते हुए, उसने परमेश्वर के अनंत राज्य की इच्छा की। उसने संकल्प किया कि यदि परमेश्वर उसकी प्रार्थना का उत्तर देते हैं—उसे मार्गदर्शन देते हैं, उसकी रक्षा करते हैं और उसे बचाते हैं ताकि वह हमेशा उनकी उपस्थिति में रह सके—तो वह इस प्रकार प्रतिक्रिया देगा: "इसलिए मैं हमेशा आपके नाम की स्तुति करूँगा और दिन-प्रतिदिन अपनी मन्त्रों को पूरा करूँगा" (पद 8)। दाऊद की तरह, जब हमारे मन भारी हों, तो हमें परमेश्वर को पुकारना चाहिए और प्रभु में शरण लेनी चाहिए, जो हमारी शरण और मज़बूत गढ़ हैं। फिर, प्रभु द्वारा हमें अतीत में दिखाई गई कृपा को याद करते हुए, हमें हमेशा परमेश्वर की उपस्थिति में रहने की आशा रखनी चाहिए।

दिन 17: संकट प्रबंधन

[नहेमायाह 4:7-14 पर चिंतन]

मुझे *कोरिया टाइम्स* में ली चुल का लिखा एक कॉलम याद है जो अमेरिकी अर्थव्यवस्था के बारे में था। खराब निवेश के कारण इन्वेस्टमेंट बैंकों को डूबते हुए देखकर, उन्होंने समस्या का कारण इस तरह बताया: "इतने निडर हो गए थे कि उन्होंने सीधे फंड जुटाए और रियल एस्टेट निवेश में भी हाथ आजमाया; सबप्राइम मॉर्गेंज संकट इसी का नतीजा था।" ज़्यादा मुनाफ़े के साथ हमेशा ज़्यादा जोखिम भी होता है, लेकिन मैनेजमेंट को यह पता था; फिर भी, वे लालच से खुद को रोक नहीं पाए क्योंकि मुनाफ़ा बहुत ज़्यादा हो रहा था। उनकी बातों में एक बात मुझे बहुत अच्छी लगी: "व्यक्तिगत मुनाफ़े की चाहत ही पूंजीवाद को आगे बढ़ाती है। लेकिन, मुनाफ़ा बढ़ाने की होड़ में इंसान लालच में अंधा हो जाता है, और जोखिम प्रबंधन प्रणाली काम करना बंद कर देती है।" यह बात कि लालच में अंधे होने पर जोखिम प्रबंधन प्रणाली काम नहीं करती, मुझे सच में बहुत सही लगी। अगर ज़्यादा मुनाफ़े के साथ ज़्यादा जोखिम होता है, तो जोखिम प्रबंधन प्रणाली को भी उतने ही अच्छे से काम करना चाहिए; लेकिन, लालच ने उन्हें अंधा कर दिया। इसलिए, मैं मिस्टर ली चुल की इस बात से सहमत हूँ कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था इतनी मुश्किल में इसलिए फंसी है क्योंकि जोखिम प्रबंधन प्रणाली, जिसे ऊंचे स्तर पर काम करना चाहिए था, वह काम नहीं कर रही है।

ऐसा लगता है कि अमेरिकी अर्थव्यवस्था वाकई मुश्किल दौर से गुज़र रही है। आज CNN की ऑनलाइन ख़बरों में बताया गया है कि खराब आर्थिक हालात की वजह से दस में से आठ अमेरिकी तनाव महसूस कर रहे हैं। सचमुच, कल सोमवार को एक घटना की ख़बर आई जिसमें आर्थिक तंगी के कारण एक 45 वर्षीय व्यक्ति, जो परिवार का मुखिया था, ने अपनी सास, पत्नी और तीन बेटों की गोली मारकर हत्या कर दी और फिर खुदकुशी कर ली। यह वाकई चौंकाने वाली स्थिति है। जैसे-जैसे आर्थिक हालात खराब हो रहे हैं और तनाव बढ़ रहा है, हम देख रहे हैं कि ज़िंदगी के संकटों का सामना कर रहे लोग चरम कदम उठा रहे हैं। तो फिर, ऐसे आर्थिक

संकट से हम कैसे निपटें? हमें अतीत की ओर देखना चाहिए और सीखना चाहिए कि पहले के आर्थिक संकटों से कैसे निपटा गया था। इसका एक बेहतरीन उदाहरण वह स्थिति है जिसका सामना राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूज़वेल्ट ने 4 मार्च, 1933 को पदभार संभालने के समय किया था। उस समय, अमेरिका एक अभूतपूर्व आर्थिक संकट की चपेट में था; 1.5 करोड़ लोग बेरोज़गार थे, बैंक समेत कई वित्तीय संस्थान एक के बाद एक ढह रहे थे, और पूरे देश में ज़बरदस्त डर का माहौल था। राष्ट्रपति रूज़वेल्ट ने इस संकट की असली जड़ डर से पैदा होने वाली लगातार चिंता और हार मानने की सोच को माना; उन्होंने समझा कि अगर मंदी को हराना है, तो किसी खास आर्थिक नीति से ज़्यादा ज़रूरी लोगों का भरोसा बहाल करना है। इसलिए, उन्होंने उस बुरे चक्र को तोड़ने की कोशिश की जिसमें संकट की भावना से नया संकट पैदा होता है, और फिर वह संकट उस भावना को और बढ़ा देता है।

हमारी अपनी ज़िंदगी में भी, हम अक्सर संकटों की वजह से मुश्किल दौर से गुज़रते हैं, और कभी-कभी संकट के बारे में सोचने का हमारा नज़रिया ही और संकटों को जन्म देता है। इसकी वजह क्या है? एक वजह है संकट को ठीक से न संभाल पाना। हम सभी ने शायद अपनी ज़िंदगी में कम से कम एक बार किसी संकट का सामना किया होगा; अगर हम उन पुराने संकटों को ठीक से संभालना नहीं सीख पाए, तो हम भविष्य के संकटों का सामना करने के लिए तैयार नहीं होंगे, और हमें भारी तकलीफ़ और मुश्किलों का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए, हमें ज़िंदगी में आने वाली अप्रत्याशित चुनौतियों के ज़रिए संकट को संभालना सीखना चाहिए। खास तौर पर, आज के हिस्से—नहेमायाह 4:7-14—पर ध्यान देते हुए, मैं उन चार संकटों पर बात करना चाहता हूँ जिनका सामना नहेमायाह और यहूदा के लोगों ने किया, उन तीन तरीकों पर विचार करना चाहता हूँ जिनसे उन्होंने उन पर काबू पाया, और संकट प्रबंधन के बारे में सीख लेना चाहता हूँ। मेरी प्रार्थना है कि हम इन सीखों को अपनी ज़िंदगी में अपनाएँ ताकि हम भी आने वाले संकटों को सफलतापूर्वक पार कर सकें।

संकट प्रबंधन में पहली सीख है—मिलकर प्रार्थना करना।

नहेमायाह ने जिन चार संकटों का सामना किया—और जिन्हें उन्होंने बहुत गहराई से महसूस किया—वे थे: दुश्मनों की बढ़ती संख्या, उनके मिले-जुले सशस्त्र हमले, और यहूदा के लोगों में छाई निराशा और डर। उन्होंने परमेश्वर से प्रार्थना करके इन संकटों का सामना किया। आज के हिस्से में नहेमायाह 4:9 को देखिए: "(लेकिन)

हमने अपने परमेश्वर से प्रार्थना की..." नहेमायाह ने तब भी परमेश्वर से प्रार्थना की जब वे चारों तरफ़—उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम—से दुश्मनों से घिरे हुए थे। निर्गमन 14:3 में बताया गया है कि कैसे, मिस्र से निकलने के बाद, इस्राएली "रेगिस्तान से घिर गए थे।" उस समय, इस्राएलियों ने अपने आस-पास के हालात देखे, निराश हुए और मूसा से शिकायत की। लेकिन मूसा ने ऊपर की ओर देखा और परमेश्वर से विनती की (पद 15)। संकट के समय कैसे काम करें, इसका यह पहला सबक है जो हमें सीखना चाहिए।

जॉर्ज मुलर, जिनके बारे में कहा जाता है कि उन्हें 5,000 प्रार्थनाओं का जवाब मिला था, ने एक बार कहा था: "जिसने घुटनों के बल झुककर जीवन की लड़ाइयाँ लड़ना नहीं सीखा, वह अभी तक ईसाई धर्म की बुनियादी बातें (ABC) नहीं जानता है।" क्या हम सच में ईसाई धर्म की बुनियादी बातें जानते हैं? जब हम जीवन में अचानक मुश्किलों और परेशानियों का सामना करते हैं, तो क्या हम सच में संकट, डर, बेचैनी और चिंता की भावना से घुटनों के बल झुककर लड़ते हैं? क्या हम सच में परमेश्वर से पुकारकर अपने जीवन के संकटों से पार पाते हैं? या, मिस्र से निकलते समय इस्राएलियों की तरह—जो लाल सागर के सामने चारों तरफ से घिर गए थे—क्या हम निराशा में ज़मीन की ओर देखते हैं और शिकायत करते हैं? मूसा की तरह, हमें संकट के ऐसे समय में भी ऊपर की ओर देखना चाहिए। हमें उद्धार देने वाले परमेश्वर की ओर देखना चाहिए। और हमें पूरे विश्वास के साथ परमेश्वर से विनती करनी चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम परमेश्वर के उद्धार का अनुभव करते हैं। संकट का सामना करते समय चर्च समुदाय का एक साथ प्रार्थना करना बहुत ज़रूरी है। बेशक, व्यक्तिगत प्रार्थना भी ज़रूरी है। हालाँकि, जब पूरा चर्च एक मन और एक मकसद से परमेश्वर से पूरी लगन से प्रार्थना करने के लिए इकट्ठा होता है, तो हम उस संकट के बीच उसके उद्धार की कृपा का अनुभव करते हैं; इसलिए, हमें एक मन और एक मकसद के साथ इकट्ठा होकर परमेश्वर को पुकारना चाहिए। चारों तरफ से घिरे होने पर भी, हमें अपने जीवन में परमेश्वर के बचाने वाले काम का अनुभव करना चाहिए—वही परमेश्वर जिसने लाल सागर को सूखी ज़मीन में बदल दिया था, जिससे इस्राएली पैदल पार कर सके। हमारा परमेश्वर हमारे लिए उद्धार का रास्ता खोलेगा। ठीक वैसे ही जैसे उसने पौलुस और सीलास के लिए किया था, जिन्होंने प्रार्थना की और स्तुति के गीत गाए (प्रेरितों के काम 16), परमेश्वर हमारी प्रार्थनाएँ सुनेगा और हमें उद्धार की कृपा देगा। मैं प्रार्थना करता हूँ कि चाहे हम किसी भी संकट का सामना करें, हम सब मिलकर प्रार्थना करके परमेश्वर के बचाने वाले काम का अनुभव कर सकें।

संकट के समय कैसे काम करें, इसका दूसरा सबक है पहरदारों को तैनात करना।

जब संकट आया, तो नहेमायाह ने पहरदारों को तैनात किया। नहेमायाह 4:9 देखें, जो आज का हिस्सा है: "...हमने पहरदार तैनात किए और उनसे बचाव के लिए दिन-रात पहरा दिया।" उस समय, नहेमायाह ने हमलावरों को रोकने के लिए पहरदार तैनात किए। उसने उन्हें कहाँ तैनात किया? उसने उन्हें शहर की दीवार पर ऐसी जगहों पर तैनात किया जो आसानी से दिखती थीं और जहाँ हमला होने का खतरा ज़्यादा था। आयत 13 देखिए: "मैंने कुछ लोगों को दीवार के सबसे निचले और खुले हिस्सों पर तैनात किया; उन्हें उनके परिवारों के हिसाब से तलवारों, भालों और धनुषों के साथ खड़ा किया।" ऐसा इसलिए किया गया ताकि हमलावरों को पता चल सके कि यहूदी लड़ाई के लिए तैयार हैं। नहेमायाह ने पहरदारों को परिवारों के समूहों में व्यवस्थित किया क्योंकि वह जानता था कि परिवार के तौर पर एक साथ मज़बूती से खड़े रहने पर वे एक-दूसरे का हौसला बढ़ा सकेंगे और एक-दूसरे का साथ दे सकेंगे। यहूदा के लोगों ने न केवल अपने घरों के पास की दीवार के हिस्सों की मरम्मत की (नहेमायाह 3:28-30), बल्कि अपने परिवारों के साथ मिलकर पहरा भी दिया और अपने घरों व शहर की रक्षा की।

भगवान से प्रार्थना करते समय नहेमायाह ने अपनी ज़िम्मेदारियों को नज़रअंदाज़ नहीं किया; एक प्रार्थना करने वाले व्यक्ति के तौर पर उन्होंने अपनी ज़िम्मेदारियों को पूरी लगन से निभाया। संकट के समय, उन्होंने न केवल यहूदा के लोगों के साथ मिलकर भगवान से प्रार्थना की, बल्कि व्यावहारिक कदम भी उठाए। उन्होंने यरूशलेम की दीवारों पर पहरदार तैनात किए ताकि हमला करने की धमकी देने वाले कई दुश्मनों से रक्षा की जा सके। उन्होंने इन पहरदारों को उनके परिवारों के आधार पर ऐसी जगहों पर तैनात किया जो साफ़ दिखाई देती थीं और जहाँ खतरा ज़्यादा था। इसी तरह, जब हम किसी संकट का सामना करते हैं, तो हमें भी पहरदार तैनात करने चाहिए। खासकर, हमें अपनी आँखों, कानों और दिलों पर व्यक्तिगत रूप से पहरदार तैनात करने चाहिए। हमें अपनी आँखों के लिए पहरदारों की ज़रूरत है क्योंकि उनके बिना, हम संकट को केवल शारीरिक नज़रिए से देख सकते हैं, जिससे हम डर से कांपने लग सकते हैं। हमें अपने कानों के लिए भी पहरदारों की ज़रूरत है ताकि संकट के समय सुनी जाने वाली खबरों को छाँटा जा सके; निराशा और हताशा पैदा करने वाली खबरों को रोककर, हम उथल-पुथल के बीच भगवान की धीमी, शांत आवाज़ को बेहतर ढंग से सुन सकते हैं। सबसे बढ़कर, हमें अपने दिलों पर पहरदार तैनात करने चाहिए—जो जीवन का स्रोत हैं। हमें अपने दिलों की

पूरी लगन से रक्षा करनी चाहिए और अविश्वास और डगमगाते भरोसे के प्रति सतर्क रहना चाहिए जो संकट के कारण पैदा हो सकते हैं। इसके बजाय, संकट के समय हमें अपने दिलों को उद्धार के भरोसे से भरना चाहिए। भगवान का वचन हमारे दिलों का पहरेदार होना चाहिए। इसलिए, संकट या अपने ही प्रतिक्रियाशील विचारों और भावनाओं से प्रभावित होने के बजाय, हमें केवल भगवान के वादों से निर्देशित होना चाहिए। हम सब विश्वास और धैर्य के साथ बने रहें और भगवान के बचाने वाले काम का अनुभव करें क्योंकि वे हमें हमारे संकटों से बाहर निकालते हैं।

संकट प्रबंधन में तीसरा सबक यह है कि हम भगवान पर पूरा भरोसा रखें। यरूशलेम की दीवारों को फिर से बनाते समय, नहेमायाह को दुश्मनों के कारण संकटों का सामना करना पड़ा; इस पूरे समय, उन्होंने लगातार यहूदा के लोगों को भगवान पर पूरा भरोसा रखने और आत्मविश्वास रखने के लिए प्रेरित किया। आज के हिस्से की 14वीं आयत को देखिए: “सब कुछ देखने के बाद, मैं खड़ा हुआ और रईसों, अधिकारियों और बाकी लोगों से कहा, ‘उनसे डरो मत। उस प्रभु को याद रखो जो महान और अद्भुत है, और अपने परिवारों, अपने बेटों और बेटियों, अपनी पत्नियों और अपने घरों के लिए लड़ो।’” यहाँ जो बात मायने रखती है, वह है एक नेता के तौर पर नहेमायाह का विश्वास, पक्का यकीन और आत्मविश्वास। क्या होता अगर नेता यहूदा के लोगों के सामने कमज़ोर विश्वास, अनिश्चितता या आत्मविश्वास की कमी दिखाता—जबकि वे लोग पहले से ही निराश थे और दुश्मनों के डर से कांप रहे थे? नहेमायाह का दिल उस परमेश्वर के प्रति समर्पित था जो महान और अद्भुत है (1:15; 4:14)। उसे यकीन था कि क्योंकि परमेश्वर शक्तिशाली है, इसलिए वह यहूदा के लोगों को संकट से बचाने में पूरी तरह सक्षम है। इसी विश्वास और पक्के यकीन के साथ, नहेमायाह ने निराश और डरे हुए लोगों को लगातार परमेश्वर पर पूरा भरोसा करने के लिए प्रेरित किया।

मुझे एक किताब में पढ़ी हुई यह बात याद आती है, “अविश्वास समस्याओं को बड़ा दिखाता है, जबकि विश्वास प्रभु को और भी महान दिखाता है।” यह सच है। हमें यह याद रखना चाहिए कि अगर संकट का सामना करते समय स्थिति हमारे प्रभु से बड़ी लगे, तो यह अविश्वास की निशानी है। ऐसे अविश्वास के साथ हम कभी भी संकट पर जीत हासिल नहीं कर सकते। हमारे पास सच्चा विश्वास होना चाहिए, ठीक वैसा ही जैसा नहेमायाह के पास था। हमें अपने जीवन के संकटों पर ऐसे विश्वास के ज़रिए जीत हासिल करनी चाहिए जो हमें उस परमेश्वर को देखने में मदद करे जो अनंत रूप से महान है। यहाँ तक कि जब हम बड़े संकटों का सामना करते हैं—चाहे

हमारे परिवारों में हों या कलीसिया के भीतर—तो हमें परमेश्वर पर विश्वास के ज़रिए उन पर जीत हासिल करनी चाहिए। हमें अपने अंदर पैदा होने वाले डर पर पक्के यकीन और आत्मविश्वास के साथ काबू पाना चाहिए, और साथ ही प्रार्थना और उम्मीद के साथ परमेश्वर की बचाने वाली कृपा का इंतज़ार करना चाहिए। इसके अलावा, हमें उन विरोधियों के डर पर भी जीत हासिल करनी चाहिए जो हमें इन संकटों में धकेलते हैं। मूसा के उन शब्दों को सुनिए जो उसने निर्गमन 14:13-14 में इस्राएलियों से कहे थे: “...डरो मत। मज़बूती से खड़े रहो और तुम देखोगे कि प्रभु आज तुम्हें कैसे बचाता है... प्रभु तुम्हारी ओर से लड़ेगा; तुम्हें बस शांत रहना है।” हमारा परमेश्वर वह है जो हमारी ओर से लड़ता है, और लड़ाई में जीत उसी की होती है। क्योंकि वह हमारे साथ है और हमारे दुश्मनों से लड़ रहा है, इसलिए हमें डरने की कोई ज़रूरत नहीं है। ईश्वर पर पूरा भरोसा रखकर, हम न केवल जीवन में आने वाली मुश्किलों पर जीत पा सकते हैं, बल्कि उन्हें ईश्वर की महिमा करने के मौकों में भी बदल सकते हैं। जीत!

दिन 18: एक मसीही के दिल को संभालना

[नीतिवचन 4:23 पर मनन]

"सबसे बढ़कर अपने मन की रक्षा कर, क्योंकि जीवन का स्रोत वही है।" (नीतिवचन 4:23)

एक घटना है जिसे मैं आज भी नहीं भूल सकता। मेरे एक बड़े दोस्त की माँ एक दुकान चलाती थीं, तभी एक अश्वेत लुटेरा अंदर घुसा, पैसे चुराए और भाग गया। उन्होंने उसका पीछा किया और उन्हें गोली मार दी गई, जिससे उनकी जान चली गई। कहा जाता है कि उस समय लुटेरे ने दुकान से \$100 चुराए थे। यह निश्चित रूप से एक बेतुकी घटना थी। बेशक, मुझे नहीं लगता कि उन्होंने सिर्फ \$100 बचाने के लिए लुटेरे का पीछा किया होगा। हो सकता है कि यह पल भर की प्रतिक्रिया रही हो। फिर भी, यह सोचकर बहुत हैरानी होती है कि सिर्फ \$100 के लिए दुनिया ने एक कीमती जान खो दी।

ऐसा लगता है कि बहुत से लोग अपनी पूरी ताकत, दिल और लगन अपने पैसे को बचाने में लगा देते हैं। भौतिकवादी दुनिया में, मुझे लगता है कि लोग अपने पैसे को बचाने के लिए हर तरह की चीज़ें करते हैं। और भी डरावनी बात यह है कि वे अपने पैसे को बचाने के चक्कर में अपने दिल को ही छोड़ देते हैं। मैं सोचता हूँ कि एक ऐसी दुनिया में मसीही होने का क्या मतलब है जहाँ लोग अपनी अंतरात्मा की आवाज़ को नज़रअंदाज़ करके भी पैसे बचाने की कोशिश करते हैं। क्या हम सच में दुनिया के लोगों से अलग हैं? क्या हम पैसे के मोह में नहीं फँसे हैं? क्या हम उसके लिए मेहनत से नहीं जी रहे हैं, और उसी पैसे का इस्तेमाल चर्च में खुद को बड़ा दिखाने, दूसरे विश्वासियों के सामने डींगें मारने और प्रभु के चर्च पर नियंत्रण करने की कोशिश करने के लिए नहीं कर रहे हैं? क्या हम अपने दिल को भी नज़रअंदाज़ कर रहे हैं? हम पैसे के बजाय अपने दिल की रक्षा करने के लिए समर्पित क्यों नहीं हैं? हमारे दिल अशुद्ध हो रहे हैं। और भी डरावनी बात यह है कि हमारे अशुद्ध होते दिलों के बीच, यीशु के क्रूस के कीमती लहू पर भरोसा करने का विश्वास भी कमज़ोर पड़ रहा है। हम अपने दिलों को

विश्वास से नहीं, बल्कि नियमों से अशुद्ध कर रहे हैं... मैं सोचता हूँ कि क्या हम ऐसी ज़िंदगी जी रहे हैं जो सिर्फ़ बाहर से धार्मिक दिखती है, और जो खुद को बचाने की अहंकारी सोच से प्रेरित है? विश्वास के बजाय शक से भरा दिल ही परमेश्वर की परीक्षा लेता है (प्रेरितों के काम 15:10)। यह वह दिल है जो परमेश्वर की बनाई उद्धार की दयालु योजना पर सवाल उठाता है और शक करता है (पार्क युन-सन)। संक्षेप में, यह वह दिल है जो "प्रभु यीशु की कृपा" को नहीं जानता (प्रेरितों के काम 15:11)।

आज, परमेश्वर हमें जीवन का वचन देते हैं। वह वचन हमें बताता है कि सबसे बढ़कर, हमें अपने दिलों की रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि जीवन का स्रोत उन्हीं से बहता है। हमें इस बुनियादी सबक को हल्के में नहीं लेना चाहिए। जीवन के असली स्रोत को नज़रअंदाज़ करके दूसरी चीज़ों पर ध्यान देने में हमें अपना समय बर्बाद नहीं करना चाहिए। तो फिर, हम अपने दिलों की रक्षा कैसे करें? हमें विश्वास के ज़रिए उनकी रक्षा करनी चाहिए। हमें विश्वास के ज़रिए अपने दिलों को शुद्ध करने के लिए खुद को समर्पित करना चाहिए (प्रेरितों के काम 15:9)। शैतान की चालों और हमें भ्रष्ट करने की कोशिश करने वाले कई प्रलोभनों के बीच, हमें अपने दिलों की रक्षा को प्राथमिकता देनी चाहिए और उन्हें शुद्ध रखने की पूरी कोशिश करनी चाहिए। भले ही रास्ता मुश्किल, दर्दनाक, अकेला या इतना थका देने वाला हो कि हम गिर पड़ें, फिर भी हमें पूरे दिल-ओ-जान से अपने दिलों की रक्षा करनी चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें विश्वास के ज़रिए केवल मसीह की धार्मिकता को अपनाना चाहिए। हमें अपनी खुद की धार्मिकता को कूड़े-कचरे से ज़्यादा कुछ नहीं समझना चाहिए। हमें यह पहचानना चाहिए कि जिन चीज़ों को हम सचमुच अपना कह सकते हैं, वे केवल हमारे पाप और हमारी कमज़ोरियाँ हैं। हमें पूरे दिल, आत्मा और दिमाग से इस सच्चाई को थामे रखना चाहिए कि हम केवल प्रभु यीशु मसीह की धार्मिकता से बचाए गए हैं। मेरी प्रार्थना है कि विश्वास के ऐसे जीवन के ज़रिए, हम पवित्र आत्मा के काम से पवित्रता का अनुभव करें और पवित्र जीवन जिएं।

"हे परमेश्वर, मेरे अंदर एक शुद्ध हृदय उत्पन्न कर!" (भजन संहिता 51:10)

दिन 19: दुख सहने का फ़ायदा

[योना 2:2 पर मनन]

“उसने कहा: ‘अपनी मुसीबत में मैंने प्रभु को पुकारा, और उसने मुझे जवाब दिया। मैंने मौत की गहरी दुनिया से मदद के लिए पुकारा, और तुमने मेरी पुकार सुनी” (योना 2:2)।

हमारी ज़िंदगी में आने वाले दुखों का सामना हमें कैसे करना चाहिए? अपनी किताब *द डांस ऑफ़ लाइफ़* में, हेनरी नूवेन ने प्रतिक्रिया देने के चार तरीके बताए हैं। वे इन चार प्रतिक्रियाओं को ईश्वर के साथ नृत्य करने के चार कदम कहते हैं। ईश्वर के साथ नृत्य करने का पहला कदम है—उस दर्द और दुख पर शोक मनाना जिसे हम सहते हैं। जब रोने का समय हो तो हमें रोना चाहिए; लेकिन, हमें क्रूस के सामने रोना चाहिए। जब हम दर्द और तकलीफ़ में हों, तो हमें पिता परमेश्वर के पास जाना चाहिए और अपना दिल खोलकर उन्हें अपने दुख के बारे में बताना चाहिए। फिर भी, किसी कारण से, अपने दर्द, चोट और दुख को स्वीकार करने के बजाय, हम उन्हें नकारने, नज़रअंदाज़ करने या अपने दिल की गहराइयों में दबाने की कोशिश करते हैं। अगर हम ऐसा करते हैं, तो हम जो दुख सहते हैं, वह हमारे लिए फ़ायदेमंद नहीं हो सकता। इसके बजाय, पुराने नियम में इज़राइल के लोगों की तरह, जब भी हम मुश्किलों का सामना करते हैं, तो हम बड़बड़ाकर और शिकायत करके ईश्वर के विरुद्ध पाप कर सकते हैं। ईश्वर के साथ नृत्य करने का दूसरा कदम है—अपने दर्द और दुख की असली वजहों का सीधे सामना करना। हमें उन छिपे हुए नुकसानों को साफ़-साफ़ देखना चाहिए जो हमें पंगु बना देते हैं और हमें इनकार, शर्म और अपराध-बोध की कालकोठरी में कैद कर देते हैं। तो फिर, हमारे दर्द और दुख की असली वजह क्या है? यह तय करने के लिए कि हमें अपने दुख की असली वजह का सामना करना है या नहीं, हमें पहले यह जानना होगा कि वह क्या है; फिर भी, अक्सर, हम उस दर्द और तकलीफ़ की उत्पत्ति से अनजान रहते हैं जिसे हम सहते हैं। नतीजतन, न केवल हम इन कारणों का सामना करने में विफल रहते हैं,

बल्कि जब हम उन्हें पहचान भी लेते हैं, तो इंसानी फितरत हमें उनका सामना करने से बचाती है—सिर्फ इसलिए क्योंकि हम उनसे बचने के आदी हो चुके होते हैं। जब तक हम अपने दुख के स्रोतों का सामना नहीं करते, तब तक हम उस अनुग्रह का अनुभव नहीं कर सकते जो ईश्वर हमारी मुश्किलों के ज़रिए हमें देता है। नृत्य का तीसरा कदम है—अपने दर्द, तकलीफ़, नुकसान और ज़ख्मों में प्रवेश करना और उनसे गुज़रना। हमें इनकार करने में बहुत ज़्यादा ऊर्जा बर्बाद नहीं करनी चाहिए; इसके बजाय, हमें अपनी स्थिति की सच्चाई को स्वीकार करना चाहिए और सीधे उस दर्द और ज़ख्मों का सामना करना चाहिए। हमें इससे बचना बंद करना होगा। हमें दुख की सुरंग में जाना होगा। भले ही वह अंधेरी और डरावनी हो, फिर भी हमें उसमें जाना होगा। उस सुरंग में जाए बिना, हमें जो मुश्किलें आती हैं, उनसे कोई फ़ायदा नहीं होता। इस प्रक्रिया का चौथा और आखिरी कदम है अपने दर्द, तकलीफ़, नुकसान और ज़ख्मों के बीच पिता परमेश्वर से मिलना। हमें दुख की उस सुरंग में जाना होगा और सच में उस दर्द, तकलीफ़, नुकसान और ज़ख्मों को महसूस करना होगा जो खुद यीशु ने सहे थे। ऐसा करने से, हमें अपने दर्द और ज़ख्मों से राहत मिलती है। इसके अलावा, हम "ज़ख्मी मरहम लगाने वाले" (wounded healers) बन सकते हैं, जो प्रभु के ज़रिया इस्तेमाल होने के लिए तैयार हों।

आज के पाठ (योना 2:1) में बताए गए नबी योना के दुख को चार बिंदुओं में समझा जा सकता है। पहला, उनका दुख एक बड़ी मछली के पेट के अंदर हुआ (पद 1)। दूसरे शब्दों में, योना के दुख का पहला अनुभव 'शियोल' (पाताल लोक) के अंदर होना था (पद 2)। समुद्र की गहराई में एक बड़ी मछली के पेट में फँसे होने के कारण—जो एक अंधेरी, उदास गुफ़ा जैसा था—योना को एक बहुत मुश्किल स्थिति का सामना करना पड़ा, जहाँ वे किसी भी तरफ़ देखते, तो बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं दिखता था। वे कैद थे, ठीक वैसे ही जैसे इज़राइली लोग मिस्र से निकलने के दौरान लाल सागर के सामने फँसे हुए थे (हालाँकि, यह नज़रिया फ़िरौन और खुद इज़राइलियों का था)। जैसा कि भजन 539 (पद 3) के बोल बताते हैं, दुनिया का हर सहारा जिस पर उन्होंने भरोसा किया था, वह खत्म हो गया था। जब हम पूरी तरह से निराशा की हालत में होते हैं, तभी हम प्रभु की ओर देखते हैं, जो हमारी सच्ची उम्मीद हैं। दुख का यही फ़ायदा है। दूसरा, योना का दुख प्रभु की लहरों के रूप में आया (पद 3)। यहाँ "लहरों" शब्द का मतलब असल में "तोड़ने वाली लहरें" (breakers) है—ऐसी लहरें जो चकनाचूर कर देती हैं और कुचल देती हैं (पार्क युन-सन)। परमेश्वर योना के ज़िद्दी दिल को तोड़ रहे थे। जब उन्होंने समुद्र में ज़बरदस्त तूफ़ान भेजा, तो वे सिर्फ़ उस जहाज़ को नष्ट नहीं कर रहे थे जिस पर योना यात्रा कर

रहे थे (1:4); वे योना के कठोर दिल को भी तोड़ रहे थे। योना का दिल बहुत कठोर हो गया था—वह अपना मिशन भूल गया था और परमेश्वर की आज्ञा न मानकर भाग गया था—लेकिन प्रभु ने उसके कठोर दिल को नरम किया और उसे आज्ञा मानने के लिए तैयार किया। दुख सहने का यही फ़ायदा है। तीसरी बात, योना के दुख में यह एहसास भी शामिल था कि प्रभु ने उसे छोड़ दिया है [(पद 4) "...भले ही मुझे आपकी नज़रों से दूर कर दिया गया है..."]। योना को ऐसा इसलिए लगा क्योंकि वह परमेश्वर से दूर भाग रहा था और उनकी उपस्थिति से बचने की कोशिश कर रहा था (1:3)। दूसरे शब्दों में, क्योंकि वह परमेश्वर से दूर भागने की कोशिश कर रहा था, इसलिए उसे लगा कि परमेश्वर ने भी खुद को उससे दूर कर लिया है और उसे छोड़ दिया है। हमारे साथ भी ऐसा ही होता है। हमें कब लगता है कि परमेश्वर ने हमें छोड़ दिया है? हमें ऐसा तब लग सकता है जब हम योना की तरह परमेश्वर की आज्ञा न मानें और उनकी उपस्थिति से बचने के लिए दूर भाग जाएं। खासकर तब, जब हम दुख में हों और हमें लगे कि हमारी प्रार्थनाओं का कोई जवाब नहीं मिल रहा है, तो हम सोच सकते हैं कि परमेश्वर ने हमसे अपना मुँह मोड़ लिया है और हमें छोड़ दिया है। भजनकार को भी ऐसा ही महसूस हुआ था; इसीलिए उसने भजन 22:1 में पुकारा: "हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तूने मुझे क्यों छोड़ दिया है? तू मुझे बचाने से इतना दूर क्यों है, मेरी पीड़ा भरी पुकार से इतना दूर क्यों है?" हमें परमेश्वर द्वारा छोड़े जाने का एहसास तब हो सकता है जब उनकी मदद के लिए हमारी बेताब चाहत, कराह और पुकार के बावजूद, उनकी तरफ़ से कोई जवाब या मदद न मिले। मेरा मानना है कि छोड़े जाने का यह एहसास दुख का एक ऐसा रूप है जो किसी बड़ी मछली के पेट में शारीरिक रूप से फँसे होने या प्रभु के न्याय की ज़ोरदार लहरों को सहने से भी ज़्यादा दर्दनाक है। जैसे एक प्यार करने वाले पिता द्वारा ठुकराए जाने का एहसास, अंधेरे कमरे में बंद होने या अनुशासन के दौरान छड़ी से मारे जाने के शारीरिक दर्द से कहीं ज़्यादा तकलीफ़देह होता है, वैसे ही परमेश्वर द्वारा छोड़े जाने का एहसास सबसे ज़्यादा परेशान करने वाला और दर्दनाक अनुभव है—यह अनुशासन के किसी भी अन्य रूप से कहीं ज़्यादा बुरा है। फिर भी, ऐसे दुख के बीच, परमेश्वर हमें जो आशीष देते हैं, वह है यीशु की उस पुकार को सुनने की क्षमता जो उन्होंने क्रूस पर दुख सहते हुए की थी: "एली, एली, लामा सबक्तनी?"—जिसका अर्थ है, "हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तूने मुझे क्यों छोड़ दिया है?" (मरकुस 15:34)। उस पुकार को सुनकर हमें यह भरोसा मिलता है कि चूँकि यीशु, जो परमेश्वर पिता के इकलौते पुत्र हैं, उन्हें परमेश्वर ने त्याग दिया था, इसलिए हमें परमेश्वर कभी भी हमेशा के लिए नहीं त्यागेंगे। दुख सहने का यही तो फ़ायदा है। चौथी बात, योना के दुख में उसकी आत्मा का कमज़ोर पड़ना शामिल था (योना 2:7: "जब मेरी आत्मा मुझमें कमज़ोर पड़ गई..."). यहाँ,

"कमज़ोर पड़ने" (faint) शब्द का मतलब है "घुलना" या "शक्तिहीन होना," जिससे पता चलता है कि योना पूरी तरह से निराशा की स्थिति में पहुँच गया था। योना जिस दुख से गुज़र रहा था, वह पूरी तरह से बेबसी की स्थिति थी—ऐसी स्थिति जिससे कोई भी इंसानी कोशिश छुटकारा या उद्धार नहीं दिला सकती थी—और तीन दिनों तक ऐसी हालत में रहने से वह निश्चित रूप से गहरी निराशा में डूब गया। फिर भी, पूरी तरह से बेबस और लाचार महसूस करने की निराशा के बीच भी, परमेश्वर हमें जो अनुग्रह देते हैं, वह है प्रभु की ओर देखने की शक्ति, जो हमारे उद्धार की आशा हैं। अपने उद्धारकर्ता प्रभु पर नज़र टिकाकर, परमेश्वर हमारे दिलों और होंठों को यह स्वीकार करने के योग्य बनाते हैं कि "उद्धार प्रभु की ओर से मिलता है।" दुख सहने का यह एक बहुत बड़ा फ़ायदा है।

हमें उस अनुग्रह को अपनाना चाहिए जो परमेश्वर हमें जीवन में आने वाले दुखों के ज़रिए देते हैं। खासकर तब—जब हम योना की तरह परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करते हैं और उनसे दूर भागते हैं—तो हमें उनके भेजे दुख की "तेज़ आँधी" का अनुभव करना चाहिए; ऐसा करते हुए, हमें खुद को "परमेश्वर के साथ नाचते हुए" और ऐसे दुख से मिलने वाले फ़ायदों को पाते हुए देखना चाहिए। इसलिए, मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम भी भजनकार की तरह यह स्वीकार कर सकें: "मेरे लिए दुख उठाना अच्छा था ताकि मैं तेरे नियमों को सीख सकूँ" (भजन संहिता 119:71)।

दिन 20: दुख के बीच भी शुक्रगुज़ारी

[योना 2:1, 9 पर मनन]

“योना ने मछली के पेट से अपने परमेश्वर यहोवा से प्रार्थना की... मैं धन्यवाद की आवाज़ के साथ आपके लिए बलिदान चढ़ाऊंगा, और आपके प्रति अपनी मन्नतें पूरी करूंगा। उद्धार यहोवा की ओर से मिलता है।” (योना 2:1, 9)।

दुख दर्दनाक और तकलीफदेह होता है। और जब हम दर्द और तकलीफ में होते हैं, तो अक्सर हम घावों और आंसुओं के बीच कराहते और संघर्ष करते हैं। तब, हम नाराज़गी या कड़वाहट भी पालने लगते हैं। हम लोगों से नाराज़ होते हैं। हम उनसे नाराज़ इसलिए होते हैं क्योंकि हमें लगता है कि किसी पर भी दोष मढ़ने से हमें थोड़ा बेहतर महसूस होगा। हम न केवल लोगों को, बल्कि हालात को भी दोष देते हैं। जब हम इस तरह लोगों और हालात को दोष देते हैं, तो शायद ही कभी खुद को दोष देते हैं। कारण यह है कि जब हम ऐसी तकलीफ और दर्द में होते हैं, तो हम और भी ज़्यादा स्वार्थी हो जाते हैं। और जब हम स्वार्थी हो जाते हैं, तो हम यह सोचने में न केवल नाकाम रहते हैं कि दुख हमारी अपनी वजह से आया है, बल्कि हम ऐसा सोच भी नहीं पाते। इसलिए, दुख झेल रहे स्वार्थी लोग उस दुख से कुछ सीख नहीं पाते। दुख के ज़रिए, हम न केवल अपने बारे में सीखने में नाकाम रहते हैं, बल्कि परमेश्वर के वचन को सीखने में भी नाकाम रहते हैं। नतीजतन, हम दुख के बीच परमेश्वर का धन्यवाद नहीं कर पाते।

हालाँकि, आज के अंश, योना 2:1 और 9 में, भविष्यवक्ता योना दुख के बीच भी परमेश्वर को धन्यवाद की प्रार्थनाएँ चढ़ाते हैं और धन्यवाद के तौर पर परमेश्वर को बलिदान चढ़ाने का संकल्प लेते हैं। यह कैसे मुमकिन है? योना एक बड़ी मछली के पेट के अंदर (पद 1) और प्रभु की लहरों और अपने ऊपर उमड़ते बड़े सैलाबों के बीच (पद 3) रहते हुए भी कैसे धन्यवाद की प्रार्थनाएँ कर सकते थे और धन्यवाद के तौर पर परमेश्वर को बलिदान

चढ़ाने का संकल्प ले सकते थे? योना परमेश्वर की नज़र से दूर किए जाने की तड़प और अपनी आत्मा के भीतर से दम तोड़ने जैसा महसूस करते हुए भी परमेश्वर का धन्यवाद कैसे कर पाए? इसका राज़ क्या था?

सबसे पहले, दुख के बीच परमेश्वर का धन्यवाद करने की योना की क्षमता का राज़ यह था कि उन्हें परमेश्वर की उस बचाने वाली कृपा की याद थी जो उन्होंने पहले ही उन पर की थी।

क्या यह बात अजीब लगती है? आखिर, क्या योना अभी एक बड़ी मछली के पेट के अंदर नहीं हैं? क्या वह अभी भी दुख के बीच नहीं हैं? तो फिर, हम योना के उद्धार के अनुभव के बारे में कैसे बात कर सकते हैं? योना 1:17 के अनुसार, जब योना को समुद्र में फेंक दिया गया, तो परमेश्वर ने उसे निगलने के लिए एक बड़ी मछली तैयार की और इस तरह उसे बचाया। उद्धार की उस पिछली कृपा का अनुभव करने के बाद, योना हमारे सामने मौजूद इस हिस्से—योना 2:1—में परमेश्वर को धन्यवाद की प्रार्थना चढ़ाने में सक्षम हुआ [वाक्यांश "योना ने मछली के पेट से अपने परमेश्वर यहोवा से प्रार्थना की" में "प्रार्थना की" शब्द के लिए मूल हिब्रू में *हित्पालेल* शब्द का इस्तेमाल हुआ है; हम 1 शमूएल 2:1 और 2 शमूएल 7:27 से देख सकते हैं कि इस शब्द का इस्तेमाल धन्यवाद की प्रार्थना के लिए किया जाता है]। क्या यह कुछ अजीब नहीं है? क्या यह अजीब नहीं लगता कि योना उसी उद्धार की घटना के लिए धन्यवाद दे सका—परमेश्वर का उसे निगलने के लिए बड़ी मछली तैयार करना, जब उसे समुद्र में फेंक दिया गया था—जबकि वह अभी भी उस मछली के अंदर होने की कठिन परीक्षा का सामना कर रहा था? आमतौर पर, प्रार्थना करते समय हम जिस उद्धार की उम्मीद करते हैं, वह दुख से छुटकारा पाना होता है—जैसे बड़ी मछली के पेट से बचाया जाना। फिर भी, योना ने धन्यवाद की प्रार्थना करने के लिए योना अध्याय 3 तक इंतज़ार नहीं किया; उसने इसे योना अध्याय 2 में ही—बड़ी मछली के पेट के अंदर ही—चढ़ा दिया। हालाँकि वह एक मुसीबत से तो बच गया था लेकिन उसे एक और (बड़ी) मुसीबत का सामना करना पड़ा, फिर भी ऐसे दुख के बीच परमेश्वर को धन्यवाद देने का कारण यह था कि उसे परमेश्वर की उस उद्धार करने वाली कृपा की याद थी जो उसने पहले ही उस पर की थी। जो व्यक्ति पिछली उद्धार करने वाली कृपा को याद रखता है और वर्तमान में उसे स्वीकार करता है—मुसीबत सहते हुए भी—वह परमेश्वर को धन्यवाद दिए बिना नहीं रह सकता। आइए हम भी योना की तरह परमेश्वर की उस उद्धार करने वाली कृपा को याद करें जो उसने

अतीत में हम पर दिखाई है और आज हमारे सामने आने वाली बड़ी मुसीबतों के बीच भी धन्यवाद की प्रार्थना करें।

दूसरी बात, दुख के समय परमेश्वर को धन्यवाद देने की योना की क्षमता का राज़ परमेश्वर द्वारा भविष्य में छुटकारा दिलाने के बारे में उसके भरोसे और उम्मीद में छिपा था।

दुख के बीच हम परमेश्वर को धन्यवाद इसलिए दे सकते हैं क्योंकि न केवल उसने अतीत में हम पर उद्धार करने वाली कृपा दिखाई है, बल्कि इसलिए भी कि हमें विश्वास है कि जिस परमेश्वर ने तब हमें बचाया था, वही हमें अभी जिन मुसीबतों का सामना करना पड़ रहा है, उनसे भी छुटकारा दिलाएगा। इसी भरोसे और उद्धार की उम्मीद के कारण हम दुख के समय में भी परमेश्वर की स्तुति और धन्यवाद की प्रार्थना कर सकते हैं। प्रेरितों के काम अध्याय 16 में पौलुस और सीलास के साथ ठीक ऐसा ही हुआ था। भले ही अगले दिन उन्हें मौत की सज़ा मिलने की संभावना थी, फिर भी पौलुस और सीलास ने परमेश्वर से प्रार्थना की और उसकी स्तुति के गीत गाए (पद 25)। यह कैसे संभव हुआ? ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उन्हें उद्धार का भरोसा और उम्मीद थी। खासकर, पौलुस को पूरा भरोसा था कि परमेश्वर उसे रोम ले जाएगा ताकि वह कैसर के सामने खड़ा हो सके; इसलिए, उसे यकीन था कि परमेश्वर उसे जेल से छुड़ाएगा। इसीलिए वह परमेश्वर से प्रार्थना कर सका और उसकी स्तुति कर सका। इसी तरह, भविष्यद्वक्ता योना—जिसने अध्याय 2 के पद 1 और 9 में परमेश्वर का धन्यवाद किया—ने कृतज्ञता के साथ प्रार्थना की। उसे उद्धार की उम्मीद और इस बात पर विश्वास था कि जिस परमेश्वर ने उसे पहले बचाया था, वही उसे बड़ी मछली के पेट से भी बचाएगा। दूसरे शब्दों में, क्योंकि योना परमेश्वर के सच्चे और बचाने वाले प्रेम पर विश्वास करता था और उससे उम्मीद रखता था, इसलिए उसने दुख के बीच भी धन्यवाद का बलिदान चढ़ाने और कृतज्ञ हृदय से प्रार्थना करने का संकल्प लिया। हमारा विश्वास है कि जो सच्चा परमेश्वर हमें पहले बचा चुका है, वह हमें अभी की और भविष्य की मुश्किलों से भी बचाएगा, क्योंकि हमारा उद्धार करने वाला परमेश्वर कल, आज और हमेशा एक जैसा ही रहता है (इब्रानियों 13:8)। जब हम इस सच्चे और उद्धार करने वाले परमेश्वर पर अपना विश्वास और उम्मीद रखते हैं—तब भी जब दुख ऐसा लगता है मानो हम किसी बड़ी मछली के पेट के अंदर हों और कोई उम्मीद न बची हो—तो हम विश्वास के साथ परमेश्वर का धन्यवाद कर सकते हैं, और निराशा के बीच भी उद्धार करने वाले परमेश्वर की चाह और उम्मीद रख सकते हैं।

तीसरी बात, दुख के बीच भी योना का परमेश्वर को धन्यवाद दे पाने का राज़ यह था कि उसने अपने दिल में परमेश्वर के अनुग्रह को संजोकर रखा था।

योना 2:8-9 को देखिए: "जो लोग झूठी और व्यर्थ चीज़ों की पूजा करते हैं, वे अपनी दया को छोड़ देते हैं। लेकिन मैं धन्यवाद की आवाज़ के साथ आपके लिए बलिदान चढ़ाऊंगा; मैंने जो मन्त्रत मानी है, उसे पूरा करूंगा। उद्धार प्रभु की ओर से है।" यहाँ, "जो लोग झूठी और व्यर्थ चीज़ों की पूजा करते हैं" वाक्यांश को दो हिब्रू शब्दों का इस्तेमाल करके बताया गया है: *हेबेल* (hebel) और *शाव* (shav)। *हेबेल* का मतलब है ऐसी सांस जो जल्दी ही गायब हो जाती है, जबकि *शाव* का मतलब है खालीपन या शून्यता। दूसरे शब्दों में, मूर्तियाँ बेकार चीज़ें हैं—खाली और क्षणभंगुर, जो सांस की तरह जल्दी ही गायब हो जाती हैं। जो लोग ऐसी मूर्तियों की सेवा करते हैं—जो बेकार, खाली और सांस की तरह क्षणभंगुर हैं—वे उस कृपा को छोड़ देते हैं जो परमेश्वर ने उन्हें दी है। उदाहरण के लिए, अगर हम परमेश्वर से ज़्यादा भौतिक चीज़ों से प्यार करते हैं और झूठी और बेकार चीज़ों की पूजा करते हैं, तो हम परमेश्वर की दी हुई कृपा को ठुकरा देते हैं। नतीजतन, हम परमेश्वर की आराधना धन्यवाद की आवाज़ के साथ नहीं कर पाते। जब हम इस दुनिया में सोमवार से शनिवार तक सांसारिक और बेकार चीज़ों के पीछे भागते हैं, तो हम रविवार की आराधना के दौरान परमेश्वर से मिली कृपा को छोड़ देते हैं। उस कृपा की कद्र न करने और उसे ठुकरा देने के कारण, जब हम रविवार को परमेश्वर की आराधना करने के लिए पवित्र स्थान पर आते हैं, तो हमारे दिलों में कृतज्ञता के लिए कोई जगह नहीं होती। हम धन्यवाद के साथ प्रभु के घर में प्रवेश नहीं कर पाते, न ही हम कृतज्ञ आवाज़ के साथ उनकी स्तुति और आराधना कर पाते हैं। हालाँकि, अगर हम परमेश्वर की दी हुई कृपा की गहराई से कद्र करते हैं, तो हम रविवार को प्रभु के घर में धन्यवाद भरे दिल के साथ आ सकते हैं और कृतज्ञता के साथ उनकी स्तुति और आराधना कर सकते हैं। यहाँ एक दिलचस्प अंतर है: जहाँ मूर्तिपूजक परमेश्वर की कृपा को छोड़कर खाली और क्षणभंगुर चीज़ों—जो सांस की तरह जल्दी ही गायब हो जाती हैं—की सेवा और बलि चढ़ाते हैं, वहीं जो लोग परमेश्वर की आराधना करते हैं, वे उस कृपा की कद्र करते हैं जो वह अपने सच्चे वाचा-प्रेम (हिब्रू: *हेसेद*) के ज़रिए देता है और धन्यवाद के साथ आराधना करने के लिए उसके सामने आते हैं। योना परमेश्वर का ऐसा ही एक उपासक था। वह दुख के बीच भी परमेश्वर का धन्यवाद कर सका क्योंकि उसने परमेश्वर की कृपा को अपने दिल के करीब रखा था। उसने परमेश्वर को धन्यवाद की बलि चढ़ाने का संकल्प लिया, जब उसे परमेश्वर के दिखाए वाचा-प्रेम का थोड़ा

सा भी एहसास हुआ—ऐसा प्रेम जिसने उसे तब भी नहीं छोड़ा जब उसने परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन किया, अपना मिशन भूल गया, और उसकी उपस्थिति से भागने की कोशिश की, और इसके बजाय उस दिव्य उद्देश्य को पूरा करने का फैसला किया जो उसने तय किया था। आखिरकार, जिन लोगों ने परमेश्वर की कृपा का अनुभव किया है, वे धन्यवाद की प्रार्थना करने और कृतज्ञ दिल से उसकी आराधना करने का संकल्प लेने के लिए प्रेरित होते हैं। हमें भी उस कृपा के जवाब में धन्यवाद की प्रार्थना और आराधना करनी चाहिए जिसका हमने अनुभव किया है। ऐसा करने के लिए, हमें अपने दिलों में परमेश्वर की कृपा की सच्चाई से कद्र करनी चाहिए। हालाँकि दुख और तकलीफें दर्दनाक और परेशान करने वाली होती हैं, फिर भी हमें उनके बीच परमेश्वर की महिमा करनी चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें अपने दुखों के समय उद्धार करने वाले परमेश्वर की ओर देखना चाहिए। हमें उस उद्धार करने वाली कृपा को याद रखना चाहिए जो परमेश्वर ने हमें पहले दी थी और अपनी मौजूदा मुश्किलों के बीच उस कृपा को याद करना चाहिए। पुरानी कृपाओं को अपने दिल में संजोकर और मौजूदा मुश्किलों के समय उन्हें याद करते हुए, हमें पूरा भरोसा होना चाहिए कि उद्धार करने वाला सच्चा परमेश्वर हमें अभी भी बचाएगा। उद्धार का यह भरोसा हमें घोर निराशा में भी परमेश्वर पर आशा रखने की हिम्मत देता है। उद्धार की इस आशा के साथ, हम धैर्य और विश्वास के साथ दुखों को सह सकते हैं और शांति से परमेश्वर द्वारा छुटकारा मिलने का इंतज़ार कर सकते हैं। हमें अपने दुखों के बीच उद्धार करने वाले परमेश्वर की ओर देखना चाहिए; पुरानी उद्धार करने वाली कृपा को याद करते हुए, हमें अभी के उद्धार के भरोसे और भविष्य के उद्धार की आशा को अपनाना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम परमेश्वर की कृपा से शक्ति पाकर कृतज्ञता के साथ उनकी प्रार्थना और आराधना कर पाएँगे।

दिन 21: बदलाव

[रोमियों 12:1-3 पर मनन]

“इसलिए, भाइयों और बहनों, मैं परमेश्वर की दया का हवाला देते हुए आपसे विनती करता हूँ कि आप अपने शरीरों को एक जीवित बलिदान के रूप में अर्पित करें, जो पवित्र और परमेश्वर को भाने वाला हो—यही आपकी सच्ची और उचित उपासना है। इस दुनिया के तौर-तरीकों को न अपनाएँ, बल्कि अपनी सोच को नया करके बदल जाएँ। तब आप परख पाएँगे और मानेंगे कि परमेश्वर की इच्छा क्या है—उसकी भली, मनभावन और सिद्ध इच्छा। क्योंकि मुझे मिली अनुग्रह के कारण मैं आप में से हर एक से कहता हूँ: अपने बारे में उससे ज़्यादा न सोचें जितना सोचना चाहिए, बल्कि सही समझ के साथ सोचें, उस विश्वास के अनुसार जो परमेश्वर ने आप में से हर एक को दिया है” (रोमियों 12:1-3)।

क्या हम सचमुच बदल रहे हैं? या हम बिगड़ रहे हैं? यह सचमुच हैरानी की बात है—हम उन मसीहियों के जीवन को कैसे समझाएँ जो सैकड़ों बार उपासना सभाओं में जाते हैं और अनगिनत बार दावा करते हैं कि उन्हें परमेश्वर के वचन से अनुग्रह मिला है, फिर भी उनमें बदलाव का कोई संकेत नहीं दिखता? जो पास्टर वचन सुनाते हैं, वे अक्सर उन लोगों को देखकर दुखी होते हैं और हार मान लेते हैं जो बदलते नहीं हैं; वहीं दूसरी ओर, सुनने वाले उन प्रचारकों की लगातार आलोचना करते हैं और उनसे असंतुष्ट रहते हैं जिनमें खुद बदलाव के कोई संकेत नहीं दिखते। हम शायद पूरी निष्ठा से उपासना की धार्मिक रस्म निभाते हों—शायद आदत के कारण ही सही—लेकिन हम उन मसीहियों की हालत को कैसे समझाएँ जो एक के बाद एक सभा में जाने के बावजूद वैसे ही बने रहते हैं? यह हमारी उपासना के जीवन में एक समस्या को उजागर करता है। ऐसा क्यों है कि बाइबल का बहुत

ज़्यादा ज्ञान होने, सही शिक्षा को समझने और अनगिनत उपासना सभाओं में जाने के बावजूद, हम बदलाव का अनुभव नहीं कर पाते और इसके बजाय खुद को बिगड़ते हुए पाते हैं? मेरा मानना है कि बदलाव दो तरह के होते हैं; दूसरे शब्दों में, उस बदलाव की दिशा मायने रखती है। हम या तो बुरी दिशा में बदलते हैं या अच्छी दिशा में—इनमें से कोई एक ही होता है। उपासना करते समय भी, हम या तो बुरी दिशा में बदल सकते हैं—भ्रष्ट हो सकते हैं—या अच्छी दिशा में। यह बात सुनने में अजीब लग सकती है। उदाहरण के लिए, सोचिए कि हम उपासना के दौरान प्रचारक—पास्टर—के ज़रिए परमेश्वर का वचन कैसे सुनते हैं। बाइबल परमेश्वर के वचन को हथौड़ा, आग या पवित्र आत्मा की तलवार बताती है। इसका मतलब है कि जब उपदेशक या मंडली उपदेश के दौरान परमेश्वर के वचन से सचमुच अनुग्रह पाती है, तो कठोर दिल टूट जाते हैं, ठंडे दिल पिघल जाते हैं, और—दिल और अंतरात्मा में गहराई तक महसूस करते हुए—वे सच्चा पश्चाताप और आध्यात्मिक बहाली का अनुभव करते हैं। फिर भी, हमें यह भी समझना चाहिए कि परमेश्वर का वचन हमारे दिलों को कठोर भी बना सकता है। मूसा के ज़रिए परमेश्वर का वचन सुनकर फिरौन ने अपना दिल कठोर कर लिया था। इसी तरह, जो लोग उपदेशक के ज़रिए परमेश्वर का वचन तो सुनते हैं लेकिन उसका पालन नहीं करते, उनके दिल और भी कठोर हो सकते हैं। आज्ञा मानने से आशीष मिलती है, जबकि आज्ञा न मानने से श्राप मिलता है। तो फिर, आप और मैं अभी किस दिशा में बदल रहे हैं? जो विश्वासी रविवार की आराधना के ज़रिए बुरी दिशा में बदल जाते हैं, वे दुनिया में जाने पर बस इसी युग के रंग में ढल जाते हैं। बाहर से वे खुद को चर्च के सदस्य, ईसाई या आराधना करने वाले कह सकते हैं, फिर भी वे ऐसे ईसाई होते हैं जिन्होंने दुनिया को बदलने की शक्ति खो दी है। ऐसे ईसाइयों की संख्या बढ़ाकर चर्च को बढ़ाने का लालच और महत्वाकांक्षा—भले ही इंसानी नज़रों में प्रभावशाली लगे—परमेश्वर की नज़र में घृणित और बुरी है (यशायाह 1:13-14)। जो बदलाव परमेश्वर को खुश करता है, वह यह है कि हम उनके सामने सच्चे आराधना करने वालों के रूप में स्थापित हों। इसके अलावा, एक सच्चे आराधना करने वाले का जीवन दुनिया को बदल देता है क्योंकि आराधना और रोज़मर्रा की जिंदगी एक-दूसरे के साथ तालमेल बिठाते हुए बदलते हैं।

आज, रोमियों 12:1-3 के वचन पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं तीन तरह के बदलावों पर विचार करना चाहता हूँ जिन्हें हमें, विश्वासियों के तौर पर, अपनाना चाहिए। मेरी दिली उम्मीद है कि जब हम सब इन तीन बदलावों को अपनाएँगे, तो हम इस साल खुद को पिछले साल की तुलना में ज़्यादा बदला हुआ पाएँगे।

पहला, हमें दिल के बदलाव की कोशिश करनी चाहिए।

आज के वचन, रोमियों 12:2 को देखें: "इस संसार के सदृश न बनो; परन्तु तुम्हारी बुद्धि के नये हो जाने से तुम्हारा चाल-चलन भी बदलता जाए, ताकि तुम परमेश्वर की भली और मनभावनी और सिद्ध इच्छा को परखो।" यीशु ने इस पीढ़ी को "बुरी और व्यभिचारी पीढ़ी" कहा था (मत्ती 12:39)। प्रेरित पौलुस ने भी गलातियों 1:4 में इसे "इस वर्तमान बुरे युग" के रूप में बताया है। इसके अलावा, इफिसियों 2:2 और गलातियों 5:16 में, पौलुस बताते हैं कि यीशु पर विश्वास करने और नए इंसान बनने से पहले, हम "इस दुनिया के तौर-तरीकों" (इफिसियों 2:2) या "शरीर की इच्छाओं" (गलातियों 5:16) के अनुसार चलते थे। तो, आखिर वे कौन से दुनियावी तरीके या शारीरिक इच्छाएँ थीं जिनका हम यीशु पर विश्वास करके नए इंसान बनने से पहले पालन करते थे? गलातियों 5:19-21 (पहला भाग) देखें: "अब शरीर के काम साफ दिखाई देते हैं, जो ये हैं: व्यभिचार, अशुद्धता, कामुकता, मूर्तिपूजा, जादू-टोना, दुश्मनी, झगड़ा, जलन, गुस्से के दौरे, होड़, मतभेद, फूट, ईर्ष्या, नशेबाजी, अनैतिक मौज-मस्ती और ऐसी ही अन्य बातें।" रोमियों 1:29-31 में भी ऐसी ही एक सूची मिलती है: हर तरह का अधर्म, दुष्टता, लालच, द्वेष, चुगली, बदनामी, ढिठाई, घमंड, डींगें मारना, बुरी योजनाएँ बनाना, माता-पिता की आज्ञा न मानना, मूर्खता, अविश्वास, कठोरता और बेरहमी। समस्या यह है कि भले ही हम यीशु मसीह पर विश्वास करके नए इंसान बन गए हैं, फिर भी कई बार—परमेश्वर के पवित्र लोगों के योग्य जीवन जीने के बजाय—हम अपने पुराने स्वभाव की आदतों का पालन करते रहते हैं और शरीर की इच्छाओं के आगे झुक जाते हैं। आखिर समस्या क्या है? यीशु पर विश्वास करने के बावजूद, हम पुराने स्वभाव के तरीकों को छोड़ने और नए इंसान के रूप में जीने में क्यों नाकाम रहते हैं? असल में समस्या क्या है? समस्या हमारे दिलों में है। हम पाप इसलिए करते हैं क्योंकि हम परमेश्वर के वचन को अपने दिलों में नहीं रखते। भजनहार के भजन 119:11 के शब्दों पर विचार करें: "मैंने तेरे वचन को अपने हृदय में छिपा रखा है ताकि मैं तेरे विरुद्ध पाप न करूँ।" यदि हम परमेश्वर के वचन को अपने दिलों में नहीं रखते, तो हमारे दिलों का नवीनीकरण नहीं हो सकता। नतीजतन, हम अपने अंधे और मूर्ख मन (1:21) या अपने दिलों की कामुक इच्छाओं (1:24) का पालन करते हुए, इस पापी और भ्रष्ट पीढ़ी के अनुसार जीने के लिए मजबूर हो जाते हैं। तो फिर, हमें क्या करना चाहिए? हमें अपने मन के नवीनीकरण द्वारा बदलना होगा। संक्षेप में, हमारे दिलों को बदलने की सख्त ज़रूरत है। अपनी किताब *Renovation of the Heart* में पादरी डलास विलार्ड कहते हैं, "सिर्फ अंदर का गहरा बदलाव ही बाहरी बुराई पर सच में जीत हासिल कर

सकता है।" आप क्या सोचते हैं? क्या आपको सच में लगता है कि अंदर का गहरा बदलाव ही बाहरी बुराई पर पक्की जीत पाने का एकमात्र तरीका है? व्यक्तिगत रूप से, मैं इस अंदरूनी बदलाव को अपनाना चाहता हूँ—न सिर्फ़ अपने लिए, बल्कि अपने परिवार और विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च में अपने आध्यात्मिक परिवार के लिए भी। दूसरे शब्दों में, मैं अपने व्यक्तिगत विश्वास के जीवन के साथ-साथ अपने परिवार और पादरी की सेवा को ऐसे चलाना चाहता हूँ कि बाहरी बदलावों के बजाय उस अंदरूनी बदलाव पर ध्यान दिया जाए जिसे परमेश्वर देखता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि अंदरूनी बदलाव के बिना सच्चा बाहरी बदलाव नहीं हो सकता। मेरा मानना है कि समस्या यह है कि हम ईसाई अक्सर बाहरी दिखावे पर बहुत ज़्यादा ध्यान देते हुए अंदरूनी बदलाव को नज़रअंदाज़ कर देते हैं। दिल में बुनियादी बदलाव के बिना सतही बदलावों के पीछे भागने से, हम ईसाई दुनिया पर ईश्वरीय प्रभाव डालने के बजाय दुनिया के प्रभाव में आ जाते हैं और उसके जैसे बन जाते हैं—जिससे हमारे विश्वास से समझौता होता है और हम परमेश्वर और दूसरों के सामने पाप करते हैं। इंसानी नज़रों में, कोई व्यक्ति मज़बूत विश्वास वाला, अच्छी प्रार्थना करने वाला, बाइबल का ज्ञान रखने वाला और चर्च में लगन से सेवा करने वाला लग सकता है; फिर भी, दिल में बुनियादी बदलाव के बिना, कोई व्यक्ति सालों तक चर्च जा सकता है, लेकिन उसके चरित्र या व्यवहार में कोई खास बदलाव नहीं दिखता। इसीलिए मैं चाहता हूँ कि स्युंगरी चर्च के सभी सदस्य परमेश्वर के वचन पर और गहराई से मनन करने में मेरे साथ शामिल हों। क्योंकि जितना ज़्यादा हम भजनकार की तरह दिन-रात परमेश्वर के वचन पर मनन करते हैं, उतना ही ज़्यादा हमारा दिल उसी वचन से बदलता जाता है। यह कैसे मुमकिन है? पहला, जब हम परमेश्वर के वचन पर मनन करते हैं, तो पवित्र आत्मा हमें परमेश्वर की आवाज़ सुनने में मदद करता है। हम जितना ज़्यादा उसके वचन पर मनन करते हैं, उतनी ही बेहतर ढंग से हम परमेश्वर की इच्छा को समझ पाते हैं (रोमियों 12:2)। दूसरा, जब हम परमेश्वर की उस इच्छा का पालन करते हैं जिसे हमने समझा है, तो हमारे दिलों में सच्चा बदलाव आता है। सच्चाई का पालन करके हम अपनी आत्माओं को शुद्ध करते हैं (1 पतरस 1:22)। परमेश्वर अपने वचन के ज़रिए हमें साफ़ और पवित्र करता है (इफिसियों 5:26)। मैं दिल से प्रार्थना करता हूँ कि हमारे चर्च परिवार के सभी सदस्य परमेश्वर के वचन के और करीब आएँ—उसे सुनें, पढ़ें, उस पर मनन करें, उसका अध्ययन करें और उसका पालन करें—ताकि हमारे दिलों में बुनियादी बदलाव आ सके। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हमारे दिल पूरी तरह से स्वस्थ और पूर्ण हो जाएँ। नतीजतन, मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम इस युग के तौर-तरीकों को न अपनाएँ, बल्कि यीशु का अनुकरण करें और ऐसे लोग बनें जो इस दुनिया को बदल सकें।

दूसरी बात, हमें अपनी सोच में बदलाव लाने की कोशिश करनी चाहिए।

कृपया आज का वचन देखें, रोमियों 12:3: "क्योंकि मुझे जो अनुग्रह मिला है, उसके अनुसार मैं तुम में से हर एक से कहता हूँ कि वह अपने बारे में उससे ज़्यादा न सोचे जितना सोचना चाहिए, बल्कि सही समझ के साथ सोचे, जैसा कि परमेश्वर ने हर एक को विश्वास का माप दिया है।" रेने डेकार्ट, जो आधुनिक तर्कवाद के एक फ्रांसीसी दार्शनिक थे, ने एक ऐसी बात कही जो इंसानियत के मूल सार को बताती है: "मैं सोचता हूँ; इसलिए मैं हूँ" (*Cogito, ergo sum*)। जो चीज़ हमें इंसानों को जानवरों से अलग करती है, वह है हमारी सोचने की क्षमता। जानवर अपनी स्वाभाविक इच्छाओं और आवेगों से प्रेरित होकर जीते हैं। जानवर के जीवन को चार शब्दों में समेटा जा सकता है: खाना, सोना, प्रजनन करना और मरना। हालाँकि, इंसान सोचने वाले प्राणी हैं। हमारे पास तर्क-शक्ति है, और उसी तर्क के ज़रिए हम सोचने वाले प्राणी के तौर पर जीते हैं; दूसरे शब्दों में, हम सोचते हुए जीते हैं और जीते हुए सोचते हैं। फिर भी, मुझे ऐसा लगता है कि लोग सोच-समझकर जीने के बजाय तेज़ी से आवेग में आकर—जानवरों की तरह—जी रहे हैं। हम बिना किसी तर्क या समझ के, भावनाओं और आवेगों के आधार पर बोलकर और काम करके परमेश्वर के विरुद्ध पाप करते हैं। प्रेरित पौलुस के नज़रिए से, यह स्थिति हमारी "व्यर्थ सोच" से पैदा होती है। क्योंकि हमारी सोच व्यर्थ हो गई है, इसलिए हम परमेश्वर के विरुद्ध पाप करते हुए अपना जीवन जीते हैं। रोमियों 1:21 को देखें: "क्योंकि हालाँकि वे परमेश्वर को जानते थे, फिर भी उन्होंने न तो परमेश्वर के तौर पर उसकी महिमा की और न ही उसका धन्यवाद किया, बल्कि उनकी सोच व्यर्थ हो गई और उनके मूर्ख मन अंधेरे से भर गए।" आखिरकार, भले ही हम परमेश्वर को जानते हों, जब तक हम अपने मन को नया नहीं करते और बदलते नहीं हैं, तब तक हम उसकी महिमा करने या उसका धन्यवाद करने में असफल रहते हैं। नतीजतन, हमारी सोच अनिवार्य रूप से व्यर्थ—बेमतलब और बेकार—हो जाती है। ऐसी व्यर्थ सोच हमें केवल बेकार और निरर्थक कामों में लगा देती है। हालाँकि, समस्या यह है कि ये ही चीज़ें—जो परमेश्वर की नज़र में बेकार और निरर्थक हैं—कलीसिया के भीतर भी हो रही हैं। इसका एक उदाहरण कलीसिया में "...यौन अनैतिकता और..." का होना है। "कलह, जलन, गुस्से के दौरे, स्वार्थी महत्वाकांक्षा, मतभेद, गुटबाज़ी, ईर्ष्या, नशेबाज़ी और अनैतिक भोग-विलास" (गलातियों 5:19-21) जैसे पाप किए जा रहे हैं। इसीलिए प्रेरित पौलुस आज के वचन (रोमियों 12:3) में हमें सिखाते हैं: "अपने बारे में उससे ज़्यादा न सोचो जितना सोचना चाहिए, बल्कि सही समझ के साथ सोचो, उस विश्वास के अनुसार जो परमेश्वर ने

तुम्हें दिया है।" इसका क्या मतलब है? हम इस पर दो तरह से विचार कर सकते हैं। पहला, पौलुस हमसे कहते हैं कि हम घमंड न करें। कलीसिया में झगड़े और फूट जैसे पाप क्यों होते हैं? यह सब घमंड के कारण होता है। आध्यात्मिक श्रेष्ठता या पूर्वाग्रह की भावनाएँ क्यों पैदा होती हैं? क्या इसलिए नहीं कि हम खुद को अपनी सही सीमा से ज़्यादा समझते हैं? इस तरह, रोमियों 12:3 में पौलुस असल में यही कह रहे हैं, "अपनी सही सीमा से ज़्यादा मत सोचो।" दूसरा, पौलुस रोम के संतों—और हम सभी—से "नम्रता के साथ सोचने" का आग्रह करते हैं (वचन 3 का आखिरी हिस्सा)। इसका क्या मतलब है? संक्षेप में, इसका मतलब है अपनी सही सीमा के भीतर सोचना। विश्वास की मात्रा के अनुसार सोचने का मतलब है परमेश्वर के सामने खुद को जानना और नम्रता से सोचना; "समझदारी से सोचने" (या सही निर्णय लेने) का निर्देश देने का मतलब है "साफ़ और सही सोच के साथ सोचना" (पार्क युन-सन)। जो लोग अनुग्रह को समझते हैं, वे नम्र होते हैं। वे कभी भी अपनी सही सीमा से ज़्यादा नहीं सोचते; इसके बजाय, वे नम्रता के साथ सोचते हैं। इसीलिए पौलुस "मुझे दिए गए अनुग्रह से" कहते हैं (वचन 3)। परमेश्वर से मिले अनुग्रह के कारण ही पौलुस रोम के संतों को नम्रता से यह सलाह देते हैं, भले ही वे दूर से लिख रहे हों।

हमें अपनी सोच के तरीके में बदलाव की ज़रूरत है। जब हम इस पीढ़ी के तौर-तरीकों को अपनाने से इनकार करते हैं और इसके बजाय अपने मन को नया और बदला हुआ होने देते हैं, तो हमारी सोच का तरीका भी ज़रूर बदल जाता है। दूसरे शब्दों में, दिल में बदलाव आने से मन में भी बदलाव आता है। जो दिल नया हो रहा है और प्रभु की इच्छा के अधीन है, वह उनके सामने घमंड भरे विचार नहीं रख सकता; बल्कि, ऐसा दिल उनकी उपस्थिति में नम्रता पैदा करता है। मेरी प्रार्थना है कि हम सभी में सोच का यह बदलाव जारी रहे। हम सभी न केवल एक जैसा दिल रखें बल्कि नम्रता से सोचते हुए एक जैसी सोच भी अपनाएँ।

तीसरी और आखिरी बात, हमें अपने जीवन में बदलाव लाने की कोशिश करनी चाहिए। आज के वचन, रोमियों 12:1 को देखिए: "इसलिए, भाइयों और बहनों, मैं परमेश्वर की दया का हवाला देते हुए आपसे विनती करता हूँ कि आप अपने शरीरों को एक जीवित बलिदान के रूप में अर्पित करें, जो पवित्र हो और परमेश्वर को भाए—यही आपकी सच्ची और उचित उपासना है।" जब हमारे दिल और मन बदल जाते हैं, तो हमारा जीवन भी स्वाभाविक रूप से बदल जाता है। वे कैसे बदलते हैं? हम अब इस दुनिया के तरीकों या शरीर की इच्छाओं का

पालन नहीं करते; इसके बजाय, हम परमेश्वर की अच्छी, सुखद और उत्तम इच्छा के अनुसार जीते हैं। हम अहंकार के बजाय विनम्रता का जीवन जीते हैं। संक्षेप में, हमारे दिल और मन के बदलाव से हमारे जीवन में जो फल आता है, वह है "पवित्रता"। तो, "पवित्रता" का क्या अर्थ है? पवित्रता के लिए हिब्रू शब्द, *कोदेश* (qodesh), का अर्थ है किसी चीज़ को अशुद्ध चीज़ों से अलग करना या छाँटकर अलग करना। असल में, एक विश्वासी का जीवन वह है जो दुनिया और पाप से अलग होता है। दूसरे शब्दों में कहें तो, एक विश्वासी का जीवन सांसारिक नहीं होता। "संत" (saint) के लिए ग्रीक शब्द (*hagios*)—जिसका अर्थ पवित्रता है—नकारात्मक उपसर्ग *ha-* और शब्द *ge* (जिसका अर्थ पृथ्वी या दुनिया है) से मिलकर बना है, जो एक गैर-सांसारिक स्वभाव को दर्शाता है। ...इसका यही अर्थ है। लेकिन असलियत क्या है? चर्च सांसारिक हो गया है। चर्च क्यों सांसारिक हो गया है? कारण यह है कि *हम* सांसारिक हो गए हैं। हम दुनिया के लोगों से अलग नहीं हैं। हम सांसारिक लोगों जैसी ही मान्यताएँ रखते हैं, उन्हीं की तरह बोलते और काम करते हैं, और हमारे जीवन का तरीका उन लोगों से अलग नहीं होता जो यीशु पर विश्वास नहीं करते। ऐसा जीवन जिसे सांसारिक लोगों के जीवन से अलग न किया जा सके, वह किसी भी तरह से संत का जीवन नहीं है—यह पवित्र जीवन नहीं है। तो, हमारे साथ कैसा है? क्या आप और मैं सचमुच एक संत का जीवन, एक पवित्र जीवन जी रहे हैं?

मैं आजकल एक किताब पढ़ रहा हूँ जिसका शीर्षक है *Gospel-Powered Parenting* (सुसमाचार-आधारित पालन-पोषण)। यह सिखाती है कि जब हम अपने बच्चों की परवरिश करते हैं, तो सुसमाचार माता-पिता के रूप में हमें कैसे बदलता है। चौथे अध्याय में, लेखक पास्टर विलियम पी. फ़ार्ले "एक पवित्र पिता" के बारे में बताते हैं। वे इस बात पर ज़ोर देते हैं कि घर में पिताओं को पवित्र होना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे परमेश्वर पिता पवित्र हैं। वे परमेश्वर पिता की पवित्रता के बारे में एक गहरी सच्चाई बताते हैं: "पिता की पवित्रता ऐसी है कि जब उनके पुत्र ने हमारे पापों और अपराधों का बोझ उठाया, तो परमेश्वर ने खुद को उनसे अलग कर लिया।" आप परमेश्वर पिता की इस पवित्रता को कैसे देखते हैं? हमें उस पवित्रता के प्रति कैसा रवैया अपनाना चाहिए जिसके कारण परमेश्वर पिता ने खुद को अपने इकलौते पुत्र यीशु से भी अलग कर लिया, जिन्होंने हमारे सभी पापों का बोझ उठाया था? हमें पाप से अलग जीवन जीना चाहिए। हमें इस पापी दुनिया से अलग जीवन जीना चाहिए। हमें कभी भी सांसारिक नहीं बनना चाहिए, यानी ऐसी बातें या काम नहीं करने चाहिए जो दुनिया के लोगों जैसे हों। इसके बजाय, अपने मन को नया करके और खुद में बदलाव लाकर, हमें परमेश्वर की अच्छी,

मनभावन और सिद्ध इच्छा को पहचानना चाहिए और इस पापी दुनिया के बीच एक पवित्र जीवन जीना चाहिए। इसलिए, हमारे पवित्र जीवन के ज़रिए, परमेश्वर की पवित्रता इस पापी दुनिया के सामने ज़ाहिर होनी चाहिए।

मैं अपनी बात इस तरह खत्म करना चाहूँगा: हमारे जीवन में बदलाव आना चाहिए। हमारे दिलों, हमारे विचारों और हमारे जीवन में बदलाव आना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि हम सब ऐसे लोग बनें जो परमेश्वर के वचन का पालन करके लगातार बदलते और बेहतर होते जाएँ।

दिन 22: इंतज़ार करना

[भजन संहिता 130 पर मनन]

जब मैं खुद को परखता हूँ, तो मुझे एहसास होता है कि "बेसब्री" मेरी कमियों में से एक है। क्योंकि मैं अक्सर बेसब्र हो जाता हूँ, इसलिए मैं अक्सर अपनी बातों और कामों से दूसरों को परेशान या दुखी कर देता हूँ। कई बार ऐसा भी होता है कि मेरी बेसब्री के कारण काम बिगड़ जाते हैं। इसी बीच, परमेश्वर ने मुझे 2 तीमुथियुस 3:4 पर मनन करने के लिए प्रेरित किया—एक ऐसा वचन जो बताता है कि कैसे, आखिरी दिनों के मुश्किल समय में, लोग "जल्दबाज़" (बेसब्र) होंगे। हम बेसब्र क्यों हो जाते हैं? मेरा मानना है कि बेसब्री तब पैदा होती है जब हम खुद को यकीन दिला लेते हैं कि हम और इंतज़ार नहीं कर सकते और साथ ही सब्र रखना छोड़ देते हैं। ऐसे पलों में, हम अपनी मनमर्जी से काम करते हैं। बेसब्री हमें परमेश्वर की इच्छा से आगे भागने के लिए उकसाती है; उनके सही समय का इंतज़ार न करके, हम गलत योजनाएँ और तरीके अपनाते हैं, जिससे अक्सर बुरे नतीजे निकलते हैं। बेसब्री हमें दुनियावी और शारीरिक योजनाएँ और रास्ते चुनने के लिए प्रेरित करती है। इसका एक बड़ा उदाहरण अब्राहम और सारा की कहानी है। हालाँकि उन्हें परमेश्वर का वादा मिला था, फिर भी उन्होंने विश्वास के साथ इंतज़ार करना छोड़ दिया और बेसब्री का शिकार हो गए। सारा ने अपने पति अब्राम से अपनी मिस्री दासी हाजरा के साथ संबंध बनाने को कहा (उत्पत्ति 16:1-2); अब्राम ने यह सुझाव मान लिया, हाजरा के साथ संबंध बनाए, और इस्माईल नाम के बेटे के पिता बने। फिर भी, जैसा कि हम जानते हैं, इस्माईल वह वादा किया हुआ वंश नहीं था; इसहाक था। इस तरह, बेसब्री विश्वास और सब्र को छोड़ने जैसे भयानक नतीजे की ओर ले जाती है। शायद इसीलिए इंतज़ार करने को एक गुण माना जाता है। इंतज़ार करना हमारे विश्वास के जीवन का एक ज़रूरी हिस्सा है।

भजन संहिता 62:1 और 5 हमें बताते हैं: "मेरी आत्मा को केवल परमेश्वर में ही शांति मिलती है; मेरा उद्धार उसी से आता है... हाँ, मेरी आत्मा, परमेश्वर में शांति पा; मेरी उम्मीद उसी से आती है।" इन वचनों के ज़रिए, हम सीखते हैं कि हमें पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर रहना चाहिए—वही हमारा उद्धार, हमारी उम्मीद, हमारी चट्टान और हमारा गढ़ है। कारण यह है कि परमेश्वर पर चुपचाप और पूरी तरह से भरोसा करना ही हमारी ताकत बन जाता है (यशायाह 30:15)। हमें चुपचाप परमेश्वर की ओर देखते हुए उनके उद्धार का इंतज़ार करना चाहिए। हमारा परमेश्वर निश्चित रूप से हमें छुटकारा दिलाएगा। आज के पाठ, भजन 130:6 में, भजनकार अपने इंतज़ार को इस तरह बताते हैं: "मेरी आत्मा प्रभु का इंतज़ार करती है, जैसे पहरेदार सुबह का इंतज़ार करते हैं—जैसे पहरेदार सुबह का इंतज़ार करते हैं।" भजनकार अपने इंतज़ार की तुलना उन पहरेदारों से करते हैं जो सुबह होने का इंतज़ार करते हैं। वे मानते हैं कि उनकी आत्मा प्रभु का इंतज़ार पहरेदारों के सुबह के इंतज़ार से भी ज़्यादा करती है। ये पहरेदार कौन हैं? ये वे लोग हैं जो शहर की दीवारों पर रात भर पहरा देते हैं, ताकि अंदर के लोगों की रक्षा कर सकें और दुश्मन के संभावित हमले के प्रति सतर्क और सावधान रह सकें। दूसरे शब्दों में, वे ऐसे रखवाले हैं जो दुश्मन पर नज़र रखने के लिए अपनी नींद छोड़ देते हैं। ये पहरेदार सबसे ज़्यादा किस चीज़ का इंतज़ार करते हैं? सुबह का। वे बेसब्री से सुबह होने का इंतज़ार करते हैं (पार्क युन-सन)। इसी गहरी उत्सुकता के साथ भजनकार ने प्रभु का इंतज़ार किया—और इंतज़ार करते रहे। भजनकार ने प्रभु का इंतज़ार इतनी उत्सुकता से किया जो सुबह का इंतज़ार करने वाले पहरेदारों की उत्सुकता से भी कहीं ज़्यादा थी। इसी गहरी उत्सुकता के बीच, मंदिर जाते समय उन्होंने आज के पाठ के शब्द गाए।

तो, भजनकार के इतने गहरे इंतज़ार का मकसद क्या था? वह था परमेश्वर का वचन। भजन 130 की आयत 5 देखें: "मैं प्रभु का इंतज़ार करता हूँ, मेरी आत्मा इंतज़ार करती है, और मुझे उनके वचन पर भरोसा है।" परमेश्वर का वह वचन जिसके लिए उन्होंने इतनी बेसब्री से इंतज़ार किया, वह यह भरोसा था कि परमेश्वर अपने बताए गए वादों के अनुसार माफ़ी और उद्धार देंगे (पार्क युन-सन)। इससे हम यह अंदाज़ा लगा सकते हैं कि भजनकार अपने पाप के कारण परमेश्वर की अनुशासनात्मक सज़ा भुगत रहे थे। इस दर्दनाक स्थिति का स्वरूप क्या था? आयत 1 देखें: "गहराई से मैंने आपको पुकारा है, हे प्रभु।" जिस "गहराई" में भजनकार थे, वह अत्यधिक संकट की स्थिति को दर्शाती है—जैसे डूबना या दम घुटना (पार्क युन-सन)। जैसे योना ने परमेश्वर की आज्ञा न मानकर खुद को समुद्र के गहरे पानी में एक बड़ी मछली के पेट में फँसा हुआ पाया था, वैसे ही भजनकार भी गहरे संकट में डूबे हुए थे। फिर भी, उन्होंने अपनी नज़रें प्रभु पर टिकाए रखीं और सच्ची प्रार्थना की। भजन संहिता 130 की

आयत 1 और 2 को देखिए: “हे यहोवा, मैंने गहरे संकट में तुझसे पुकार की है; हे प्रभु, मेरी आवाज़ सुन! मेरी विनती की आवाज़ पर ध्यान दे।” जब भजनकार इस तरह प्रार्थना कर रहा था, तो वह जानता था कि अगर प्रभु अतीत से लेकर वर्तमान तक किए गए सभी पापों को नज़रअंदाज़ करने के बजाय उन पर सज़ा देते (पार्क युन-सन), तो कोई भी उनके सामने खड़ा नहीं हो पाता (आयत 3)। अगर परमेश्वर हमारे पापों को माफ़ न करते और इसके बजाय हर पाप का—चाहे वह अतीत का हो, वर्तमान का हो या भविष्य का—हिसाब रखते, तो इस दुनिया में पवित्र प्रभु के सामने खड़े होने की हिम्मत कौन करता? हालाँकि एक पापी पवित्र प्रभु के सामने खड़े होने की हिम्मत नहीं कर सकता, फिर भी भजनकार को परमेश्वर की क्षमा पर भरोसा था (आयत 4) और उसने नम्रता और आदर-भाव के साथ (आयत 4) अपने पापों की माफ़ी के लिए दिल से प्रार्थना की। फिर उसने परमेश्वर के क्षमा के वचन का इंतज़ार किया। उसने कितनी बेसब्री से उसका इंतज़ार किया होगा! पाप करने और परमेश्वर की ताड़ना के कारण गहरी निराशा में डूबने के बाद, और परमेश्वर की ओर देखते हुए माफ़ी के लिए दिल से प्रार्थना करने के बाद, कोई व्यक्ति परमेश्वर की यह आवाज़ सुनने के लिए कितना बेताब होगा: “मैंने तुम्हारे सभी पापों को मिटा दिया है; अब मुझे वे याद नहीं हैं।” अगर हम वह आवाज़ सुनते, तो हम आज़ादी और मुक्ति की खुशी में कैसे उछलते-कूदते और परमेश्वर की स्तुति और आराधना करते! माफ़ी के लिए दिल से प्रार्थना करने के बाद, भजनकार ने परमेश्वर के सामने विश्वास के साथ चुपचाप इंतज़ार किया और उनके क्षमा के वचन को सुनने की इच्छा की। ऐसा करते हुए, उसने परमेश्वर से प्रार्थना करते हुए इंतज़ार किया कि वे उसे—क्षमा के प्रमाण के रूप में—उसके पापों के कारण पैदा हुई दर्दनाक स्थिति से, यानी “गहरे संकट” से छुटकारा दिलाएँ। संक्षेप में, उसने परमेश्वर की बचाने वाली कृपा के लिए प्रार्थना की, उसकी उम्मीद की और उसका इंतज़ार किया। भजनकार परमेश्वर की बचाने वाली कृपा के लिए प्रार्थना करने, उसकी उम्मीद करने और उसका इंतज़ार करने में कैसे सक्षम हुआ? मुझे इसका जवाब आज के पाठ की आयत 7 और 8 में मिलता है: “हे इस्राएल, यहोवा पर आशा रख! क्योंकि यहोवा के पास अटूट प्रेम है, और उसके पास भरपूर छुटकारा है। और वह इस्राएल को उसके सभी पापों से छुटकारा दिलाएगा।” भजनकार को परमेश्वर के अटूट प्रेम और भरपूर छुटकारे पर भरोसा था, इसलिए वह पापों की माफ़ी और उद्धार की कृपा के लिए परमेश्वर से प्रार्थना कर सका, उम्मीद रख सका और उनका इंतज़ार कर सका। क्या आप सच में परमेश्वर के अटूट प्रेम और भरपूर छुटकारे पर विश्वास करते हैं? क्या आप सच में मानते हैं कि परमेश्वर ही वह है जो आपको आपके सभी पापों से छुटकारा दिलाता है?

क्या आपमें से कोई, शायद, भजनकार की तरह गहरी मुसीबत में फँसा हुआ है? क्या आप भारी संकट में हैं— और गहरे धँसते जा रहे हैं, जैसे पानी में डूब रहे हों? और क्या आपको एहसास है कि आप उस गहरी मुसीबत में इसलिए हैं क्योंकि आपने पाप किया है? अगर ऐसा है, तो मैं आपसे गुज़ारिश करता हूँ कि आप विश्वास के साथ—जैसा भजनकार ने किया था—परमेश्वर के अटूट प्रेम और भरपूर छुटकारे की ओर देखें, और सच्चे दिल से प्रार्थना करें, उम्मीद रखें और इंतज़ार करें—ऐसा दिल जो पापों की माफ़ी और परमेश्वर की उद्धार करने वाली कृपा के लिए तड़प रहा हो। प्रभु का इंतज़ार उतनी ही बेसब्री से करें जितनी बेसब्री से पहरेदार सुबह का इंतज़ार करता है। परमेश्वर ज़रूर आपके सभी पापों को माफ़ कर देगा और आपको उस भारी संकट से बाहर निकालेगा जिसमें आप फँसे हुए हैं।

दिन 23: वचन का फैलना

[प्रेरितों के काम 19:8-20 पर मनन]

A. W. Tozer, जिन्हें अक्सर 21वीं सदी का नबी कहा जाता है, ने अपनी किताब *That Incredible Christian* में लिखा है: “आजकल चर्च कमज़ोर मसीहियों से भरे हुए हैं। वे चर्च तभी आते हैं जब उन्हें कुछ मज़ेदार या मनोरंजक चीज़ मिलती है... नतीजतन, वे नैतिक और आध्यात्मिक रूप से कमज़ोर बने रहते हैं। वे बस कमज़ोर हाथों से उस विश्वास को पकड़े रहते हैं जिसे वे पूरी तरह समझते भी नहीं हैं।” इसका कारण क्या है? Tozer का कहना है कि ऐसा इसलिए है क्योंकि असंतुलित प्रचारक—बिल्कुल सेल्समैन की तरह जो किसी प्रोडक्ट की सिर्फ़ खूबियां बताते हैं और कमियां छिपाते हैं—नकारात्मक पहलुओं को छिपाते हैं और सिर्फ़ सकारात्मक बातें करते हैं। हमें एक नकली सुसमाचार (गॉस्पेल) से धोखा दिया जा रहा है। यह एक नकली सुसमाचार है अगर हम दुख सहने के रास्ते को सिखाए बिना 'स्वर्गीय नगर' (Celestial City) के रास्ते पर ज़ोर दें; या जंगल (wilderness) के बारे में बताए बिना 'प्रतिज्ञा की हुई भूमि' (Promised Land) पर ज़ोर दें; या मौत के बिना पुनरुत्थान (resurrection) पर ज़ोर दें। हम ऐसी दुनिया में रहते हैं जो नकली सुसमाचारों से भरी हुई है। चर्च के मंचों से ऐसे झूठे सच बताए जा रहे हैं। चर्च लोगों को बहुत ज़्यादा आरामदेह महसूस करा रहे हैं और ऐसे कमज़ोर मसीहियों को पाल-पोस रहे हैं जो सेवा करने के बजाय सेवा पाना चाहते हैं।

हमें सच्चे और असली सच से भरे हुए विश्वासी बनना होगा। हमारा विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च (Victory Presbyterian Church) सच्चे वचन से भरा हुआ चर्च होना चाहिए। इसे पाने के लिए हमें क्या करना होगा? आज के वचन, प्रेरितों के काम 19:20 को देखें, तो बाइबल कहती है: “इस तरह प्रभु का वचन दूर-दूर तक फैला

और उसकी शक्ति बढ़ी।" आज के वचन और "वचन का फैलना" (The Flourishing of the Word) विषय पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं तीन बातें बताना चाहता हूँ कि हमारे चर्च में वचन का यह फैलाव कैसे हो सकता है।

पहली बात, हमारे चर्च में वचन के फैलने के लिए, हम सभी को प्रभु का वचन सुनना होगा।

आज के वचन, प्रेरितों के काम 19:10 को देखें: "यह दो साल तक चलता रहा, ताकि एशिया के सभी निवासियों ने—यहूदियों और यूनानियों दोनों ने—प्रभु का वचन सुना।" प्रेरितों के काम 18:19–21 में बताया गया है कि अपनी दूसरी मिशनरी यात्रा के आखिर में—यरूशलेम लौटने से ठीक पहले—पौलुस इफिसुस गए और वचन का प्रचार किया; वहाँ के यहूदियों ने उनके संदेश पर बहुत सकारात्मक प्रतिक्रिया दी और उनसे और देर तक रुकने के लिए कहा। हालाँकि पॉल ने उस समय अनुरोध ठुकरा दिया था, लेकिन उन्होंने वादा किया था कि अगर भगवान ने मौका दिया तो वे वापस आएंगे; प्रेरितों के काम 19:1 में, हम उन्हें इफिसुस में वापस देखते हैं, जहाँ भगवान द्वारा मौका मिलने पर उन्होंने अपना वादा पूरा किया। पॉल ने तीन महीने तक इफिसुस के आराधनालय में परमेश्वर के राज्य के बारे में विस्तार से सिखाया (पद 8)। हालाँकि, कुछ लोगों ने अपने दिल कठोर कर लिए, मानने से इनकार कर दिया, और भीड़ के सामने "उस मार्ग" (ईसाई धर्म) के बारे में बुरा-भला कहा (पद 9)। उन्होंने न केवल पॉल के संदेश पर विश्वास नहीं किया, बल्कि जानबूझकर अपने दिल भी कठोर कर लिए। इससे पता चलता है कि उनकी आध्यात्मिक स्थिति जिद्दी और कभी न सुधरने वाले अविश्वास की थी। उस स्थिति में, वे आक्रामक हो गए; उन्होंने सबके सामने पॉल के सुसमाचार की बुराई की। नतीजतन, पॉल ने विश्वास करने वाले शिष्यों को अलग कर लिया और दो साल तक हर दिन टायरानस के हॉल में उपदेश दिया (पद 10)। पश्चिमी पांडुलिपियों में बताया गया है कि टायरानस के हॉल में पॉल की गहन शिक्षा का समय पाँचवें घंटे से दसवें घंटे (सुबह 11:00 बजे से शाम 4:00 बजे तक) तक था (मेट्रज़गर)। यह तरीका एशिया माइनर के सांस्कृतिक रीति-रिवाजों को दर्शाता है; उस समय, सुबह 11:00 बजे से शाम 4:00 बजे के बीच का समय मुख्य रूप से गर्मी से बचने के लिए झपकी लेने या आराम करने का समय होता था। यहूदी और गैर-यहूदी दोनों ही इस ब्रेक का फायदा उठाकर पॉल से परमेश्वर के वचन की गहन शिक्षा लेते थे (यू सांग-सेओप)। नतीजतन, एशिया प्रांत में रहने वाले सभी लोगों ने—चाहे वे यहूदी हों या यूनानी—प्रभु का वचन सुना (पद 10)। यहाँ, "एशिया" का अर्थ अनातोलिया प्रायद्वीप के पश्चिमी तट पर फैले उस क्षेत्र से है, जिसकी सीमाएँ उत्तर में बिथिनिया, पूर्व में गलातिया और दक्षिण में लिसिया से लगती थीं, और जो खुद इफिसुस से भी आगे तक फैला हुआ था (जे.ए.

हैरिल)। उस समय अकेले इफिसुस की आबादी लगभग 2,50,000 थी, और आसपास के इलाकों की कुल आबादी उस संख्या से कहीं ज़्यादा रही होगी। इससे पता चलता है कि टायरानस के हॉल में कितने सारे लोगों ने परमेश्वर का वचन सुना होगा (यू सांग-सेओप)। इस संदर्भ में, "वचन के फैलने" का अर्थ है उस संदेश का पूरे इलाके में फैलना, जिससे ज़्यादा से ज़्यादा लोग सुसमाचार (गॉस्पेल) सुनते हैं और यीशु को अपना उद्धारकर्ता और प्रभु मानते हैं। दूसरे शब्दों में, "वचन के बढ़ने" का मतलब है विश्वास करने वालों की संख्या और विश्वास का बढ़ना। हालाँकि, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि वचन के फैलने के बावजूद, कुछ लोग अपने दिल कठोर कर लेंगे और उसे मानने से इनकार कर देंगे। वे आक्रामक रुख अपना सकते हैं और संदेश की बुराई कर सकते हैं। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर का वचन सुनने वालों को दो समूहों में बाँटता है: वे जो वचन को सुनते हैं, उस पर विश्वास करते हैं और उसका पालन करते हैं, और वे जो उसे सुनते तो हैं लेकिन विश्वास करने या पालन करने से इनकार करते हैं। हमें उन लोगों में शामिल होना चाहिए जो परमेश्वर के वचन को सुनते हैं और उसका पालन करते हैं। इसलिए, हमें अपनी कलीसिया में वचन का प्रसार होते देखना चाहिए। दूसरी बात, हमारी कलीसिया में वचन के प्रसार के लिए, प्रभु यीशु के नाम की महिमा होनी चाहिए।

आज के वचन, प्रेरितों के काम 19:17 को देखें: "इफिसुस में रहने वाले सभी यहूदियों और यूनानियों ने इसके बारे में सुना और वे डर गए, और प्रभु यीशु के नाम का बहुत सम्मान किया गया।" इस अंश—प्रेरितों के काम 19:11-17—की पृष्ठभूमि से पता चलता है कि पौलुस के हाथों अद्भुत चमत्कार हुए थे। विशेष रूप से आयत 11 पर ध्यान दें: "परमेश्वर ने पौलुस के द्वारा अद्भुत चमत्कार किए।" यह दिखाता है कि पौलुस की सेवकाई, यीशु की सेवकाई की तरह ही, वचन और सामर्थ्य दोनों से युक्त थी। एशिया में इतने सारे लोगों का ध्यान आकर्षित होने का कारण यह था कि वचन की सामर्थ्य चंगाई और दुष्टात्माओं को निकालने के माध्यम से प्रकट हुई थी (यू सांग-सेओप)। यह दर्शाता है कि पौलुस द्वारा प्रचारित प्रभु के वचन के माध्यम से परमेश्वर का राज्य आ रहा था, और साथ ही लोगों को शैतान और बुरी आत्माओं के अधिकार से मुक्त कर रहा था। इसी संदर्भ में एक और घटना घटी, वह थी स्केवा के सात बेटों की अपमानजनक हार (आयतें 13-16)। कुछ यहूदी एक जगह से दूसरी जगह जाकर दुष्टात्माओं को निकालने का काम करते थे; उनमें से स्केवा के सात बेटों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है (पाठ में स्केवा की पहचान एक महायाजक के रूप में की गई है)। उन्होंने उस यीशु के नाम का इस्तेमाल करके बुरी आत्माओं को निकालने की कोशिश की, जिसके बारे में पौलुस प्रचार करता था (पद 13), लेकिन एक बुरी आत्मा ने जवाब दिया, "मैं यीशु को जानती हूँ और पौलुस को भी जानती हूँ, पर तुम

कौन हो?" (पद 15)। बुरी आत्माएँ अच्छी तरह जानती हैं कि कौन सच में विश्वास नहीं करता, ठीक वैसे ही जैसे वे जानती हैं कि सच्चे विश्वासी कौन हैं। इसलिए, जो कोई भी बुरी आत्माओं के हमले का शिकार या मज़ाक का पात्र नहीं बनना चाहता, उसे यीशु मसीह पर सच्चे दिल से विश्वास करना चाहिए (पार्क युन-सन)। फिर बुरी आत्मा से ग्रस्त उस आदमी ने स्केवा के सातों बेटों पर हमला कर दिया और उन पर हावी हो गया (पद 16); वे घायल और नग्न अवस्था में घर से भाग निकले। इफिसुस में रहने वाले सभी यहूदियों और यूनानियों को इस घटना के बारे में पता चला और वे डर गए (ऐसा डर जिससे परमेश्वर के प्रति आदर और सम्मान की भावना पैदा हुई)। आखिरकार, इस घटना के ज़रिए परमेश्वर ने इन सभी लोगों के सामने प्रभु यीशु के नाम को ऊँचा किया।

यहाँ 'वचन' के फलने-फूलने का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है कि परमेश्वर की शक्ति के प्रकट होने से प्रभु यीशु का नाम ऊँचा किया जाए। और यह शक्ति किसके द्वारा प्रकट हुई? यह पौलुस के द्वारा प्रकट हुई, जो इतने सच्चे विश्वास वाला व्यक्ति था कि बुरी आत्माएँ भी उसे पहचानती थीं और उससे डरती थीं (पद 13-16)। बुरी आत्माओं का पौलुस को पहचानना यह दिखाता है कि उसका विश्वास सच्चा था—जिसने उन्हें उससे डरने पर मजबूर कर दिया। वे सबसे ज़्यादा इसलिए डरी हुई थीं क्योंकि सच्चे विश्वास वाला व्यक्ति, पौलुस, प्रभु यीशु के साथ था। हमारे विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च में 'वचन' के फलने-फूलने के लिए, हमारे प्रभु यीशु का नाम ऊँचा किया जाना ज़रूरी है।

तीसरी और आखिरी बात, हमारे चर्च में 'वचन' के फलने-फूलने के लिए, हम सभी को एक स्वीकारोक्ति करनी होगी।

आज के वचन, प्रेरितों के काम 19:18 को देखें: "जो लोग विश्वास करते थे, उनमें से बहुत से लोग आए और खुलकर स्वीकार किया कि उन्होंने क्या किया था।" जब इस तरह से प्रभु यीशु का नाम ऊँचा किया गया, तो विश्वास करने वालों और विश्वास न करने वालों, दोनों के बीच उल्लेखनीय बदलाव आए (पद 18-19)। जिन लोगों ने यीशु पर विश्वास करना शुरू किया था, वे अपने कामों को स्वीकार करने के लिए आगे आए। यहाँ जिन "कामों" का ज़िक्र है, वे जादू-टोने और तंत्र-मंत्र से जुड़ी वे प्रथाएँ हैं जिनमें वे पौलुस की सेवा के ज़रिए यीशु पर विश्वास करने के बाद भी शामिल रहे थे (यू सांग-सेओप)। यह आज के कुछ कोरियाई ईसाइयों जैसा ही है जो यीशु पर विश्वास करने के बावजूद, भविष्य बताने, चेहरा पढ़ने और भविष्य जानने के अन्य तरीकों की तलाश करते हैं। ऊपर से तो वे यीशु पर विश्वास का दावा करते थे, फिर भी उनका जीवन उनके अतीत के शर्मनाक तौर-तरीकों

में फँसा हुआ था (यू सांग-सेओप)। यह बदलाव सिर्फ विश्वास करने वालों तक ही सीमित नहीं था; उन पेशेवर तांत्रिकों में भी बदलाव आया जिन्होंने अभी तक प्रभु पर विश्वास नहीं किया था। वे जादू-टोने से जुड़ी अपनी किताबें लाए और सभी के सामने उन्हें जला दिया। इस काम ने उन किताबों की बातों को सार्वजनिक रूप से नकारा और यह स्वीकार किया कि वे झूठी थीं। आग में नष्ट की गई किताबों की कुल कीमत 50,000 चाँदी के सिक्के आँकी गई थी। चूंकि एक चाँदी का सिक्का एक *ड्रैकमा*—यानी रोज़ की आम मज़दूरी—के बराबर था, इसलिए विद्वानों का कहना है कि जलाई गई किताबों की कीमत बहुत ज़्यादा थी, जो 50,000 दिनों की मज़दूरी के बराबर थी।

तो, वचन के प्रबल होने का क्या मतलब है? इसका मतलब है कि जब प्रभु यीशु के नाम का सम्मान किया जाता है, तो विश्वास करने वाले उन शर्मनाक पापों को मान लेते हैं और उन्हें छोड़ देते हैं जिनसे वे पहले चिपके हुए थे। इसके अलावा, वचन के प्रबल होने का मतलब एक ऐसी लहर से है जहाँ, प्रभु यीशु के नाम की महिमा होने के कारण, जो लोग विश्वास नहीं करते वे भी पछतावा करते हैं और प्रभु के पास लौट आते हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि वचन की जीत का यह काम यहाँ विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च में हो।

विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च एक ऐसा चर्च होना चाहिए जहाँ प्रभु का वचन प्रबल हो। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि प्रभु के वचन के ज़रिए, हमें अपने आप से लड़ाई में जीत हासिल करनी चाहिए और पाप भरी, पुरानी आदतों को छोड़ देना चाहिए। इसका यह भी मतलब है कि, जैसे जादूगरों ने प्रभु के पास लौटने के लिए अपनी जादुई प्रथाओं को छोड़ दिया था, वैसे ही हमें एक ऐसी लहर देखनी चाहिए जिसमें जो लोग अभी यीशु पर विश्वास नहीं करते, वे उनकी ओर मुड़ें। हमें प्रभु का वचन सुनना चाहिए ताकि हम शैतान की ताकतों से लड़ सकें और विजयी हो सकें। हमें प्रभु के वचन की शक्ति का अनुभव करना चाहिए। हमें प्रभु के नाम की महिमा होते हुए देखना चाहिए। हमें अपने पापों को मानते हुए वचन के ज़रिए एक विजयी जीवन जीना चाहिए। विजय!

दिन 25: परमेश्वर, मेरा मददगार

[भजन संहिता 121 पर मनन]

कुछ समय पहले, वेस्टमिंस्टर थियोलॉजिकल सेमिनरी के पूर्व छात्रों की एक सभा में, मैंने चीन में सेवा कर रहे एक मिशनरी जोड़े और उनके चार बच्चों के साथ खाना खाया और फिर उनकी मिशन रिपोर्ट सुनी। उनके चार बेटे थे, इसलिए मिशनरी पादरी बच्चों की देखभाल करते थे जबकि उनकी पत्नी रिपोर्ट पेश करती थीं; मुझे यह जानकर—और तस्वीरों में देखकर—बहुत हैरानी हुई कि उनकी सेवा मुख्य रूप से वेश्याओं तक पहुँचने पर केंद्रित थी। पादरी ने बताया कि वे परमेश्वर का वचन सिखाने के लिए बस से दस घंटे की यात्रा करते थे और फिर दो घंटे पैदल चलकर पहाड़ों की एक दूर-दराज की घाटी तक पहुँचते थे; उन्होंने माना कि वहाँ के लोगों की गहरी आध्यात्मिक भूख को देखकर उन्हें ही परमेश्वर का अनुग्रह मिला। अपनी रिपोर्ट साझा करने और प्रार्थना की अपील करने के बाद, पत्नी ने दूसरों के लिए आशीष का जरिया बनने की इच्छा जताई; मैंने उन्हें चर्च प्लांट करने वाले पादरियों और छोटी मंडलियों के लिए प्यार और चिंता के आँसू बहाते देखा। जबकि मिशन रिपोर्ट अक्सर आर्थिक मदद की अपील के साथ खत्म होती हैं, यह जोड़ा इसके बजाय *हमारी* मदद करने की इच्छा के बारे में बात कर रहा था—वे यहाँ अपने समय के दौरान आशीष का जरिया बनना चाहते थे, खासकर नए या छोटे चर्चों के पादरियों के लिए। ऐसे लोगों को देखकर जिन्हें खुद मदद की ज़रूरत थी, लेकिन जो दूसरों की मदद करना चाहते थे, मुझे याद आया कि प्रभु के प्रति प्रेम और समर्पण का दिल कितना अनमोल और सुंदर होता है। फिर भी, इतनी सुंदर भावना के बावजूद, कभी-कभी—चाहे कभी-कभार या अक्सर—हमें खुद मदद की सख्त ज़रूरत होती है। तो फिर, उस मदद के लिए हमें किसकी ओर देखना चाहिए? आज के अंश, भजन संहिता 121:1-2 में, भजनकार कहता है: "मैं अपनी आँखें पहाड़ों की ओर उठाता हूँ—मेरी मदद कहाँ से आती है? मेरी मदद प्रभु से आती है, जो स्वर्ग और पृथ्वी का बनाने वाला है।" पहाड़ों की ओर अपनी आँखें उठाने और अपनी मदद के स्रोत पर विचार करने के बाद, भजनकार ने निष्कर्ष निकाला, "मेरी मदद प्रभु से आती है, जो

स्वर्ग और पृथ्वी का बनाने वाला है।" यहाँ, "पहाड़" इस दुनिया की विशाल, प्रभावशाली ताकतों का प्रतीक हैं (पार्क युन-सन)। भजनकार को यह एहसास हुआ कि परमेश्वर ही उसका उद्धारकर्ता और मदद का स्रोत है, जब उसने इन सांसारिक ताकतों से मदद पाने की कोशिश की—और असफल रहा (पार्क युन-सन)। जब हमें सख्त ज़रूरत होती है, तो आप और मैं मदद के लिए किसकी ओर देखते हैं? क्या हम भी भजनकार की तरह कभी-कभी पूछते हैं, "मेरी मदद कहाँ से आएगी?" और परमेश्वर के बजाय लोगों या चीज़ों की ओर देखते हैं? हममें एक पापी स्वभाव होता है जो मदद के लिए पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर रहने का विरोध करता है, जब तक कि हमें अपनी लाचारी का पूरी तरह एहसास न हो जाए। नतीजतन, हम अक्सर स्वर्ग और पृथ्वी के बनाने वाले परमेश्वर के बजाय, उन्हीं "पहाड़ों" से मदद मांगते हैं जिन्हें उसने बनाया है। हालाँकि, आखिरकार हम निराश और हताश हो सकते हैं जब वे सांसारिक "पहाड़" सच्ची मदद देने में नाकाम रहते हैं। फिर भी, पवित्र आत्मा के काम के ज़रिए, हम आखिरकार सर्वशक्तिमान सृष्टिकर्ता—जिसने उन पहाड़ों को भी बनाया—की ओर देखने और सच्चे दिल से परमेश्वर की मदद मांगने के लिए प्रेरित होते हैं। वह मदद पाकर, हम भी भजनकार की तरह यह स्वीकार करते हैं: "मेरी मदद प्रभु से आती है, जो स्वर्ग और पृथ्वी का बनाने वाला है।"

तो, आज का वचन कैसे बताता है कि परमेश्वर—जिसे भजनकार अपना मददगार मानता है—असल में आपकी ओर मेरी मदद कैसे करता है? सबसे पहले, परमेश्वर, जो मेरा मददगार है, हमें ठोकर खाने से बचाता है।

आज के वचन में भजन संहिता 121:3 के पहले हिस्से को देखें: "वह तुम्हारे पैर को फिसलने नहीं देगा..." इसका मतलब है कि परमेश्वर, जो हमारी मदद करता है, हमें सच्चाई के रास्ते से भटकने से रोकता है (पार्क युन-सन)। यह परमेश्वर की कितनी अनमोल आशीष और कृपा है! हम सभी कमज़ोर प्राणी हैं—भटके हुए भेड़ों की तरह, जो अक्सर अपने ही रास्तों पर चलना चाहते हैं (यशायाह 53:6)—फिर भी यीशु, जो मार्ग, सत्य और जीवन है, हमें सच्चाई के रास्ते से भटकने से बचाता है; यह कितनी बड़ी आशीष और कृपा है! कोरियाई युवाओं के भटकने के कारणों के बारे में जानने के लिए, मैंने ऑनलाइन जानकारी देखी और निम्नलिखित सर्वेक्षण परिणाम पाए: सैमसंग मेडिकल सेंटर के बाल और किशोर मनोरोग विभाग के प्रोफेसर होंग सोंग-डो और किम जी-हे के नेतृत्व में एक शोध टीम ने सियोल में 431 मिडिल और हाई स्कूल के छात्रों (224 लड़के और 207 लड़कियाँ) का गलत व्यवहार के बारे में सर्वेक्षण किया। उन्होंने पाया कि लड़कों के लिए मुख्य कारण "चिंता और नकारात्मक भावनाएँ" थीं, जबकि लड़कियों के लिए मुख्य कारण "खुद के बारे में गलत सोच" थी। प्रोफेसर होंग की टीम ने

बताया कि गलत व्यवहार के कारण लिंग के आधार पर अलग-अलग होते हैं: लड़के अक्सर बेचैनी जैसी नकारात्मक भावनाओं से राहत पाने के लिए कुछ समय के लिए गलत काम करते हैं, जबकि लड़कियों में खुद के बारे में नकारात्मक सोच और विचार ऐसे व्यवहार के मुख्य कारण पाए गए। किशोरों में गलत व्यवहार के कारणों के तौर पर "नकारात्मक भावनाओं" (लड़कों के लिए) और "खुद के बारे में नकारात्मक सोच" (लड़कियों के लिए) की पहचान करने वाले सर्वे के नतीजों पर सोचते हुए, मैंने सोचा कि हम ईसाई, जो यीशु (हमारे सत्य) में विश्वास करते हैं और उनका अनुसरण करते हैं, खुद सत्य से क्यों भटक जाते हैं। मेरा मानना है कि इसका एक कारण नेक लोगों के दुख-तकलीफों के प्रति नकारात्मक नज़रिया है। मेरी यह सोच भजन संहिता 73 से आती है, जहाँ भजनकार आसाफ नेक लोगों के दुख और बुरे लोगों की खुशहाली के बीच के अंतर को देखकर लगभग डगमगा गए थे। आप क्या सोचते हैं? क्या आप सहमत हैं कि नेक लोगों के दुख के प्रति नकारात्मक नज़रिया ईसाइयों के सत्य से भटकने का एक कारण हो सकता है? अगर हाँ, तो हम दुख के प्रति सकारात्मक नज़रिया कैसे अपना सकते हैं? मुझे इसका जवाब फिलिप्पियों 1:29 में मिला: "क्योंकि तुम्हें मसीह की ओर से न केवल उस पर विश्वास करने का, बल्कि उसके लिए दुख सहने का भी वरदान मिला है।" अगर हम यह समझें कि यीशु मसीह के लिए दुख सहना परमेश्वर की कृपा का काम है—और उस कृपा को कृतज्ञता के साथ स्वीकार करना और संजोना सीखें—तो हम सत्य से नहीं भटकेंगे। हमें इसके लिए प्रार्थना करनी चाहिए। हमें परमेश्वर से यह समझने की कृपा माँगनी चाहिए कि दुख असल में उनकी कृपा और आशीष का ही एक रूप है, ताकि हम सत्य से दूर न भटकें। इसके अलावा, जब हम प्रार्थना करें, तो हमें इस विश्वास के साथ करनी चाहिए कि परमेश्वर हमें गिरने या डगमगाने से बचाते हैं (भजन संहिता 121:3)।

दूसरी बात, जो परमेश्वर हमारी मदद करता है, वही हमारी देखभाल और सुरक्षा भी करता है।

तो, परमेश्वर हमारी सुरक्षा कैसे करता है? सबसे पहले, बाइबल हमें बताती है कि वह बिना सोए या झपकी लिए हमारी रखवाली करता है। भजन संहिता 121 की आयत 3 के आखिरी हिस्से और आयत 4 को देखिए: "जो तुम्हारी रखवाली करता है, वह ऊँधेगा नहीं; सचमुच, जो इस्राएल की रखवाली करता है, वह न तो ऊँधेगा और न ही सोएगा।" हाल ही में, मेरा बेटा डिलन बुरे सपनों की वजह से रात में सोने से डरने लगा था। इसलिए, मैंने उसे सोने से पहले बाइबल पढ़ने और प्रार्थना करने के लिए प्रोत्साहित किया। पिछले रविवार और सोमवार को, उसने मेरी पत्नी को बताया कि उसने सपने में एक गोरिल्ला देखा था। उसे दिलासा देने के लिए, पत्नी ने उसे दवा

भरा एक छोटा गुब्बारा पकड़ने को कहा—यह समझाते हुए कि सोते समय यह गोरिल्ला को मार डालेगा लेकिन उसे कुछ नहीं होगा—लगता है कि उस रविवार की रात वह अच्छी तरह सोया। हम डिलन से चाहे कितना भी प्यार क्यों न करें, हम रात भर उसके सिर पर हाथ रखकर और प्रार्थना करते हुए उसके पास नहीं बैठ सकते, जब उसे बुरे सपने आ रहे हों। हम बिना ऊँचे या सोए अपने बच्चों की रखवाली कैसे कर सकते हैं? फिर भी, बाइबल साफ-साफ कहती है कि हमारा स्वर्गीय पिता बिना सोए या ऊँचे हमारी रखवाली करता है। लेकिन समस्या क्या है? समस्या यह है कि जब परमेश्वर की मदद में देरी होती है या हमारी प्रार्थनाओं का जवाब नहीं मिलता, तो कभी-कभी हम सोचने लगते हैं कि क्या परमेश्वर सो गया है। असल में, परमेश्वर सोता नहीं है। हमारा परमेश्वर मुश्किलों का सामना कर रहे विश्वासियों की मदद अपने तय समय पर करता है। इसलिए, विश्वासियों को धैर्य रखना सीखना चाहिए। दूसरी बात, परमेश्वर हमारी छाया बनता है और हमें नुकसान पहुँचाने वाली चीज़ों से बचाता है। कृपया आज का वचन, भजन संहिता 121:5-6 देखें: “यहोवा ही तेरा रक्षक है; यहोवा तेरे दाहिने हाथ की ओर तेरी छाया है। दिन में धूप तुझे न लगेगी, और न रात में चाँद।” जब मैंने इस बात पर मनन किया कि “परमेश्वर मेरे दाहिने हाथ की ओर मेरी छाया है,” तो मेरे मन में एक विचार आया। मैंने सोचा कि अगर रेगिस्तान की तेज़ धूप लगातार मुझ पर पड़ती तो मेरा क्या होता; उस सोच में, इस सच्चाई ने कि परमेश्वर मेरी छाया है, मेरे दिल को सुकून पहुँचाया। जैसे हम गर्मियों की चिलचिलाती धूप में किसी बड़े पेड़ की छाया और उसके नीचे पनाह चाहते हैं, वैसे ही कभी-कभी—जब हम इस दुनिया की मुश्किलों से थक-हार जाते हैं—तो हम परमेश्वर पिता के करीब आना चाहते हैं, जो हमारी छाया बनकर रहते हैं। इस रेगिस्तान जैसी दुनिया में रहते हुए, हमें यह जानकर बहुत सुकून मिलता है कि जब नुकसान पहुँचाने वाली ताकतें—जैसे दिन की तेज़ धूप या रात का चाँद—हमें नुकसान पहुँचाने की कोशिश करती हैं, तो परमेश्वर हमारी दाहिनी ओर हमारी छाया बनकर खड़े रहते हैं। जो परमेश्वर हमारी छाया हैं, वे हमें इस दुनिया की नुकसान पहुँचाने वाली चीज़ों से बचाते हैं जो हम पर हमला करती हैं। वे हमारी ढाल हैं; जैसे-जैसे हम ऊपर की ऊँचाइयों की ओर बढ़ते हैं, वे इस रेगिस्तान जैसी दुनिया के सभी खतरों से हमारी रक्षा और हिफ़ाज़त करते हैं। इसलिए, हम भी वही बात कह सकते हैं जो दाऊद ने भजन संहिता 23:4 में कही थी: “भले ही मैं मौत की छाया की घाटी से गुज़रूँ, मैं किसी बुराई से नहीं डरूँगा, क्योंकि आप मेरे साथ हैं; आपकी लाठी और आपकी छड़ी मुझे दिलासा देती हैं।” आखिर में, तीसरी बात यह है कि परमेश्वर हमें सभी मुसीबतों से बचाते हैं। आज के वचन, भजन संहिता 121:7 को देखिए: “प्रभु आपको हर नुकसान से बचाएँगे—वह आपके जीवन की रखवाली करेंगे।” जो परमेश्वर हमारी मदद करते हैं, वे उद्धार के

परमेश्वर हैं; वे हमें गिरने से बचाते हैं, हर खतरे से हमारी रक्षा और हिफाजत करते हैं, और हमें सभी मुसीबतों से निकालते हैं। क्या यह दिलचस्प नहीं है? भले ही परमेश्वर हमारी रक्षा और देखभाल करते हैं, फिर भी हमें कई तरह की मुसीबतों से गुज़रना पड़ता है। हम स्वाभाविक रूप से सोच सकते हैं कि अगर स्वर्ग और पृथ्वी के रचयिता हमारी रक्षा कर रहे हैं, तो हमें कोई परेशानी नहीं होनी चाहिए; फिर भी, पवित्र शास्त्र हमें बताता है कि जब परमेश्वर हमारी देखभाल करते हैं, तो वे हमें कई तरह की मुसीबतों का अनुभव करने देते हैं—ताकि वे हमें उनसे बचा सकें। मेरा मानना है कि हालाँकि परमेश्वर हमें सच्चाई से भटकने नहीं देते, लेकिन वे मुसीबत आने देते हैं क्योंकि वे हमें निखारना चाहते हैं और हमें अपनी आशीष वाली जगह पर आगे ले जाना चाहते हैं।

कुछ समय पहले मुझे यह देखकर सुखद आश्चर्य हुआ कि कोरिया से "प्रीसेप्ट" मिनिस्ट्री द्वारा भेजी गई एक भक्ति-संबंधी पुस्तिका के दिसंबर अंक में मेरे द्वारा लिखा गया एक लेख छपा था। मुझे नहीं पता था कि इसे किसने भेजा है, लेकिन जब मैं उस पुस्तिका को यूँ ही पलट रहा था, तो मेरी नज़र एक ऐसे लेख पर पड़ी जो जाना-पहचाना लगा; ध्यान से देखने पर मुझे उसमें अपना नाम और उस चर्च का नाम दिखा जहाँ मैं सेवा करता हूँ। बाद में मुझे पता चला कि मेरी एक परिचित बहन—जो 'प्रीसेप्ट' (Precept) की एडिटोरियल टीम में काम करती हैं—उन्होंने मेरे डिवोशनल लेख को लिया, उसका सुंदर सारांश बनाया और उसे उस पुस्तिका में शामिल किया। होशे 2:14 पर आधारित यह लेख इस बात पर केंद्रित था कि कैसे परमेश्वर इस्राएल के लोगों को जंगल में ले जाते हैं ताकि उन्हें अनुशासित करते हुए उनके दिलों से प्यार भरी बातें कर सकें; इसमें इस सच्चाई को उजागर किया गया था कि ऐसा अनुशासन असल में परमेश्वर की ओर से एक आशीष है—यानी दुख और कठिनाइयाँ वास्तव में ईश्वरीय आशीष हैं। सचमुच, जिन मुश्किलों, विपत्तियों और कष्टों का हम सामना करते हैं, वे परमेश्वर की ओर से आशीष हैं। हालाँकि उस समय ये पल दर्दनाक, परेशान करने वाले और दिल तोड़ने वाले हो सकते हैं, लेकिन इनमें एक छिपी हुई आशीष होती है: परमेश्वर हमें सच्चाई से भटकने से रोकते हैं और इसके बजाय हमारे विश्वास और भक्ति को और गहरा करते हैं। इसके अलावा, परमेश्वर हमें ऐसी स्थितियों में प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करते हैं और हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर देते हैं—और वह उत्तर उद्धार या छुटकारा है। इस प्रकार, विपत्ति परमेश्वर के उद्धार की कृपा का अनुभव करने का एक अद्भुत अवसर बन जाती है। इसीलिए हम भजन 383, "विपत्ति और सताहट के बीच" (Amidst Tribulation and Persecution) गा सकते हैं: "विपत्ति और सताहट के बीच, संतों ने विश्वास बनाए रखा; इस विश्वास के बारे में सोचकर मेरा मन आनंद से भर

जाता है; संतों के विश्वास का अनुसरण करते हुए, मैं मृत्यु तक विश्वासयोग्य बना रहूँगा।" मेरी प्रार्थना है कि आपकी अपनी कठिनाइयों और मुश्किल हालात के बीच भी आपके जीवन में स्तुति के ऐसे गीत गूँजते रहें।

दिन 26: सच्ची कलीसिया

[भजन संहिता 87 पर मनन]

A.W. टोज़र की किताब, *I Call It Heresy!* (जो कोरियाई भाषा में *Am I Real or Fake?* नाम से छपी है), धार्मिक पाखंड के खिलाफ चेतावनी देती है और एक सच्चा मसीही बनने के लिए ज़रूरी असली विश्वास को फिर से पाने का रास्ता दिखाती है। टोज़र "नकली विश्वास" के उन रूपों की आलोचना करते हैं—जो आधुनिक कलीसिया के भौतिकवाद से बिगड़ गए हैं—जैसे कि असंतुलित विश्वास, ऐसा विश्वास जिसमें अनुभव तो है पर धर्मशास्त्र (theology) की समझ नहीं है, और ऐसा विश्वास जो पुरानी रूढ़ियों से तो चिपका रहता है पर परमेश्वर से मिलने का जोश और उत्साह नहीं रखता। वे सच्चे विश्वास—एक "जंगली फूल जैसे विश्वास" (wildflower faith)—की ओर लौटने का आह्वान करते हैं, जो धरती के नमक की तरह काम करता है और क्रूस को अपनाता है। क्योंकि सच्चे मसीही मसीह की जीत पर विश्वास करते हैं, इसलिए वे उस जीत में हिस्सेदार बनने के लिए किसी भी दुख से पीछे नहीं हटते। टोज़र सच्चे विश्वासी की पाँच विशेषताएँ बताते हैं: सच्चा विश्वासी खुरदरे क्रूस से शर्मिदा नहीं होता (अध्याय 1); "कॉटन कैंडी गॉस्पेल" (आसान और मीठी बातें) को छोड़कर "काँटों के ताज वाले गॉस्पेल" (त्याग और दुख वाला संदेश) को चुनता है (अध्याय 2); प्रभु के "काम" से ज़्यादा खुद प्रभु को प्राथमिकता देता है (अध्याय 3); खुशी के बजाय पवित्रता की चाह रखता है (अध्याय 4); और विश्वास की बुनियादी बातों के प्रति वफादार रहता है (अध्याय 5)। इसके विपरीत, बिगड़े हुए मसीही बाइबल की उन खास आयतों पर बहुत ज़्यादा ज़ोर देते हैं जो उन्हें पसंद हैं; नतीजतन, दूसरी आयतों को ज़रूरी अहमियत नहीं मिल पाती। अपनी लेखनी में, पास्टर टोज़र ने नकली विश्वास की आठ विशेषताएँ बताई हैं: नकली विश्वास तुरंत परिणाम चाहता है (अध्याय 7); यह चरित्र के बदलाव को नज़रअंदाज़ करता है (अध्याय 8); यह परमेश्वर के अनुशासन को क्रूस उठाने जैसा समझ लेता है (अध्याय 9); यह अच्छे कामों के ज़रिए पापों की माफ़ी पाने की कोशिश करता है (अध्याय 10); यह धार्मिक मान्यताओं (creeds) को नहीं मानता (अध्याय 11); यह धर्मशास्त्र को कम

महत्व देता है (अध्याय 12); यह भावनाओं को नज़रअंदाज़ करता है (अध्याय 13); और इसमें आध्यात्मिक संतुलन की कमी होती है (अध्याय 14)।

हमें 1 यूहन्ना 4:1 की बातों पर ध्यान देना चाहिए: "हे प्रियों, हर आत्मा पर विश्वास न करो, बल्कि आत्माओं को परखो कि वे परमेश्वर की ओर से हैं या नहीं, क्योंकि बहुत से झूठे भविष्यद्वक्ता दुनिया में निकल गए हैं।" विश्वासी होने के नाते, हमें आत्माओं के बीच फ़र्क करना चाहिए। एक तरफ़ पवित्र आत्मा है—सत्य की आत्मा जो परमेश्वर से आती है और हमें सही राह दिखाती है—और दूसरी तरफ़ बुरी आत्माएँ हैं—धोखा देने वाली आत्माएँ जो हमें बुराई और गलत रास्ते पर ले जाती हैं; हमें इनके बीच फ़र्क करना आना चाहिए। खासकर, हमें झूठे नबियों, झूठे चर्चों और झूठे विश्वासियों और सच्चे नबियों, सच्चे चर्चों और सच्चे विश्वासियों के बीच फ़र्क करना आना चाहिए। हम यह फ़र्क कैसे कर सकते हैं? जो व्यक्ति किसी बुरी, धोखा देने वाली आत्मा के बहकावे में आकर चर्च का नेतृत्व करता है, वह झूठा नबी है; जो चर्च किसी झूठे नबी की शिक्षाओं को मानता है, वह झूठा चर्च है; और जो विश्वासी किसी झूठे नबी की शिक्षाओं को मानता है, वह झूठा विश्वासी है। इसके विपरीत, जो व्यक्ति पवित्र आत्मा—परमेश्वर की सत्य की आत्मा—की अगुवाई में चर्च का नेतृत्व करता है, वह सच्चा नबी है; जो चर्च किसी सच्चे नबी की शिक्षाओं को मानता है, वह सच्चा चर्च है; और जो विश्वासी किसी सच्चे नबी की शिक्षाओं को मानता है, वह सच्चा विश्वासी है। भजन संहिता 87 के आज के अंश पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं सच्चे चर्च की चार विशेषताओं पर विचार करना चाहता हूँ, और प्रार्थना करता हूँ कि हमारा विकट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च परमेश्वर की नज़र में एक सच्चा चर्च बने।

पहली बात, सच्चे चर्च की नींव मज़बूत होती है।

भजन संहिता 87 की पहली आयत को देखें: "उसकी नींव पवित्र पर्वत पर है।" यह अंश बताता है कि सच्चे चर्च की आध्यात्मिक नींव मज़बूत होती है (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में, सच्चा चर्च अडिग होता है। सच्चा चर्च अडिग कैसे हो सकता है? ऐसा इसलिए है क्योंकि प्रभु, जो चर्च के मुखिया हैं, ने अपने चर्च को चट्टान पर बनाया है (मत्ती 16:18)। यहाँ, "चट्टान" का अर्थ प्रेरित पतरस द्वारा विश्वास की स्वीकारोक्ति है: "तू मसीह है, जीवित परमेश्वर का पुत्र" (आयत 16)। दूसरे शब्दों में, चट्टान पर बना चर्च उन लोगों का समुदाय है जो प्रेरित पतरस की तरह यीशु के बारे में विश्वास की सही स्वीकारोक्ति करते हैं। इसके अलावा, चट्टान पर बना चर्च यीशु के चेलों

का समुदाय है जो न केवल विश्वास की सही स्वीकारोक्ति करते हैं बल्कि उस स्वीकारोक्ति के अनुसार जीवन भी जीते हैं। और स्पष्ट रूप से कहें तो, यहाँ "चट्टान" का अर्थ स्वयं यीशु मसीह है। इफिसियों 2:20 को देखिए: "...जो प्रेरितों और भविष्यद्वक्ताओं की नींव पर बनी है, और जिसका मुख्य कोने का पत्थर स्वयं यीशु मसीह है।" जैसा कि प्रेरित पौलुस ने कहा, चट्टान पर बनी एक मज़बूत कलीसिया वह है जो प्रेरितों और भविष्यद्वक्ताओं की नींव पर स्थापित है, और जिसका मुख्य कोने का पत्थर यीशु मसीह है। "कोने के पत्थर" (cornerstone) के लिए यूनानी शब्द है *akrogoniaios*; इसमें *akro-* उपसर्ग का अर्थ है "ऊँचा," जो "ऊँची जगह पर रखी मज़बूत आधारशिला" को दर्शाता है। कहा जाता है कि इज़राइल में सभी इमारतों का निर्माण कोने के पत्थर से शुरू होता था, और पूरी इमारत की दिशा इसी पत्थर से तय होती थी। इसी तरह, कलीसिया को यीशु को कोने का पत्थर मानकर बनाया जाना चाहिए, और पूरी कलीसिया की दिशा मसीह के रास्ते के अनुरूप होनी चाहिए। इसलिए, जब हम वचन की नींव पर—खासकर यीशु मसीह के कोने के पत्थर पर, जो उस वचन के केंद्र में हैं—एक साथ बनते हैं, और जब परमेश्वर पवित्र आत्मा के द्वारा इस घर में वास करते हैं, तो यह एक सुंदर और सच्ची कलीसिया बन जाती है।

तो फिर, प्रभु ने अपनी कलीसिया को एक मज़बूत चट्टान पर क्यों स्थापित किया? इसका कारण आज के वचन, भजन संहिता 87:2 में बताया गया है: "प्रभु याकूब के सभी निवास स्थानों की तुलना में सियोन के फाटकों से अधिक प्रेम करते हैं।" प्रभु ने अपनी कलीसिया को मज़बूती से स्थापित किया क्योंकि वे उससे प्रेम करते हैं। मेरी प्रार्थना है कि हमारी विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन कलीसिया परमेश्वर की नज़र में एक सच्ची कलीसिया बने—एक ऐसी कलीसिया जिससे परमेश्वर प्रेम करते हैं, जिसका कोने का पत्थर यीशु मसीह है, और जो परमेश्वर के सेवकों द्वारा घोषित उनके वचन की नींव पर बनी एक मज़बूत कलीसिया है।

दूसरी बात, एक सच्ची कलीसिया महिमामयी होती है।

भजन संहिता 87:3 को देखिए: "हे परमेश्वर के नगर, तेरे विषय में महिमामयी बातें कही गई हैं (सेलाह)।" एक सच्ची कलीसिया महिमामयी क्यों होती है? इसलिए क्योंकि एक सच्ची कलीसिया "परमेश्वर का नगर" है (पद 3)। दूसरे शब्दों में, एक सच्ची कलीसिया महिमामयी है क्योंकि परमेश्वर उसमें वास करते हैं। परमेश्वर का नगर स्वयं... कलीसिया अपनी सुंदरता के कारण नहीं, बल्कि इसलिए सुंदर है क्योंकि महिमामयी प्रभु उससे प्रेम

करते हैं। सच्ची कलीसिया महिमामयी है क्योंकि परमेश्वर उस "परमेश्वर के नगर" का—जिसे वह महिमामयी प्रभु प्रेम करते हैं—बहुत सम्मान करते हैं। यह अंश ऑगस्टीन की किताब, *द सिटी ऑफ़ गॉड* (परमेश्वर का नगर) की याद दिलाता है। ऑगस्टीन उस समय जीवित थे जब पश्चिमी रोमन साम्राज्य ढह रहा था; असल में, साम्राज्य के पतन ने ही उन्हें यह प्रसिद्ध रचना लिखने के लिए प्रेरित किया। किताब का पूरा मूल शीर्षक—जो यह विचार देता है कि "भले ही दुनिया का सबसे महान शहर गिर जाए, ईश्वर का शहर हमेशा बना रहेगा"—साफ़ तौर पर इसे लिखने के उनके मकसद को दिखाता है। रोम ने 313 ईस्वी में ईसाई धर्म को अपना राजकीय धर्म माना था और एक विशाल साम्राज्य स्थापित किया था जहाँ राजनीति और धर्म एक साथ थे। नतीजतन, उस दौर के लोग रोम को ईश्वर का राज्य मानते थे, इसे "पवित्र रोमन साम्राज्य" कहते थे, और उन्हें यकीन था कि यह कभी नहीं गिरेगा। फिर भी, बर्बर कबीलों (गोथ्स) के हमले के बाद रोम आखिरकार ढह गया। इससे लोगों के मन में यह सवाल उठा: "ईश्वर का राज्य बर्बर लोगों द्वारा कैसे नष्ट किया जा सकता है?" ऑगस्टीन ने भी इस मुद्दे पर गहराई से विचार किया। गहरे चिंतन के बाद, उन्होंने निष्कर्ष निकाला: "रोम, एक सांसारिक राज्य, ईश्वर का राज्य नहीं है; इसलिए, यह किसी भी समय गिर सकता है। ईश्वर का सच्चा राज्य वह है जिस पर प्रभु का शासन है, और इसे उनके दूसरे आगमन पर पूरा किया जाएगा।" "और ईश्वर का यह राज्य नष्ट नहीं होगा बल्कि हमेशा बना रहेगा" (इंटरनेट)।

हमारा विकट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च महिमामय प्रभु द्वारा मजबूती से स्थापित चर्च है। महिमामय प्रभु हमारे चर्च से प्रेम करते हैं और इसमें प्रसन्न होते हैं, और वे मैथ्यू 16:18 में किए गए अपने वादे के अनुसार इसे निष्ठापूर्वक बना रहे हैं। इसलिए, हमारी प्रार्थना यह होनी चाहिए कि प्रभु विकट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च—जो उनका अपना शरीर है—को एक "तेजस्वी चर्च" के रूप में स्थापित करें, जैसा कि इफिसियों 5:27 में बताया गया है। हमें मिलकर प्रार्थना करनी चाहिए कि प्रभु अपने वचन (पद 26) के माध्यम से हमारे चर्च को शुद्ध और पवित्र करें।

तीसरी बात, सच्ची कलीसिया की स्थापना स्वयं प्रभु करते हैं।

आज के वचन, भजन संहिता 87:5 को देखें: "और सिय्योन के विषय में यह कहा जाएगा, 'यह और वह, दोनों ही उसमें जन्मे हैं'; और स्वयं परमप्रधान उसकी स्थापना करेंगे।" इस वाक्यांश "स्वयं परमप्रधान उसकी स्थापना

करेंगे" का अर्थ है कि प्रभु—जो परमप्रधान हैं—व्यक्तिगत रूप से सिध्दों, यानी अपनी कलीसिया की स्थापना करेंगे। इस कथन का वही अर्थ है जो मत्ती 16:18 के शब्दों में है, एक ऐसा वचन जिसे हमारी विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन कलीसिया बहुत महत्व देती है: "... मैं अपनी कलीसिया बनाऊंगा..."। ये दोनों वचन हमें स्पष्ट रूप से बताते हैं कि सच्ची कलीसिया—जो प्रभु का शरीर है—उसकी स्थापना स्वयं परमप्रधान प्रभु करते हैं, जो उस कलीसिया के सिर हैं। इसके अलावा, जैसे ही प्रभु अपनी कलीसिया की स्थापना करते हैं, अन्य जातियों के लोग भी पश्चात्ताप करेंगे, उनकी ओर लौटेंगे और मिलकर सिध्दों के लोग बनेंगे (वचन 4) (पार्क यू-सन)।

वह महिमामयी कलीसिया जिसकी स्थापना स्वयं प्रभु करते हैं, उन सभी देशों के लोगों से मिलकर बनी है जिन्हें उन्होंने चुना है; यह बहु-जातीय और सार्वभौमिक है। प्रभु द्वारा स्थापित कलीसिया विभिन्न जातीय समूहों के बीच दीवारें खड़ी नहीं करती—जैसा कि यहूदी लोग कभी पूर्वाग्रह के कारण करते थे, जब वे अन्य जातियों के लोगों को अपनाने से इनकार करते थे—और न ही यह विभिन्न जातियों और पृष्ठभूमियों की वास्तविकता को नकारती है। प्रभु द्वारा स्थापित कलीसिया एक दृढ़ कलीसिया है। यह एक महिमामयी कलीसिया भी है। स्वयं महिमामयी प्रभु ही इस महिमामयी कलीसिया की स्थापना कर रहे हैं। आइए हम इस बात को याद रखें: विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन कलीसिया प्रभु की कलीसिया है। हमें उस सच्चाई को कभी नहीं भूलना चाहिए—जो मत्ती 16:18 और आज के वचन, भजन संहिता 87:5 दोनों में मिलती है—कि कलीसिया, जो प्रभु का शरीर है, उसकी स्थापना स्वयं प्रभु करते हैं। इसलिए, हमें अपनी ताकत और तरीकों का उपयोग करके प्रभु की कलीसिया बनाने की कोशिश करने का पाप नहीं करना चाहिए। यदि हम अपनी शक्ति से प्रभु की कलीसिया बनाने की कोशिश करते हैं, तो उसकी नींव मजबूत नहीं हो सकती; उसका हिलना और ढह जाना निश्चित है। इसके अलावा, ऐसी कलीसिया अनिवार्य रूप से एक ऐसी जगह बन जाती है जहाँ परमेश्वर की महिमा के बजाय इंसानी महिमा को ऊंचा किया जाता है। मेरी प्रार्थना है कि हमारी विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन कलीसिया एक ऐसी कलीसिया बने जिसकी स्थापना स्वयं प्रभु ने की हो। चौथी और आखिरी बात, सच्ची कलीसिया स्वर्ग के राज्य के नागरिकों का एक समुदाय है।

आज के वचन, भजन संहिता 87:6 को देखें: "जब यहोवा लोगों की गिनती करेगा, तो वह लिखेगा, 'यह व्यक्ति वहाँ पैदा हुआ था' (सेला)।" "जब यहोवा लोगों की गिनती करेगा" वाक्यांश नए नियम के युग के बारे में एक भविष्यवाणी है, जिसमें सभी राष्ट्र स्वर्ग के राज्य में शामिल किए जाते हैं—यानी, मसीह में विश्वास के द्वारा उद्धार

प्राप्त करते हैं (पार्क युन-सन)। इस भविष्यवाणी में शामिल राष्ट्र हैं राहाब (मिस्र का एक काव्यात्मक नाम), बाबुल, पलिशती, सोर और कूश (वचन 4)। हालाँकि ये राष्ट्र इज़राइल के विरोधी थे, भजनकार ने भविष्यवाणी की कि परमेश्वर अंततः उन्हें पश्चाताप की ओर ले जाएगा और उन्हें अपने पास वापस लाएगा। इसीलिए भजनकार कहता है, "जो मुझे जानते हैं" (वचन 4)। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर उन सभी को—चाहे वे यहूदी हों या गैर-यहूदी—जो उसे स्वीकार करते हैं, स्वर्ग के राज्य का नागरिक मानता है (पार्क युन-सन)। नतीजतन, राज्य के ये सभी नागरिक परमेश्वर की कृपा का जवाब वैसे ही देते हैं जैसा वचन 7 में बताया गया है: "गाने वाले और नाचने वाले कहेंगे, 'मेरे आनंद के सभी स्रोत तुझमें हैं।'" वे परमेश्वर की कृपा के लिए कृतज्ञता के साथ उसकी स्तुति करते हैं। आइए हम सब फिलिप्पियों 3:20-21 के वचनों को विश्वास के साथ थामे रहें: "लेकिन हमारी नागरिकता स्वर्ग में है। और हम वहाँ से एक उद्धारकर्ता, प्रभु यीशु मसीह की बेसब्री से प्रतीक्षा करते हैं, जो उस शक्ति से, जिसके द्वारा वह सब कुछ अपने नियंत्रण में लाने में सक्षम है, हमारे तुच्छ शरीरों को बदल देगा ताकि वे उसके महिमामय शरीर के समान हो जाएँ।" हमारी नागरिकता स्वर्ग में है; यह निश्चित रूप से इस पृथ्वी की नहीं है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे पास स्वर्ग के अनंत राज्य की नागरिकता है। इसलिए, इस पृथ्वी पर रहते हुए, हमें स्वर्ग के नागरिकों के रूप में जीना चाहिए। हमें उस चट्टान पर बने अटूट विश्वास के साथ जीना चाहिए। हमें परमेश्वर की महिमा के लिए जीना चाहिए। हमें परमेश्वर के नगर की ओर आगे बढ़ना चाहिए।

तो फिर, हम सच्ची कलीसिया और झूठी कलीसिया के बीच अंतर कैसे कर सकते हैं? सच्ची कलीसिया वह है जो एक ठोस नींव—चट्टान—पर बनी है। सच्ची कलीसिया एक महिमामय कलीसिया है। सच्ची कलीसिया स्वयं प्रभु द्वारा स्थापित की जाती है। और एक सच्चा चर्च स्वर्गीय नागरिकों का समुदाय होता है। इसके विपरीत, एक झूठा चर्च कमज़ोर नींव या रेत पर बना होता है। झूठा चर्च इंसानी महिमा चाहता है। झूठा चर्च वह है जिसे इंसान स्थापित करने की कोशिश करते हैं। और झूठा चर्च केवल इस दुनिया के नागरिकों का समुदाय होता है। हमारा विक्ट्री प्रेस्बिटेरियन चर्च एक सच्चा चर्च होना चाहिए।

दिन 27: जब हम चर्च के बारे में सोचते हैं

[भजन संहिता 137 पर चिंतन]

14 मई, 2009 को, मुझे ऑनलाइन समाचार साइट *कुकमिन इल्बो मिशन लाइफ* पर एक लेख मिला, जिसका शीर्षक था "कोरियाई चर्च के भीतर आत्म-चिंतन का आग्रह करते हुए लगभग 300 ईसाई नेताओं द्वारा आपातकालीन घोषणा।" "पादरी (pastors) की इवेंजेलिकल (सुसमाचार-संबंधी) ज़िम्मेदारी और आत्म-शुद्धिकरण के लिए घोषणा" शीर्षक के तहत, आठ बातें बताई गईं: पहला, हम इवेंजेलिकल मूल्यों के प्रति वफादार न रह पाने के लिए पश्चाताप करते हैं; दूसरा, हम विभाजन और संघर्ष के बीच एक-दूसरे से प्रेम करने में चर्च की विफलता पर विचार करते हैं; तीसरा, हम पादरियों के बीच नैतिक ढिलाई को स्वीकार करते हैं और नैतिकता के उच्च स्तर को बनाए रखने का संकल्प लेते हैं; चौथा, हम विकास के जुनून के कारण चर्चों के बीच पैदा हुए ध्रुवीकरण को ठीक करने की आवश्यकता को पहचानते हैं; पांचवां, हम सांसारिक डिग्रियां और सम्मान पाने के बजाय आध्यात्मिकता में अधिकार-प्राप्त बनने का प्रयास करेंगे; छठा, हम व्यक्तिगत पवित्रता विकसित करने और समाज पर सकारात्मक प्रभाव डालने का प्रयास करेंगे; सातवां, हम सुसमाचार (Gospel) पर आधारित स्वच्छ चर्च प्रशासन को अपनाएंगे; और आठवां, हम समाज के प्रकाश और नमक के रूप में सेवा करने वाले चर्च के मिशन के लिए खुद को समर्पित करेंगे। आपातकालीन घोषणा की इन आठ बातों को पढ़कर, मैंने उन्हें वास्तव में मूल्यवान पाया। यदि हमारे चर्च इस घोषणा के अनुसार जीएं, तो वे वास्तव में चर्च के रूप में कार्य करेंगे और प्रभु की महिमा करेंगे। विशेष रूप से, मुझे लगा कि पहली बात सबसे महत्वपूर्ण थी: हमारे चर्च के लिए इवेंजेलिकल मूल्यों के प्रति वफादार न रह पाने के लिए पश्चाताप करने की आवश्यकता। इस पहली बात के संबंध में विशिष्ट पाठ इस प्रकार है: "मुक्ति के सुसमाचार की घोषणा करना—जो प्रेरितों (apostles) द्वारा सौंपा गया था और यीशु मसीह के क्रूस पर बहाए गए लहू और मृत्यु के माध्यम से पूरा हुआ..." हम सुधारकों (Reformers) द्वारा उनकी शहादत के माध्यम से स्थापित

'सुधारवादी परंपरा' (Reformed tradition) को बनाए रखने के लिए अपनी प्रतिबद्धता की घोषणा करते हैं। इस सुसमाचार पर बना चर्च एक ऐसा अस्पताल है जो आत्माओं को बचाता है और एक ऐसा स्कूल है जहाँ हम परमेश्वर के बारे में सीखते हैं। फिर भी, गहरे आत्म-चिंतन में संलग्न होकर—यह पूछते हुए कि क्या हमने सुसमाचार के मूल्य के बजाय सांसारिक सफलता को प्राथमिकता दी, क्या हमने नैतिक और सदाचारी जीवन के उच्च स्तर की आकांक्षा की, और क्या हमने अपने भाइयों से प्रेम करने और अपने पड़ोसियों की देखभाल करने की पूरी कोशिश की—हम दर्दनाक पश्चाताप के माध्यम से, आज से सुसमाचार के मूल्यों के अनुसार वफादारी से जीने का संकल्प लेते हैं। यह एक ऐसी बात है जिससे हर कोई सहमत होगा। मुझे खास तौर पर यह बात सही लगती है कि चर्च को सुसमाचार की शिक्षाओं के बजाय दुनियादारी की कामयाबी को ज़्यादा अहमियत देने के लिए पछतावा करना चाहिए। जब आप चर्च के बारे में सोचते हैं, तो आपको क्या लगता है कि हमें—चर्च और ईसाई होने के नाते—क्या करना चाहिए? चर्च के बारे में सोचने पर हमें कैसा रवैया अपनाना चाहिए?

सबसे पहले, जब हम चर्च के बारे में सोचें, तो हमें रोना चाहिए।

आज का वचन देखिए, भजन संहिता 137:1: "बाबुल की नदियों के किनारे हम बैठे और रोए जब हमें सिय्योन की याद आई।" भजन लिखने वाला, जो इस्राएल के लोगों के साथ बाबुल में बंदी बना लिया गया था, बाबुल की नदियों के किनारे बैठकर सिय्योन को याद करते हुए रोया—जिसे बाबुल ने बर्बाद कर दिया था। सिय्योन को याद करते हुए वह क्यों रोया? इसलिए क्योंकि वह दिल से चाहता था कि परमेश्वर की कृपा से सब कुछ फिर से ठीक हो जाए (पार्क युन-सन)। भजन संहिता 136:23 से पता चलता है कि जब इस्राएलियों ने परमेश्वर के खिलाफ पाप किया, तो परमेश्वर ने पहले ही बता दिया था कि वे "बुरी हालत" में पहुँच जाएँगे—यानी उन्हें बंदी बनाकर बाबुल ले जाया जाएगा। जब तक हम भजन संहिता 137 तक पहुँचते हैं, वह भविष्यवाणी सच हो चुकी थी; इस्राएली सचमुच अपने पापों की वजह से बाबुल में बंदी थे, और वहीं पर भजन लिखने वाले ने यह कविता लिखी थी। उनकी कैद कितनी दुखभरी रही होगी! जब उन्हें बंदी बनाने वालों (बाबुलियों) ने सिय्योन का कोई गीत गाने के लिए कहा, तो भजन लिखने वाले ने मना कर दिया और अपनी वीणा विलो के पेड़ों पर टाँग दी (पद 2-3)। उसने ऐसा इसलिए किया क्योंकि वह नहीं चाहता था कि किसी पवित्र गीत का

इस्तेमाल गैर-यहूदियों के मनोरंजन के लिए किया जाए (पार्क युन-सन)। परमेश्वर के पवित्र लोग, जिन्हें गैर-यहूदियों ने बंदी बना लिया था और उन पर जुल्म ढा रहे थे—वहाँ, परमेश्वर के पवित्र... भजन लिखने वाले को कैसा लगा होगा जब उसे ज़बरदस्ती मनोरंजन के लिए गाने को कहा गया? इसीलिए उसने दुख जताते हुए कहा: "हम पराये देश में प्रभु का गीत कैसे गाएँ?" (पद 4)। इस दुख के बीच, भजन लिखने वाला बाबुल की नदियों के किनारे रोया—कैद के अकेलेपन को सहते हुए सिय्योन के बारे में सोचते हुए—और मैंने उन आँसुओं पर कुछ तरह से सोचा है: पहला, जो आँसू उसने बहाए, वे शायद पछतावे की प्रार्थना के आँसू थे। उसके रोने में पक्का पछतावे का दुख भी शामिल था। जब कोई विश्वासी परमेश्वर की खोई हुई कृपा के बारे में सोचता है, तो वह अपने पापों पर विचार किए बिना नहीं रह सकता और परिणामस्वरूप, उसे पछतावा होता है (पार्क युन-सन)। "परमेश्वर की खोई हुई कृपा..." जब मैं इन शब्दों पर विचार करता हूँ, तो मुझे अपनी स्थिति याद आती है। जब मैं कृपा से भरा होता हूँ, तो मैं अपने दिल में कृतज्ञता, शांति और खुशी का अनुभव करता हूँ; फिर भी, जब मैं परमेश्वर की कृपा खो देता हूँ, तो मैं खुद को भारीपन, बेचैनी और चिंता से दबा हुआ पाता हूँ। ऐसी स्थिति में, बुधवार की प्रार्थना सभा के बाद, परमेश्वर ने मेरे पापों को उजागर किया, मुझे उन्हें स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया, और मुझे पाप से अलग जीवन जीने की चुनौती दी। ठीक अगली सुबह—भोर की प्रार्थना सभा के बाद—मेरी आँखों में आँसू आ गए जब मैंने पिछले दिन बचे हुए कैंटकी फ्राइड चिकन (KFC) ब्रेड के एक टुकड़े को पकड़कर प्रार्थना की। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि मुझे बुधवार की सभा का संदेश याद आया; मुझे हमारी रोज़ की रोटी प्रदान करने में परमेश्वर की देखभाल—उनकी कृपा—के लिए गहरी कृतज्ञता महसूस हुई। जब हम खुद पर, अपने परिवारों पर और सबसे बढ़कर, कलीसिया पर—जो प्रभु का शरीर है—विचार करते हैं, तो हमें पश्चाताप के आँसू बहाने चाहिए। यह क्यों ज़रूरी है? क्योंकि कलीसिया परमेश्वर की कृपा खो रही है। जब प्रभु की कलीसिया परमेश्वर की कृपा खो देती है, तो वह अनिवार्य रूप से उनके विरुद्ध पाप में गिर जाती है। इसलिए, हमारी कलीसिया को परमेश्वर के सामने पश्चाताप करना चाहिए। तभी पश्चाताप के माध्यम से कलीसिया में सच्चा पुनर्स्थापन, मेल-मिलाप, सुधार और पुनरुद्धार हो सकता है। दूसरी बात, ज़िय्योन को याद करते हुए बेबीलोन की नदियों के किनारे भजनकार द्वारा बहाए गए आँसू संभवतः प्रार्थना के आँसू थे, जो परमेश्वर की बचाने वाली कृपा की लालसा से उपजे थे। जो लोग वास्तव में पश्चाताप करते हैं, वे पहचानते हैं कि केवल परमेश्वर ही उनके उद्धारकर्ता हैं, और इस प्रकार, वे उद्धार के लिए उनसे ईमानदारी से विनती किए बिना नहीं रह सकते। चूँकि भजनकार—

इस्राएल के लोगों के साथ—अपने पापों के कारण बेबीलोन में बंधुआई में रह रहे थे, उन्हें अपने पापों का एहसास हुआ और उन्होंने पश्चाताप किया; उस प्रक्रिया में, परमेश्वर... उन्होंने संभवतः दया और कृपा के लिए विनती की, बेबीलोन में अपनी बंधुआई से छुटकारा पाने और यहूदा की भूमि में अपने देश वापस ले जाए जाने की प्रार्थना की। जैसे योना ने बड़ी मछली के पेट से प्रभु की ओर देखा और कहा, "मुक्ति प्रभु से ही मिलती है" (योना 2:9)—और परमेश्वर की बचाने वाली कृपा की इच्छा की—वैसे ही भजनकार ने भी, यह जानते हुए कि केवल परमेश्वर ही इस्राएल के लोगों को बचा सकते हैं, उनसे सच्चे मन से मुक्ति की प्रार्थना की। जब हम कलीसिया—मसीह की देह—के बारे में सोचते हैं, तो हमें सच्चे पश्चाताप और परमेश्वर की बचाने वाली कृपा की चाहत रखने वाले हृदय के साथ अपनी प्रार्थनाएँ करनी चाहिए। हमें सभी गंदे और बुरे पापों से छुटकारा पाने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। हमें यीशु—हमारे दूल्हे—की पवित्र और शुद्ध दुल्हन के रूप में नया जन्म पाने के लिए विनती करनी चाहिए। ऐसा करते हुए, हमें एक ऐसी कलीसिया बनना चाहिए जो प्रभु के दूसरे आगमन के लिए तैयारी करे। मेरी प्रार्थना है कि जब भी हम कलीसिया के बारे में सोचें, तो हम पश्चाताप के आँसू बहाएँ और ऐसी प्रार्थना करें जिसमें परमेश्वर की बचाने वाली कृपा की चाहत हो।

दूसरी बात, जब हम कलीसिया के बारे में सोचें, तो हमें इसे अपनी सबसे बड़ी खुशी मानना चाहिए।

आज के वचन, भजन 137:6 को देखिए: "अगर मैं तुम्हें याद न रखूँ, अगर मैं यरूशलेम को अपनी सबसे बड़ी खुशी न मानूँ, तो मेरी जीभ मेरे मुँह के तालू से चिपक जाए।" हालाँकि भजनकार बेबीलोन के गैर-यहूदी देश में बंदी बनकर रह रहा था, फिर भी वह मानता है कि वह यरूशलेम को दुनिया की अपनी सबसे बड़ी खुशियों से भी ज़्यादा प्यार करता था; दूसरे शब्दों में, उसने यरूशलेम को अपनी सबसे बड़ी खुशी बना लिया था। इससे भजनकार के परमेश्वर-केंद्रित और पवित्र जीवन का पता चलता है। विदेशी धरती पर बंदी होने के बावजूद, उसे सियोन की याद आती थी, वह रोता था और सच्चे दिल से परमेश्वर को खोजता था। जैसे घर से दूर रहने वाला बच्चा अपने माता-पिता और घर के लिए बहुत तड़पता है, वैसे ही बेबीलोन में निर्वासन के दौरान यरूशलेम के लिए भजनकार की तड़प और बढ़ गई थी। चूँकि बेबीलोन ने परमेश्वर के शहर—यरूशलेम—को खंडहर बना दिया था, इसलिए उसने उसके पुनर्निर्माण और उसकी पुरानी खुशहाली की वापसी के लिए दिल से प्रार्थना की। हमारी भी यही सच्ची प्रार्थना होनी चाहिए: कि प्रभु अपनी कलीसिया—

अपने शरीर—को, जो खंडहर हो चुकी है, फिर से बनाए और उसे शुरुआती कलीसिया जैसी फलती-फूलती हालत में वापस लाए। कोई सोच सकता है कि क्या कलीसिया के लिए उस दौर से बेहतर कोई सुनहरा युग कभी रहा है—वह समय जब प्रेरित पवित्र आत्मा से भरे हुए थे, निडर होकर सुसमाचार का प्रचार करते थे और उसकी शक्ति दिखाते थे; जब पवित्र आत्मा की अगुवाई में रोज़ाना विश्वास करने वाले लोग कलीसिया में जुड़ते थे; और जब शुरुआती कलीसिया प्यार के एक सच्चे समुदाय के रूप में स्थापित हुई थी। आज हमारी कलीसियाएँ भी वैसी ही होनी चाहिए। हमें कलीसिया की ऐसी सच्ची उन्नति के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। इसके अलावा, जब हम आज के समय में कलीसिया को देखते हैं, तो हमें—भजनकार की तरह—पछतावे और प्रार्थना के आँसू बहाने चाहिए और परमेश्वर की बचाने वाली कृपा के लिए तड़पना चाहिए। हमें प्रभु से सच्चे दिल से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमारे समय में भी वैसा ही सच्चा सुधार लाए, जैसा उसने 16वीं सदी के सुधार (Reformation) के दौरान किया था। जब हम कलीसिया के बारे में सोचते हैं तो हमें इस तरह प्रार्थना क्यों करनी चाहिए? इसका कारण यह है कि, जैसा कि भजनकार ने माना, कलीसिया हमारी सबसे बड़ी खुशी है। चूँकि प्रभु—जो कलीसिया के मुखिया हैं—हमारी सबसे बड़ी खुशी हैं, इसलिए उनका शरीर, यानी कलीसिया भी हमारी सबसे बड़ी खुशी बन जाती है। जैसा कि वेस्टमिंस्टर शॉर्टर कैटेकिज़्म के पहले सवाल ("इंसान का मुख्य मकसद क्या है?") का जवाब कहता है—"इंसान का मुख्य मकसद परमेश्वर की महिमा करना और हमेशा उसका आनंद लेना है"—हमें प्रभु का हमेशा आनंद लेने के लिए बुलाया गया है। और जो लोग हमेशा प्रभु का आनंद लेते हैं, उन्हें उसकी कलीसिया में भी खुशी मिलती है। तो फिर, हम कलीसिया को अपनी सबसे बड़ी खुशी कैसे बना सकते हैं और उसमें आनंद कैसे ले सकते हैं? भजनकार की तरह, हमें सबसे पहले प्रभु की कलीसिया को याद करना चाहिए और रोना चाहिए। हमें कलीसिया की वीरान हालत को—जो उसके पापों की वजह से हुई है—आध्यात्मिक नज़रों से देखना चाहिए और पछतावे के आँसू बहाने चाहिए। पछतावे के ऐसे सच्चे आँसुओं के बिना, हम उस काम की सच्ची खुशी का अनुभव नहीं कर सकते जिसके ज़रिए प्रभु अपनी कलीसिया को बचाता और स्थापित करता है। इसलिए, अगर हम प्रभु की कलीसिया को अपनी सबसे बड़ी खुशी बनाना चाहते हैं, तो हमें पछतावे के आँसू बहाने होंगे। इस बीच, हमें प्रभु से अपनी कलीसिया को बचाने की पुरज़ोर विनती करनी चाहिए। हमारी सच्ची प्रार्थनाएँ प्रभु द्वारा अपनी देह, यानी कलीसिया को स्थापित करने के लिए होनी चाहिए। और जब प्रभु अपनी कलीसिया को स्थापित करता है, तो हमें आनंद के परमेश्वर—वह प्रभु जो हमारी सबसे बड़ी खुशी है—के करीब आना

चाहिए और सिथ्योन के गीतों के साथ उसकी स्तुति और आराधना करनी चाहिए। यह उस व्यक्ति का जीवन है जिसे प्रभु की कलीसिया में सबसे बड़ी खुशी और आनंद मिलता है।

तीसरी और आखिरी बात, जब हम कलीसिया के बारे में सोचें तो हमें परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए।

आज के अंश—भजन संहिता 137:7-9—में हम देखते हैं कि भजनकार परमेश्वर से प्रार्थना कर रहा है और इसराइल के दुश्मन और विरोधी बेबीलोन पर उसके न्याय और सज़ा की माँग कर रहा है। आयत 7 के पहले हिस्से में, हम उसे विनती करते हुए देखते हैं: "हे प्रभु, यरूशलेम के उस दिन को याद कर और एदोम के वंशजों को गिरा दे।" बेशक, एदोम के वंशज बेबीलोन जैसे नहीं हैं; असल में, जब बेबीलोन ने यरूशलेम पर हमला किया तो एदोमी खुश हुए थे। मूल रूप से इसराइल के लोगों के भाई होने के बावजूद, वे इसराइल के कट्टर दुश्मन और परमेश्वर के क्रोध के पात्र बन गए (पार्क युन-सन)। इस मायने में, एदोम और बेबीलोन—जिनका ज़िक्र आयतों 7-9 में है—दोनों में एक बात समान है कि वे परमेश्वर के क्रोध के पात्र हैं। इसका कारण यह है कि उन्होंने परमेश्वर के लोगों, इसराइल का विरोध किया और उन पर जुल्म किया। भजनकार, जो ज़ियोन को याद करते हुए बेबीलोन की नदियों के किनारे रोया था, उसने परमेश्वर से एदोम के वंशजों को नष्ट करने की प्रार्थना की—जिनकी तुलना यहाँ उन बेबीलोनियों से की गई है जिन्होंने यरूशलेम को बर्बाद कर दिया था। इसी तरह, जब हम परमेश्वर से प्रार्थना करते हैं, तो हमें यह प्रार्थना करनी चाहिए कि उनका क्रोध शैतान—जो कलीसिया का दुश्मन है—और उसके बुरे सेवकों पर गिरे। हो सकता है कि हम ऐसी प्रार्थनाओं के आदी न हों। हालाँकि, बुरे लोगों के न्याय के लिए प्रार्थना किए बिना परमेश्वर के लोगों की मुक्ति के लिए प्रार्थना करना असंतुलित होगा। इसका कारण यह है कि बाइबल—और विशेष रूप से पुराने नियम—के अनुसार, परमेश्वर की मुक्ति और परमेश्वर का न्याय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। दूसरे शब्दों में, जब परमेश्वर अपने लोगों—कलीसिया—को बचाता है, तो वह उनके दुश्मनों का न्याय करके और उन्हें सज़ा देकर ऐसा करता है। इसलिए, कलीसिया की मुक्ति के साथ-साथ, हमें कलीसिया के दुश्मनों के विनाश के लिए भी प्रार्थना करनी चाहिए। हमें परमेश्वर के सही न्याय के लिए प्रार्थना करनी चाहिए और उनसे उन लोगों को सज़ा देने के लिए कहना चाहिए जो कलीसिया का विरोध करते हैं।

जब मैं स्युंगरी प्रेस्बिटेरियन चर्च—प्रभु की देह—के बारे में सोचता हूँ, तो दो बातें मन में आती हैं: वह वादा जो प्रभु ने मत्ती 16:18 में किया था ("मैं अपनी कलीसिया बनाऊँगा..."), और भजन 246, "हे प्रभु, मुझे तेरे राज्य से प्रेम है।" ऐसा इसलिए है क्योंकि, 'चर्च रिन्यूअल के लिए पादरी परिषद' के एक रिट्रीट (लगभग 2002 या 2003 में) के दौरान, जब मैं परमेश्वर का वचन ग्रहण कर रहा था और आँसुओं के साथ उनकी स्तुति कर रहा था, तब परमेश्वर ने स्युंगरी प्रेस्बिटेरियन चर्च की बात मेरे मन में डाली। मुझे आज भी अच्छी तरह याद है कि उस समय कलीसिया के लिए तड़प और प्रेम के आँसू बह रहे थे। मैं प्रार्थना करता हूँ कि स्युंगरी प्रेस्बिटेरियन चर्च प्रभु द्वारा स्थापित कलीसिया बने—एक ऐसी कलीसिया जो यीशु के ज्ञान में बढ़े, सही ढंग से उन्हें स्वीकार करे, और उस स्वीकारोक्ति के अनुसार जीवन जिए। मैं यह भी प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु स्युंगरी प्रेस्बिटेरियन चर्च को चट्टान पर मज़बूती से स्थापित करें। मेरी दिली प्रार्थना है कि यह सचमुच एक विजयी कलीसिया बने—एक ऐसी कलीसिया जो स्वयं, संसार, पाप और शैतान के विरुद्ध लड़ाई में जीत हासिल करे।

दिन 28: “कोई दिलासा देने वाला नहीं है”

[सभोपदेशक 4:1-3 पर मनन]

एक रविवार दोपहर, चर्च के नेताओं के साथ प्रार्थना सभा करने के बाद दो घटनाएँ हुईं। एक घटना हमारे चर्च की एक महिला डीकन से जुड़ी थी, जिन्होंने बहुत सारी नींद की गोलियाँ (जैसा लग रहा था) खाकर आत्महत्या (?) करने की कोशिश की। उस रविवार दोपहर, चर्च के कई सदस्य उनसे मिलने गए और उनकी मदद की। दूसरी घटना तब हुई जब मुझे खबर मिली कि कोरिया में जिस चर्च में मैंने सेवा की थी, वहाँ का एक यूनिवर्सिटी का छात्र मिशन ट्रिप के दौरान डूब गया। सदमे में, यह सोचते हुए कि मैं उस युवक के माता-पिता को कैसे दिलासा दूँ, मैंने प्रार्थना भरे दिल से एक पत्र लिखा और परमेश्वर से प्रार्थना की। मैंने परमेश्वर पिता से विनती की, उन्हें “अब्बा पिता” कहकर पुकारा, और उनसे आग्रह किया कि वे व्यक्तिगत रूप से उस युवक के माता-पिता, उसकी बहन, उसके दोस्तों और चर्च के सदस्यों को दिलासा दें।

सचमुच, यह दुनिया एक ऐसी जगह है जहाँ चिंताएँ, मुश्किलें, पाप और मौतें जमा होती रहती हैं। हम अपने प्यारे भाई-बहनों को देखते हैं जो तरह-तरह के दर्द और मुश्किलों से घिरे हैं। सच तो यह है कि हम दर्द और तकलीफ में जी रहे अपने प्यारे भाई-बहनों को कैसे दिलासा दे सकते हैं? व्यक्तिगत रूप से, जब मैं “दिलासा” शब्द के बारे में सोचता हूँ, तो मुझे अय्यूब 16:2 में अय्यूब के दोस्त और प्रेरितों के काम 4:16 में बरनबास याद आते हैं। अय्यूब 16:2 में, अय्यूब उन दोस्तों का जिक्र करते हैं जो उन्हें दिलासा देने आए थे, उन्हें “बेकार दिलासा देने वाले” कहते हैं। और प्रेरितों के काम 4:16 में बरनबास के बारे में, प्रेरितों के काम के लेखक लूका उन्हें “हौसला बढ़ाने वाला” (Son of Encouragement) कहते हैं। जहाँ अय्यूब के दोस्त ऐसे “दिलासा देने वाले” थे जिन्होंने उनकी तकलीफ के समय उन्हें राहत देने के बजाय और परेशान किया, वहीं शुरुआती चर्च में पाए जाने वाले बरनबास एक सच्चे दिलासा देने वाले थे। इसीलिए, जब मैं अपने लिए प्रार्थना करता हूँ,

तो अक्सर कहता हूँ: "हे प्रभु, मुझे एक दिलासा देने वाला और प्यार से भरा सुसमाचार प्रचारक बना।" फिर भी, अक्सर मुझे यह समझने में मुश्किल होती है कि अपने आस-पास मुश्किल और दर्द का सामना कर रहे प्यारे भाई-बहनों को कैसे दिलासा दूँ। मैं प्रभु के प्यार से दिलासा देना चाहता हूँ, लेकिन कई बार मुझे समझ नहीं आता कि क्या करूँ। पास्टर रॉबर्ट स्ट्रैंड की किताब *द स्पिरिटुअलिटी ऑफ़ कम्फर्ट* (The Spirituality of Comfort) में दुखी आत्माओं को दिलासा देने के बारे में 101 कहानियाँ हैं। फादर हेनरी नूवेन ने इसकी प्रस्तावना लिखी है, जिसमें वे बताते हैं कि "दिलासा" का मतलब है किसी अकेले व्यक्ति के "साथ होना"। किसी को दिलासा देने का मतलब उनका दर्द दूर करना नहीं है; बल्कि, उनके साथ मौजूद रहना है। ऐसी मौजूदगी ही आत्मा की सच्ची देखभाल है। साथ मिलकर रोना, साथ मिलकर मुश्किलों का सामना करना और भावनाओं को साझा करना—सच्ची देखभाल हमदर्दी से जुड़ी है। इस बारे में फादर हेनरी नूवेन ने एक बार कहा था: "अक्सर, हमारा दुख हमें नाचने पर मजबूर करता है, और हमारा नाच हमारे दुख के लिए जगह बनाता है। किसी प्यारे दोस्त के खोने पर बहाए गए आँसुओं में, हमें एक अनपेक्षित खुशी मिल सकती है। सफलता का जश्न मनाने वाली पार्टि के बीच भी, हम गहरा दुख महसूस कर सकते हैं। जैसे एक जोकर का चेहरा—जो हमें हँसाता और रुलाता भी है—दुखी और खुश दोनों लग सकता है, वैसे ही दुख और नाच, पीड़ा और हँसी, शोक और खुशी सब एक-दूसरे से जुड़े हैं। जीवन की सुंदरता वहाँ मिलती है जहाँ दुख और नाच एक-दूसरे को छूते हैं।" आपके बारे में क्या? क्या आप अपनी ज़िंदगी जीते हुए उस सुंदरता को देख रहे हैं जहाँ दुख और नाच मिलते हैं?

आज के पाठ में उपदेशक राजा सुलैमान बताते हैं कि उन्होंने उपदेशक की पुस्तक (Ecclesiastes) 4:1 में क्या देखा: "मैंने फिर देखा और सूरज के नीचे हो रहे सारे अत्याचारों को देखा: मैंने पीड़ितों के आँसू देखे—और उन्हें दिलासा देने वाला कोई नहीं था; ताकत उनके अत्याचार करने वालों के पक्ष में थी—और उन्हें दिलासा देने वाला कोई नहीं था।" राजा सुलैमान ने इस दुनिया में ताकतवर लोगों को दूसरों पर अत्याचार करते देखा; उन्होंने पीड़ितों को देखा। उन्होंने उन लोगों के आँसू भी देखे जिन पर अत्याचार हुआ था। फिर भी, समस्या क्या थी? समस्या यह थी कि इन पीड़ित लोगों को दिलासा देने वाला कोई नहीं था। बुद्धिमान राजा सुलैमान ने देखा कि पीड़ितों के लिए कोई दिलासा देने वाला नहीं था। इस सच्चाई को देखते हुए, राजा सुलैमान आज के पाठ, उपदेशक 4:2–3 में इस तरह कहते हैं: "इसलिए मैंने मरे हुआँ को, जो पहले ही मर चुके हैं, जीवित लोगों से ज़्यादा खुश बताया, जो अभी भी जीवित हैं। लेकिन उन दोनों से बेहतर वह है जो

कभी पैदा ही नहीं हुआ, जिसने सूरज के नीचे होने वाली बुराई को नहीं देखा।" इसका क्या मतलब है? इसका मतलब बिल्कुल भी यह नहीं है कि जुल्म सहते हुए जीने से मर जाना बेहतर है। राजा सुलैमान किसी भी तरह से आत्महत्या का समर्थन नहीं कर रहे हैं, और न ही वे यह कह रहे हैं कि बुरा बर्ताव सहने से अपनी जान दे देना ज़्यादा अच्छा है।

मेरा मानना है कि हम ऐसी दुनिया में रहते हैं जो एक तरह से आत्महत्या को बढ़ावा देती है। हम इसके सबूत उन वेबसाइट्स पर देख सकते हैं जो आत्महत्या के लिए बनी हैं। हैरानी की बात है कि हमने ऐसी खबरें भी देखी हैं—जैसे कोरिया से—जिनमें अनजान लोग इन साइट्स के ज़रिए मिलकर आत्महत्या करते हैं। मैं व्यक्तिगत रूप से ऐसे कई लोगों को जानता हूँ जिन्होंने अपनी जान दे दी। शायद जैसे-जैसे आर्थिक मुश्किलें बढ़ती हैं और ज़िंदगी का दर्द गहरा होता जाता है, बहुत से लोग आत्महत्या के विचारों से जूझते हैं और अपनी कीमती ज़िंदगी खत्म करने की कोशिश करते हैं। नतीजतन, आत्महत्या के मामलों की संख्या बढ़ती हुई दिख रही है। ऐसी परेशानी में घिरे लोग 'एक्लेसियास्टिस 4:2' (Ecclesiastes 4:2) का गलत मतलब निकाल सकते हैं और सोच सकते हैं, "यहाँ तक कि बुद्धिमान राजा सुलैमान भी कहते हैं कि जुल्म के साये में जीने से मर जाना बेहतर है।" हालाँकि, किसी को भी "मर जाना ही बेहतर है" सोचकर अपनी जान नहीं देनी चाहिए। राजा सुलैमान इस हिस्से में बिल्कुल भी आत्महत्या का समर्थन नहीं कर रहे हैं। आज के हिस्से में, राजा सुलैमान ताकतवर लोगों द्वारा सताए गए लोगों के आँसू देखते हैं और कहते हैं कि उनकी ज़िंदगी मौत से भी बदतर है। साफ तौर पर कहें तो, वे यह नहीं कह रहे हैं कि ईश्वर द्वारा दिया गया जीवन का तोहफ़ा ही मौत से कमतर है; बल्कि, वे यह कह रहे हैं कि बहुत ज़्यादा तकलीफ़ और अन्यायपूर्ण जुल्म वाली ज़िंदगी मौत से भी बदतर होती है (पार्क युन-सन)। असल में किस तरह की ज़िंदगी मौत से भी बदतर होती है? जब मैं इस सवाल पर सोचता हूँ, तो मुझे उत्तर कोरिया से भागकर आए लोगों (डिफेक्टर्स) की याद आती है। मैंने एक बार *वॉल स्ट्रीट जर्नल* (1 मई, 2006) में एक ऑनलाइन लेख पढ़ा था, जिसमें चीन में भागकर आए लोगों की दयनीय ज़िंदगी के बारे में बताया गया था। यह जानकारी उन महिलाओं के बयानों पर आधारित थी जो 'उत्तर कोरिया मानवाधिकार अधिनियम' के तहत अमेरिका आई थीं। लेख में "हन्ना" नाम की एक 36 वर्षीय महिला का ज़िक्र था। वह प्योंगयांग में शिक्षिका थीं, लेकिन अपने मुश्किल हालात से जूझ रहे परिवार की मदद के लिए उन्होंने कपड़े का व्यापार शुरू किया; सामान लेने के लिए एक सीमावर्ती शहर की यात्रा के दौरान, रात के खाने के समय वे बेहोश हो गईं और जब उनकी आँख खुली तो उन्होंने खुद को चीन में पाया—

उनकी तस्करी कर ली गई थी। एक चीनी व्यक्ति को बेचे जाने के बाद, उसे बेरहमी से पीटा गया, जिससे उसकी हड्डियाँ टूट गईं और उसे जुबानी तौर पर भी बहुत बुरा-भला कहा गया—जैसे कि उससे कहा गया कि उसके जैसी उत्तर कोरियाई महिला को मारना मुर्गी को मारने से भी आसान है। उसने बताया कि उसने आत्महत्या करने के बारे में भी सोचा था और इस अनुभव को "नरक में जीने" जैसा बताया। ऐसे लोगों के अनगिनत बयान मौजूद हैं। मैं उनकी तकलीफ़ को पूरी तरह समझने का दावा तो नहीं कर सकता, लेकिन एक पादरी की कही बात मुझे हमेशा याद रहती है: "जब मैं उत्तर कोरिया से भागकर आए लोगों से मिलता हूँ, तो मुझे 'बुक ऑफ़ एक्सोडस' (बाइबल का एक हिस्सा) सचमुच जीवंत लगने लगती है।"

ऐसे लोगों के लिए, सभोपदेशक 4:3 के शब्द—जो आज हमारा मुख्य वचन है—कितने गहरे असर वाले होंगे? "उन दोनों से वे मरे हुए लोग बेहतर हैं जो पहले ही मर चुके हैं, और वे जीवित लोग जो अभी भी ज़िंदा हैं; लेकिन उनसे भी बेहतर वह है जो कभी पैदा ही नहीं हुआ, जिसने सूरज के नीचे होने वाली बुराई को नहीं देखा।" अगर उत्तर कोरिया से भागकर आए लोग कभी पैदा ही न हुए होते, तो उन्होंने इस दुनिया में होने वाली बुराई को न देखा होता, और न ही उन्हें इतनी तकलीफ़ होती कि वे मौत की कामना करते; यह कितना बेहतर होता। और आपके बारे में क्या? अपनी ज़िंदगी को पीछे मुड़कर देखने पर, क्या कभी ऐसा समय आया है जब आप सिर्फ़ इसलिए जी रहे थे क्योंकि आप खुद को मौत के हवाले नहीं कर पा रहे थे? क्या कभी ऐसे पल आए हैं जब दर्द इतना ज़बरदस्त था कि साँस लेना भी मौत से बदतर लग रहा था? ऐसा समय जब आप लगातार आँसू बहाते रहे? फिर भी, जब हम इतनी तकलीफ़ में होते हैं कि मौत की चाहत करने लगते हैं, तो शायद सबसे मुश्किल बात—दर्द से भी ज़्यादा—यह होती है कि, जैसा कि राजा सुलैमान ने आयत 1 में कहा है, "सांत्वना देने वाला कोई नहीं है।" जब हम सबसे बुरे दौर में होते हैं, सबसे ज़्यादा परेशान और दुखी होते हैं, तो हमारी तकलीफ़ को और गहरा करने वाली बात यह एहसास होता है कि हमारे आस-पास कोई ऐसा नहीं है जो हमारे संघर्ष और दर्द को सच में समझे, हमदर्दी दिखाए और हमें दिलासा दे। शायद सबसे ज़्यादा तकलीफ़ देने वाली सच्चाई तब होती है जब हमारे आस-पास ऐसे लोग *होते* हैं जो हमसे प्यार करते हैं और दिलासा देने की कोशिश करते हैं, फिर भी कोई हमें सच में सुकून नहीं दे पाता—या शायद, अपने गहरे दुख में, हम उस दिलासे को ही ठुकरा देते हैं जो वे देते हैं। जब जुल्म करने वाले की बुराई कभी न खत्म होने वाली लगती है, और जुल्म और अत्याचार के रुकने का कोई संकेत नहीं दिखता, तो हम सपने देखना छोड़ देते हैं। हम उम्मीद का दामन छोड़ देते हैं; हम उम्मीद नाम की उस आखिरी सहारे की डोर

को छोड़ देते हैं। यही चीज़ हमें निराशा में धकेल देती है। उम्मीद के बिना ज़िंदगी का नतीजा हमेशा निराशा ही होता है। तो फिर, जब हम ऐसी निराशा में हों तो हमें क्या करना चाहिए? हम बाइबल से तीन बातें सीख सकते हैं:

पहली बात, जब हम निराशा में हों तो हमें अपनी आत्मा से बात करनी चाहिए।

एक किताब जो मुझे आज भी अच्छी तरह याद है, वह है डॉ. मार्टिन लॉयड-जोन्स की लिखी *स्पिरिचुअल डिप्रेशन* (Spiritual Depression)। इसे पढ़कर मुझे यह एहसास हुआ कि जब हम निराश या हताश होते हैं, तो हमें अपनी आत्मा से बात करनी चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे भजनकार ने किया था। हमें कैसे बात करनी चाहिए? डॉ. लॉयड-जोन्स भजन संहिता 42:5, 11 और 43:5 के शब्दों की ओर इशारा करते हैं: "हे मेरी आत्मा, तू क्यों उदास है? तू मेरे भीतर इतनी बेचैन क्यों है? परमेश्वर पर भरोसा रख, क्योंकि मैं फिर भी उसकी स्तुति करूँगा, जो मेरा उद्धारकर्ता और मेरा परमेश्वर है।" इसलिए, जब भी मैं निराश महसूस करता हूँ, तो मैं इन वचनों को याद करता हूँ और खुद से कहता हूँ: "जेम्स, तू क्यों उदास है? तू क्यों परेशान है? जेम्स, परमेश्वर पर भरोसा रख।" ऐसा करते हुए, मैं जानबूझकर प्रार्थना करता हूँ और प्रभु की ओर देखने की कोशिश करता हूँ, जो मेरी मदद करने वाले हैं। अक्सर, उन पलों में मुझे परमेश्वर की मदद का अनुभव होता है। मैं आपको भी ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता हूँ। जब आपका दिल निराशा या हताशा से भरा हो, तो परमेश्वर के वचन को खुद से कहने की कोशिश करें। भले ही वह भजन संहिता का कोई अंश न हो— उदाहरण के लिए, जब आप चर्च की सेवा करते हुए संघर्ष कर रहे हों—तो मत्ती 16:18 में दिए गए प्रभु के वादे को दोहराने की कोशिश करें: "...मैं अपनी कलीसिया बनाऊँगा।" परमेश्वर निश्चित रूप से आपकी मदद करेंगे।

दूसरी बात, निराशा के बीच हमें यीशु की चाहत रखनी चाहिए।

जब हम निराशा में हों तो हमें यीशु की चाहत रखनी चाहिए; हमें सच्चे दिल से उनकी इच्छा करनी चाहिए। खासकर, जब हम दुख के कारण निराशा में हों, तो हमें क्रूस पर यीशु के दुख को देखना चाहिए। जब हम खुद दुख सह रहे हों तो हमें यीशु के क्रूस के दुख को क्यों देखना चाहिए? ऐसा इसलिए है क्योंकि सच्चा

आराम और चंगाई तभी मिल सकती है जब हमारा अपना दुख यीशु के दुख से जुड़ जाए, और हम चुपचाप उनके दर्द को देखें और उस पर मनन करें। व्यक्तिगत रूप से, जब मैं निराश महसूस करता हूँ, तो मैं अक्सर योना 2:4 को याद करता हूँ: "मैंने कहा, 'मैं तेरी दृष्टि से निकाल दिया गया हूँ; फिर भी मैं तेरे पवित्र मंदिर की ओर फिर से देखूँगा।'" मैं इस वचन पर मनन करता हूँ क्योंकि, भले ही मैं निराशा में होऊँ—ठीक योना की तरह, जो प्रभु का सेवक था और जिसने परमेश्वर के वचन की अवज्ञा करने के बाद अनुशासन का तूफान झेला और समुद्र की गहराइयों में पहुँच गया था—मैं "प्रभु के मंदिर की ओर फिर से देखने" और सच्चे दिल से उनकी चाहत रखने का संकल्प लेना चाहता हूँ। मुझे उम्मीद है कि जब आप भी निराश या हताश महसूस करेंगे, तो आप योना की इस बात पर भरोसा करेंगे और एक बार फिर प्रभु की ओर देखेंगे। काश आप अपनी निराशा और हताशा को प्रभु के लिए तड़प पैदा करने के मौके में बदल सकें।

तीसरी बात, निराशा के बीच हमें यीशु पर अपनी उम्मीद रखनी चाहिए।

आखिरकार, निराशा ही हमें यीशु पर उम्मीद रखने की ओर ले जाती है। जब हम इस दुनिया में रहते हुए अलग-अलग मामलों में निराशा का सामना करते हैं, तो वह निराशा प्रभु के लिए तड़प पैदा करने का एक बेहतरीन मौका बन जाती है... यह परमेश्वर की ओर से दिया गया एक मौका है—जो आखिरकार हमें दुनिया और खुद को पीछे छोड़कर सिर्फ प्रभु की ओर देखने और उन पर उम्मीद रखने की ओर ले जाता है। इसीलिए हमें इस दुनिया से पूरी तरह निराश—यहाँ तक कि हताश—होना चाहिए। इसके अलावा, हमें खुद को लेकर भी पूरी तरह निराश और हताश होना चाहिए। वजह यह है कि ऐसी निराशा के बिना, हम शायद ही कभी परमेश्वर के लिए तड़पते हैं या उन पर उम्मीद रखते हैं। व्यक्तिगत रूप से, मुझे भजन 539, "मेरी उम्मीद किसी और चीज़ पर नहीं टिकी है" (My Hope Is Built on Nothing Less) के तीसरे पद के बोल बहुत पसंद हैं: "जब मेरी आत्मा चारों ओर से डगमगाती है, तब वही मेरी एकमात्र उम्मीद और सहारा होते हैं; मैं मसीह, उस मज़बूत चट्टान पर खड़ा हूँ।" मुझे ये बोल इसलिए पसंद हैं क्योंकि जब इस दुनिया में जिन चीज़ों पर हमने कभी भरोसा किया था, वे सब बिखर जाती हैं, ठीक तभी हम प्रभु पर और भी गहराई से भरोसा करते हैं; हमारे दिलों की निराशा गायब हो जाती है, और हम उनमें उम्मीद से भरने का बदलाव महसूस करते हैं। जब ऐसा होता है, तो हम परमेश्वर की स्तुति इस तरह कर सकते हैं: "(पद 1) प्रभु, आप ही मेरी खुशी, मेरी उम्मीद और मेरा जीवन हैं; भले ही मैं दिन-रात आपकी स्तुति करता हूँ, फिर भी मेरा दिल

और अधिक पाने के लिए तड़पता है। (पद 5) यीशु, जिन्हें मैं सचमुच बहुत प्यार करता हूँ—आपकी आवाज़ सुनकर ही मुझे खुशी मिलती है; आप ही मेरा जीवन और मेरी सच्ची उम्मीद हैं" [भजन 82, "प्रभु, आप ही मेरी खुशी और मेरी उम्मीद हैं," पद 1 और 5]।

मैं प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु, जो हमारी उम्मीद हैं, आपको दिलासा दें। मैं प्रार्थना करता हूँ कि जब कोई और दिलासा न दे सके, तब वे आपको दिलासा दें। यहाँ तक कि जब आपका दर्द इतना ज़्यादा हो कि आप किसी और से दिलासा लेने से इनकार कर दें, तब भी मैं प्रार्थना करता हूँ कि प्रभु आपके दिलों को उनके लिए गहरी तड़प और उम्मीद से भर दें। मेरी प्रार्थना है कि आप जीवन की सुंदरता—खासकर एक ईसाई की सुंदरता—को ठीक उसी जगह देख सकें जहाँ दुख और खुशी का मिलन होता है। अपनी बात खत्म करते हुए, मैं एक ऐसी बात साझा करना चाहता हूँ जो मैंने एक *ग्वोंसा* (वरिष्ठ महिला सदस्य) के बारे में सोचते हुए लिखी थी, जिनके ज़रिए परमेश्वर ने मुझे यह ईसाई सुंदरता दिखाई:

"आप सुंदर हैं।

दिल में आँसू होने के बावजूद आपके चेहरे पर मुस्कान रहती है; आप सुंदर हैं।

आपका प्यारा बेटा हमेशा की नींद सो रहा है, फिर भी आप परमेश्वर का धन्यवाद करती हैं; आप सुंदर हैं।

आप अपने घर-परिवार से ज़्यादा अपने प्यारे चर्च परिवार की परवाह करती हैं; आप सुंदर हैं।

आप दूसरों से दिलासा पाने के बजाय उन्हें दिलासा देती हैं; आप सुंदर हैं।

आप लेने के बजाय देने में खुशी महसूस करती हैं; आप सुंदर हैं।

आप परमेश्वर पिता के दिल को अपनाती हैं और आत्माओं को बचाने की कोशिश करती हैं; आप सुंदर हैं।

आप परमेश्वर की महिमा करती हैं; आप सुंदर हैं।

मैं आपमें मसीह को देखता हूँ..."

दिन 29: मन पक्का करें!

[भजन संहिता 57 पर मनन]

एक दिन, जब मैं अपनी सबसे छोटी बेटी यीउन के साथ घर पर थी, तो हमने थोड़ी देर के लिए बच्चों का टीवी कार्टून "काइयू" देखा। कार्टून में एक सीन था जिसमें मुख्य किरदार, काइयू, अपने पिता के साथ एक पेड़ लगा रहा था, लेकिन हवा चलने पर वह परेशान हो गया। उसी समय, काइयू के पिता मदद के लिए आए; उन्होंने देखा कि लगाया हुआ पेड़ हवा में डगमगा रहा था, तो उन्होंने एक लकड़ी ली और उसे पेड़ से बांध दिया ताकि वह हिले नहीं। 'पेरेंट्स डे' (माता-पिता दिवस) की सुबह की प्रार्थना सभा के दौरान मुझे वह सीन याद आया। उस सीन के बारे में सोचते हुए, मैंने तय किया कि मैं घर पर अपने बच्चों के लिए उस पेड़ के साथ बांधी गई लकड़ी की तरह बनूँगी। दूसरे शब्दों में, मैंने प्रार्थना की कि मैं अपने बच्चों के लिए उस लकड़ी की तरह ही मज़बूती का सहारा बनूँ।

"हू इज़ अ फ़ादर?" (लेखक: किम जोंग-यून) किताब पर पाठकों की समीक्षाओं में एक बात लिखी थी: "पिता का महत्व, जिसे हम जानते हुए भी अक्सर नज़रअंदाज़ कर देते हैं; एक ऐसा प्यारा व्यक्ति जो हमारे दिलों में जगह बनाता है और जिसे हम भरोसेमंद सहारा मानते हैं, भले ही हम उससे नफ़रत करते हों... यह एक अच्छी किताब थी जिसने मेरे दिल में ऐसे पिता के लिए महत्व और कृतज्ञता की भावना जगाई, जिन्हें हमने लापरवाही से नज़रअंदाज़ कर दिया था।" एक और समीक्षा थी: "जीवन का सहारा, पिता" (जो गियोन-जोंग): "पिता वह है जिसने एक मज़बूत सहारे के रूप में हमारी देखभाल की है, भले ही हम उनके करीब न हों।" इन समीक्षाओं को पढ़कर मुझे महसूस हुआ कि कई पिताओं और उनके बेटों (या बेटियों) के रिश्तों में, पिता एक अनमोल व्यक्ति और भरोसेमंद सहारा होते हैं, भले ही वे उनसे "नफ़रत" करते हों या "करीब न हों"। व्यक्तिगत रूप से, मुझे एहसास हुआ है कि जिस तरह आस्था में मेरे माता-पिता मेरे लिए एक मज़बूत सहारा रहे हैं, उसी तरह मुझे भी अपने बच्चों के लिए एक मज़बूत सहारा बनना चाहिए। तो, ऐसा करने के लिए मुझे क्या करना होगा? आप भी

शायद अपने बच्चों के लिए एक मज़बूत सहारा बनना चाहते होंगे; हम इसे कैसे हासिल कर सकते हैं? हमें पक्का इरादा करना होगा। आज के वचन, भजन संहिता 57:7 में, हम दाऊद को यही संकल्प लेते हुए देखते हैं: "हे परमेश्वर, मेरा मन स्थिर है, मेरा मन स्थिर है; मैं गाऊंगा और भजन गाऊंगा।" "स्थिर" शब्द का अर्थ है अडिग, पक्का और न बदलने वाला—यानी अपने विश्वास में पक्का। दूसरे शब्दों में, भजनकार ने केवल कोई साधारण फैसला नहीं किया; उसने एक पक्का और दृढ़ संकल्प लिया। "अपने मन को स्थिर करने" का अर्थ है यह पहचानना कि इसके अलावा कोई और उम्मीद या कोई और रास्ता नहीं है।

"जिस व्यक्ति ने अपना मन स्थिर कर लिया है, उसका जीवन खुशहाल होता है। डगमगाते हुए जीवन और दृढ़ संकल्प वाले जीवन के बीच उतना ही अंतर है जितना खुशी और दुख के बीच होता है। जो लोग अपना मन स्थिर नहीं करते, वे डर का सामना करते हैं। जो लोग अपना मन दृढ़ता से स्थिर कर लेते हैं, उन्हें कोई डर नहीं होता, क्योंकि उन्हें कोई पछतावा नहीं होता। बिना पछतावे वाला मन ही दृढ़ संकल्प वाला मन होता है... हमारे मन को एक ही बिंदु पर स्थिर और केंद्रित होना चाहिए। यदि किसी विश्वासी का मन बिना किसी फैसले के डगमगाता है, तो वह परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकता। विश्वासी का विश्वास परमेश्वर पर टिका होना चाहिए। यदि परमेश्वर पर भरोसा रखने वाला विश्वास डगमगाता है, तो कोई भी व्यक्ति अनुग्रह से भरा जीवन नहीं जी सकता" (इंटरनेट)। आज के वचन और "अपने मन को स्थिर करें" शीर्षक पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं तीन बातें बताना चाहूंगा कि कैसे एक स्थिर मन वाला विश्वासी संकट और मुश्किलों के समय व्यवहार करता है।

पहला, एक स्थिर मन वाला विश्वासी संकट और मुश्किलों के समय शरण लेता है।

आज के वचन, भजन संहिता 57:1 को देखें: "हे परमेश्वर, मुझ पर दया कर, मुझ पर दया कर, क्योंकि मेरी आत्मा तुझमें शरण लेती है। जब तक विपत्ति टल न जाए, मैं तेरे पंखों की छाया में शरण लूंगा।" भजनकार दाऊद ने प्रभु में शरण ली क्योंकि उस पर एक विपत्ति आ पड़ी थी। वह विपत्ति क्या थी? वह शाऊल द्वारा किया जा रहा उत्पीड़न था। जैसा कि भजन के शीर्षक में बताया गया है, दाऊद ने शाऊल से बचने के लिए एक गुफा में छिपते हुए भजन संहिता 57 लिखा था। शाऊल के उत्पीड़न के कारण वह भाग रहा था। दिलचस्प बात यह है कि शीर्षक में इस्तेमाल किए गए शब्द "अल-ताशहेथ" का अर्थ है "नष्ट न करें।" चौथे पद में, दाऊद अपनी स्थिति का वर्णन करता है: "मैं शेरों के बीच हूँ; मैं भूखे जानवरों के बीच लेटा हूँ—ऐसे लोग जिनके दाँत भाले और तीर

जैसे हैं, जिनकी जीभ तेज़ तलवार जैसी है।" दाऊद ने अपने दुश्मनों—शाऊल और उसके आदमियों—की तुलना शेरों से की, क्योंकि वे बेरहमी और क्रूरता से उसे नुकसान पहुँचाना चाहते थे (पार्क युन-सन)। उन्होंने उसे फँसाने के लिए जाल बिछाया था (पद 6)। नतीजतन, दाऊद ने परमेश्वर के सामने अपना दिल खोलकर कहा, "मेरी आत्मा मुसीबत में है।" आखिरकार, जब वह जीवन-मरण के मोड़ पर खड़ा था—शाऊल के हाथों विनाश का सामना कर रहा था—तो दाऊद ने प्रभु की शरण ली। मुसीबत टलने तक वह प्रभु की शरण में रहा। तो, दाऊद ने कहाँ शरण ली? उसने "प्रभु के पंखों की छाया" में शरण ली। यह रूपक बताता है कि विश्वास करने वाले की परमेश्वर द्वारा सुरक्षा वैसी ही है जैसे एक मुर्गी अपने चूजों को अपने पंखों के नीचे छिपाकर रखती है (पार्क युन-सन)। यह दृश्य बाइबिल के कई हिस्सों में दिखाई देता है; खास तौर पर, व्यवस्थाविवरण 32:11-12 में परमेश्वर मूसा से कहते हैं: "जैसे एक चील अपने घोंसले को हिलाती है और अपने बच्चों के ऊपर मंडराती है, उन्हें पकड़ने के लिए अपने पंख फैलाती है और उन्हें ऊपर ले जाती है—वैसे ही केवल प्रभु ने उनकी अगुवाई की; कोई विदेशी देवता उनके साथ नहीं था।" जैसे एक चील अपने घोंसले को हिलाती है—अपने बच्चों के ऊपर मंडराती है, उन्हें पकड़ने के लिए अपने पंख फैलाती है और उन्हें ले जाती है—वैसे ही परमेश्वर कभी-कभी हमारे आराम में खलल डालते हैं जब हम अपने "घोंसलों" में बहुत आराम से विश्वास का जीवन जी रहे होते हैं। वे हमें नीचे गिराते हैं, ठीक वैसे ही जैसे एक माँ चील अपने बच्चों को ऊँची चट्टान पर बने घोंसले से नीचे धकेलती है। उस पल में, ज़मीन पर गिरने से बचने की सहज प्रवृत्ति से प्रेरित होकर, छोटा चील का बच्चा बेताबी से अपने पंख फड़फड़ाता है; इसी तरह, हम भी संकट से बचने के लिए ज़ोर-शोर से संघर्ष करते हैं। फिर भी, इतनी बेताब कोशिशों के बावजूद, कई बार हम खुद को ज़मीन की ओर बेबस होकर गिरते हुए देखते हैं, ठीक वैसे ही जैसे चील का बच्चा गिरता है। ठीक उसी समय—ज़मीन से टकराने से एक पल पहले—माँ चील तीर की तरह झपटती है, अपने बच्चे को अपने पंखों पर पकड़ती है और वापस घोंसले में उड़ जाती है। उस नाटकीय पल में, हमारे परमेश्वर ठीक उसी माँ चील की तरह काम करते हैं, हमें बचाते हैं और हमारी अगुवाई करते हैं। दूसरी बात, मज़बूत दिल वाला विश्वासी मुश्किलों और मुसीबतों के बीच प्रार्थना करता है।

आज का वचन देखिए, भजन संहिता 57:2: "मैं परमप्रधान परमेश्वर की दुहाई देता हूँ, उस परमेश्वर की जो मेरे लिए अपना मकसद पूरा करता है।" मुसीबत के समय, दाऊद ने परमेश्वर को अपनी शरण बनाया, उनकी ओर भागा और दुहाई दी। दाऊद की भरोसे और विनती भरी प्रार्थना में, हमें उस पर ध्यान देना चाहिए जिससे उसने

प्रार्थना की—स्वयं परमेश्वर। पहली बात, जिस परमेश्वर पर दाऊद ने प्रार्थना में भरोसा किया, वह "परमप्रधान परमेश्वर" था (वचन 2)। जब दाऊद ने खुद को सबसे निचली स्थिति में पाया, तब भी उसने परमप्रधान परमेश्वर की ओर देखा और उन्हें पुकारा। जैसे एक छोटा चील का बच्चा अपने घोंसले से गिरकर ज़मीन की ओर तेज़ी से नीचे आ रहा हो और ज़मीन से टकराने से पहले अपनी माँ को बचाने के लिए चिल्लाता है, ठीक वैसे ही—जब हम मुसीबत की गहरी खाई में डूबते जाते हैं—तो हमें एहसास होता है कि उम्मीद हममें नहीं बल्कि सिर्फ़ प्रभु में है; इसलिए, हम परमप्रधान प्रभु की ओर देखते हैं और दुहाई देते हैं। भविष्यद्वक्ता योना इसका एक बेहतरीन उदाहरण है। योना तर्शीश गया, जहाज़ पर चढ़ा, और एक बड़ी मछली के पेट में समुद्र की गहराइयों में और नीचे चला गया; फिर भी, उसने ठान लिया, "मैं फिर से तेरे पवित्र मंदिर की ओर देखूँगा" (योना 2:4)। दूसरी बात, जिस परमेश्वर पर दाऊद ने प्रार्थना में भरोसा किया, वह "मेरे लिए अपना मकसद पूरा करने वाला परमेश्वर" था (वचन 2)। परमप्रधान परमेश्वर ही वह है जो हमारे लिए अपना मकसद पूरा करता है। दाऊद ने इसी परमेश्वर से विनती की थी। यशायाह 14:24 और 27 देखिए: "सेनाओं के यहोवा ने शपथ खाकर कहा है, 'निश्चय ही, जैसा मैंने सोचा है, वैसा ही होगा, और जैसा मैंने ठाना है, वैसा ही पूरा होगा'... क्योंकि सेनाओं के यहोवा ने ठाना है, और उसे कौन टाल सकता है? उसका हाथ बढ़ा हुआ है, और उसे कौन पीछे हटा सकता है?" हमारे लिए प्रभु की इच्छा क्या है? उसके विचार क्या हैं? उसका मकसद क्या है? वह है हमारा उद्धार। तीसरी बात, जिस परमेश्वर पर दाऊद ने प्रार्थना में भरोसा किया, वह प्रेम-दया और सच्चाई का परमेश्वर था। आज के वचन, भजन संहिता 57:3 को देखिए: "वह स्वर्ग से सहायता भेजेगा और मुझे बचाएगा; वह अपनी करुणा और सच्चाई भेजेगा" (सेलाह)। जब दाऊद ने सर्वोपरि परमेश्वर—वह प्रभु जो दाऊद के लिए अपनी इच्छा पूरी करता है—से प्रार्थना की, तो उसने उद्धार के भरोसे के साथ ऐसा किया। दाऊद को पूरा भरोसा था कि प्रभु स्वर्ग से अपनी दया और सच्चाई भेजकर उसे उन लोगों की बदनामी से बचाएंगे जो उसे निगल जाना चाहते थे। क्योंकि हमारा प्रभु दयालु और सच्चा है, इसलिए वह अपनी इच्छा—यानी हमारा उद्धार—पूरी ईमानदारी से और केवल अपने प्रेम के द्वारा पूरा करता है। हमारी अपनी कोई योग्यता नहीं है; हम केवल उसकी दया और सच्चाई से ही बचाए जाते हैं।

तीसरी बात, मज़बूत दिल वाला विश्वासी संकट और मुश्किलों के बीच भी परमेश्वर की महिमा करता है।

भजन संहिता 57 की आयत 5 और 11 को देखें, जो आज हमारा मुख्य विषय है: "हे परमेश्वर, तू आकाश के ऊपर ऊँचा हो; तेरी महिमा सारी पृथ्वी पर छा जाए।" दाऊद ने परमेश्वर की महिमा कैसे की? उसने परमेश्वर की स्तुति करके उनकी महिमा की। आयत 7 के बाद के हिस्से से लेकर आयत 9 तक देखें: "...मैं गाऊँगा और संगीत बजाऊँगा। जाग, मेरी आत्मा! जाग, वीणा और सारंगी! मैं भोर को जगाऊँगा। हे प्रभु, मैं लोगों के बीच तेरा धन्यवाद करूँगा; मैं जातियों के बीच तेरी स्तुति के गीत गाऊँगा।" जीवन और मरण के इतने नाजुक मोड़ पर दाऊद स्तुति के ज़रिए परमेश्वर की महिमा कैसे कर पाया? ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उसका दिल मज़बूत और स्थिर था (आयत 7)। मज़बूत दिल की क्या खासियत होती है? डॉ. पार्क युन-सन ने तीन बातें बताई हैं: पहली, मज़बूत दिल मौत का सामना करने के लिए तैयार रहता है। दाऊद ने मौत का सामना करने का संकल्प लिया और अपने दिल को इसके लिए तैयार किया। दूसरी, मज़बूत दिल अच्छा काम करने के लिए तैयार रहता है। मूर्खों की एक खासियत यह होती है कि उनके दिल में ऐसी तैयारी नहीं होती; वे बिना किसी पक्के लक्ष्य के लगातार डगमगाते रहते हैं। लेकिन विश्वासी तैयार दिल के साथ काम करते हैं। आखिर में, मज़बूत दिल प्रभु पर भरोसा रखता है और शांति पाता है। हमें हमेशा प्रभु की ओर देखना चाहिए, उनका इंतज़ार करना चाहिए, प्रार्थना करनी चाहिए और उन्हें अपने जीवन में अपनाना चाहिए। प्रभु का स्वागत करने या उन्हें अपनाने का क्या मतलब है? इसका मतलब है बाइबल का वह वादा कि परमेश्वर विश्वासी के साथ-साथ चलते हैं। मज़बूत दिल वाले विश्वासी को हर स्थिति में परमेश्वर से उद्धार मिलने का भरोसा होता है और वह सच्चे दिल से चाहता है कि परमेश्वर की महिमा पूरी दुनिया में फैले। यहाँ तक कि जब उसे निजी नुकसान या दुख और मुश्किलों का सामना करना पड़ता है, तब भी ऐसा विश्वासी पूरे जोश के साथ प्रार्थना करता है कि महान परमेश्वर की महिमा पृथ्वी पर वैसे ही छा जाए जैसे समुद्र में पानी भरा होता है। हालाँकि दाऊद पर मुसीबत आई थी, फिर भी उसने धन्यवाद भरे दिल से प्रभु की स्तुति की (आयत 8)। ऐसा क्यों था? इसलिए क्योंकि उसने प्रभु की महान दया और सच्चाई का अनुभव किया था, जिसे परमेश्वर ने भेजा था (आयत 3)। इसलिए, दाऊद ने कहा, "क्योंकि तेरी दया महान है, जो आकाश तक पहुँचती है, और तेरी सच्चाई बादलों तक" (आयत 10)। हमारे चर्च में दादी जांग-सू-लू नाम की एक महिला थीं। जब वह जीवित थीं, तो मैं एक बार उनसे नर्सिंग होम में मिलने गया और उनसे कहा, "दादी, आप बहुत सुंदर हैं।" मुझे वह इसलिए सुंदर लगीं क्योंकि मैंने उनमें यीशु को देखा। उन्हें आभारी मन से प्रभु की स्तुति करते (खासकर भजन 40 और 355 गाते हुए), भजन संहिता 23 का पाठ करते और बार-बार 'प्रभु की प्रार्थना' और 'प्रेरितों का विश्वास-सार' (Apostles' Creed) दोहराते हुए देखकर, मैंने विश्वास का एक सच्चा उदाहरण देखा—एक ऐसी महिला जिन्होंने अपनी आखिरी सांस तक प्रभु की स्तुति की। मेरा मानना है कि दादी

जांग परमेश्वर की नज़र में सचमुच सुंदर थीं; जीवन और मृत्यु के मोड़ पर खड़े होकर, उन्होंने अपना मन यीशु पर टिकाए रखा—जो उनके उद्धारकर्ता और एकमात्र आशा थे—उन्होंने उनमें शरण ली, उनसे सच्चे मन से पुकार की और अपनी स्तुति के द्वारा उनकी महिमा की। उनके उदाहरण का अनुसरण करते हुए, मैं भी चाहता हूँ कि मेरा मन अडिग रहे और मैं अपनी आखिरी सांस तक धन्यवाद के साथ प्रभु की स्तुति करता रहूँ।

दिन 30: परमेश्वर हमसे क्या चाहते हैं

[भजन संहिता 81 पर मनन]

एक बार, परिवार की प्रार्थना सभा करने से पहले, हम परिवार के पाँचों सदस्य मेरे और मेरी पत्नी के बिस्तर पर दीवार के सहारे बैठकर किताबें पढ़ रहे थे। मेरी पत्नी, मेरा बेटा डिलन और मैं बाइबल पढ़ रहे थे, जबकि हमारी बड़ी बेटी, येरी, अपनी छोटी बहन यीउन को "प्रिंसेस" (राजकुमारी) नाम की किताब पढ़कर सुना रही थी। थोड़ी देर पढ़ने के बाद, मैंने कहा, "चलो अब प्रार्थना करते हैं," और यीउन ने उदास होते हुए, बिना मन के किताब नीचे रख दी। बाद में, जब हमने प्रार्थना की, तो येरी ने बाइबल का पहला अध्याय पढ़ा, और मैंने उस अध्याय में बताई गई बातों पर कुछ उत्साह बढ़ाने वाली बातें कहीं। फिर, जब हमने प्रार्थना करने की कोशिश की, तो यीउन ने नहीं सुना। इसलिए, मैंने उसे बिस्तर से नीचे अपने सामने खड़ा किया और पूछा कि क्या वह मेरे साथ प्रार्थना करना चाहती है, जिस पर उसने धीरे से जवाब दिया, "नहीं।" तब मैंने कहा, "तो तुम वह किताब ले लो जो तुम पढ़ रही थी और अपने कमरे में चली जाओ," और यीउन खुशी से मुस्कुराई और अपने कमरे में चली गई। असल में, हम सबके पढ़ने के लिए इकट्ठा होने से पहले ही, यीउन ने हमारे बिस्तर पर बैठकर और खुद-ब-खुद "परमेश्वर" शब्द बुदबुदाते हुए बाइबल पढ़ ली थी। हालाँकि, जब हम बाइबल पढ़ रहे थे और प्रार्थना सभा कर रहे थे, तो यीउन उस राजकुमारी वाली किताब को और ज़्यादा पढ़ना चाहती थी जिसे वह पहले पढ़ रही थी। आज सुबह अपनी पत्नी से बात करते हुए मुझे पता चला कि डिलन और येरी तो सो रहे थे, लेकिन यीउन जल्दी जाग गई थी और शायद वह किताब देख रही थी। सोचता हूँ कि उसका उसे पढ़ने का कितना मन रहा होगा... माता-पिता के तौर पर, हम चाहते थे कि यीउन हमारी पारिवारिक सभा के दौरान हमारे साथ प्रार्थना करे, लेकिन वह असल में उस राजकुमारी वाली किताब को और पढ़ना चाहती थी। हालाँकि मुझे इस बारे में थोड़ा अजीब लगा, लेकिन पारिवारिक प्रार्थना सभा में सिर्फ मेरी पत्नी, डिलन, येरी और मैंने ही हिस्सा लिया, जबकि यीउन अपनी राजकुमारी वाली किताब के साथ अपने कमरे में ही रही। भले ही हमने जान-बूझकर सभा में देरी की थी

क्योंकि यीउन को अपनी बड़ी बहन येरी से वह किताब सुनना पसंद है, लेकिन लगता है कि उसे उस किताब के साथ और समय चाहिए था।

इस घटना पर विचार करते हुए, मैं यह सोचना चाहता हूँ कि कैसे परमेश्वर पिता और उनके बच्चों—यानी हम—की इच्छाएँ कभी-कभी अलग-अलग हो सकती हैं। जैसे यीउन अक्सर अपनी मर्जी से काम करती थी, वैसे ही कई बार हम भी ऐसा ही करते हैं, जबकि परमेश्वर की हमारे लिए कुछ खास इच्छाएँ होती हैं। आखिरकार, मेरा मानना है कि परिपक्व विश्वास का मतलब है परमेश्वर पिता की इच्छा के अनुसार जीना—ठीक वैसे ही जैसे एक समझदार बच्चा अपने माता-पिता के दिल की बात समझता है और उनकी इच्छाओं का पालन करता है। इसलिए, भजन संहिता 81 पर ध्यान केंद्रित करते हुए, मैं उन तीन बातों पर विचार करना चाहता हूँ जो परमेश्वर हमसे चाहते हैं। मेरी प्रार्थना है कि हम ये तीन बातें सीखें और इस तरह जिएँ कि परमेश्वर पिता की इच्छा पूरी हो।

पहली बात, परमेश्वर हमसे "स्तुति" चाहते हैं।

भजन संहिता 81:1 को देखें: "परमेश्वर के लिए ऊँचे स्वर में गाओ, जो हमारी शक्ति है; याकूब के परमेश्वर के लिए खुशी से जय-जयकार करो।" यहूदा में एक त्योहार मनाने के संदर्भ में इस भजन को लिखते समय, भजनकार लोगों से परमेश्वर की स्तुति करने का आह्वान करता है (पद 1-4)। इस स्तुति का केंद्र निश्चित रूप से परमेश्वर ही हैं—खासकर वे जिन्हें भजनकार "हमारी शक्ति" कहता है। जो परमेश्वर हमारी शक्ति हैं, वे सर्वशक्तिमान परमेश्वर हैं; यही सर्वशक्तिमान परमेश्वर हमें शक्ति देते हैं। उस शक्ति को पाने का एक तरीका है खुशी भरे दिल से परमेश्वर की स्तुति करना। डॉ. पार्क युन-सन ने कहा, "सच्चे मन से परमेश्वर की स्तुति करके, मनुष्य उनकी महिमा करता है और साथ ही, अपने आध्यात्मिक जीवन के लिए शक्ति भी प्राप्त करता है।" सचमुच, खुशी से परमेश्वर की स्तुति करने से न केवल उनकी महिमा होती है, बल्कि हमारे आध्यात्मिक जीवन को भी शक्ति मिलती है। तो फिर, हमें परमेश्वर की स्तुति कैसे करनी चाहिए? हमें खुशी भरे दिल से उनकी स्तुति करनी चाहिए। इसका कारण नहेमायाह 8:10 के बाद वाले हिस्से में मिलता है: "...यह दिन हमारे प्रभु के लिए पवित्र है। शोक न करो, क्योंकि प्रभु का आनंद ही तुम्हारी शक्ति है..." चूँकि परमेश्वर में आनंद मनाना ही हमारी शक्ति है, इसलिए हमें खुशी से उनकी स्तुति करनी चाहिए।

स्तुति का उद्देश्य क्या है? यह परमेश्वर की आराधना करने वालों के बीच विश्वास में एकता को बढ़ावा देने, परमेश्वर-भक्ति को सबके सामने स्वीकार करने और आध्यात्मिक जीवन के विकास को बढ़ावा देने का काम करता है (पार्क युन-सन)। पहला उद्देश्य—विश्वासियों के बीच विश्वास में एकता—का अर्थ है कि जब हम मिलकर परमेश्वर की स्तुति करते हैं, तो हम अपने साझे विश्वास को फिर से पुष्ट करते हैं। दूसरा, हमारी स्तुति का उद्देश्य है "परमेश्वर-भक्ति को सबके सामने स्वीकार करना"; दूसरे शब्दों में, एक साथ गाकर हम सबके सामने यह ज़ाहिर करते हैं कि "हम परमेश्वर से प्रेम करते हैं।" तीसरा मकसद है "आध्यात्मिक विकास।" हम अपनी साझी आस्था के साथ परमेश्वर के प्रति अपने प्रेम को सबके सामने ज़ाहिर करने वाली स्तुति करके आध्यात्मिक रूप से बढ़ते हैं। लेकिन समस्या क्या है? बहुत से ईसाइयों के लिए, स्तुति का मकसद परमेश्वर को खुश करने के बजाय खुद को खुश करना हो गया है। अगर मुख्य मकसद सिर्फ़ खुद को खुश करना या सुनने वालों के कानों को अच्छा लगना है, तो ऐसी "खुद पर केंद्रित स्तुति" कभी भी सबके सामने यह ज़ाहिर नहीं कर सकती कि हम प्रभु में एक शरीर हैं और हमारी आस्था एक है; न ही यह हमारे आध्यात्मिक विकास को बढ़ावा दे सकती है। इसलिए, जैसा कि भजनकार आज हमें सिखाते हैं, हमें सही तरीके से "स्तुति" करनी चाहिए—जो परमेश्वर हमसे चाहते हैं। हमें इसे खुशी भरे दिल (पद 1) से, संगीत वाद्ययंत्रों (पद 2) का इस्तेमाल करके और प्रभु के दिन (पद 3) पर करना चाहिए, और उस परमेश्वर के लिए ज़ोर से गाना चाहिए जो हमारी ताकत है (पद 1)। यह वह "नियम" है जिसका हमें पालन करना चाहिए, और यह परमेश्वर का एक आदेश भी है (पद 4)।

दूसरी बात, परमेश्वर हमसे "प्रार्थना" चाहते हैं।

आज के पाठ में भजन संहिता 81:7 को देखें: "तुमने मुसीबत में पुकारा, और मैंने तुम्हें बचाया; मैंने गरजते बादल में से तुम्हें जवाब दिया; मैंने मेरीबा (सेला) के पानी के पास तुम्हारी परीक्षा ली।" मिस्र से निकलने की घटनाओं को याद करते हुए, भजनकार ने अपने समय के इस्राएल के लोगों को याद दिलाया कि जब उनके पूर्वजों ने अपनी तकलीफ में परमेश्वर को पुकारा था, तो उन्होंने उनकी प्रार्थनाओं का जवाब दिया था। भजनकार ने यह क्यों याद दिलाया और उन्हें क्यों बताया कि मिस्र से निकलने के दौरान परमेश्वर ने इस्राएलियों की प्रार्थनाएँ कैसे सुनी थीं? ऐसा इसलिए किया गया ताकि इस्राएल के लोगों को परमेश्वर को पुकारने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। दूसरे शब्दों में, यह एक ऐसी सलाह है जो कहती है, "जैसे मिस्र से निकलने के दौरान इस्राएलियों ने मुसीबत में परमेश्वर को पुकारा था, वैसे ही तुम्हें भी परमेश्वर को पुकारना चाहिए।" उस सलाह के खास शब्द

आज के पाठ के पद 10 में मिलते हैं: "...अपना मुँह पूरा खोलो और मैं उसे भर दूँगा..." इसका मतलब है कि हमें सच्चे दिल से परमेश्वर की कृपा और उद्धार की इच्छा करनी चाहिए (पार्क युन-सन)।

हमें परमेश्वर की कृपा और उद्धार के लिए तड़पना चाहिए। जैसे इज़राइल के लोगों ने अपनी तकलीफ़ के समय परमेश्वर से पुकार की थी, वैसे ही हमें भी उनसे पुकार करनी चाहिए। जब हम पुकारते हैं, तो हमें पूरे दिल से उनकी कृपा और उद्धार की तलाश करनी चाहिए। साथ ही, हमें इस भरोसे के साथ प्रार्थना करनी चाहिए कि हमारी प्रार्थनाओं का जवाब मिलेगा। परमेश्वर ने साफ़ तौर पर वादा किया था, "अपना मुँह पूरा खोलो और मैं उसे भर दूँगा" (पद 10)। हमें इस वादे पर भरोसा रखते हुए परमेश्वर से पुकार करनी चाहिए। हमारे परमेश्वर हमें भरने वाले परमेश्वर हैं। हालाँकि, भरने के लिए, हमें खुद को खाली करने की ज़िम्मेदारी निभानी होगी। हमें क्या खाली करना है? हमारे पाप। किस तरह के पाप? पद 11 देखें: "मेरे लोगों ने मेरी बात नहीं सुनी; इज़राइल ने मेरी बात नहीं मानी।" परमेश्वर का वह कौन सा वचन था जिसे इज़राइल के लोगों ने सुनने से इनकार कर दिया? वह यह था: "तुम्हारे बीच कोई पराया देवता नहीं होना चाहिए; तुम किसी पराए देवता के सामने नहीं झुकोगे" (पद 9)। फिर भी, आखिर में, इज़राइल के लोगों ने इस आज्ञा को नहीं माना और मूर्तिपूजा का पाप किया। जब हम इस पाप के लिए पछतावा करते हैं, परमेश्वर के वचन को मानने का संकल्प लेते हैं और उनसे पुकार करते हैं, तो परमेश्वर हमारी प्रार्थनाएँ सुनते हैं और हमें कृपा और उद्धार का आशीर्वाद देते हैं। हमारे परमेश्वर हमारी प्रार्थनाओं की आवाज़ सुनने वाले परमेश्वर हैं। अद्भुत सच्चाई यह है कि, भले ही कई बार हम परमेश्वर की आवाज़ नहीं सुनते और उन्हें नहीं चाहते (पद 11), फिर भी वे ऐसे परमेश्वर हैं जो हमें चाहते हैं और हमारी प्रार्थनाएँ सुनने के लिए उत्सुक रहते हैं। हमें कृपा से भरपूर परमेश्वर की प्रार्थना में और भी ज़्यादा लगन से खुद को समर्पित करना चाहिए।

तीसरी बात, परमेश्वर हमसे "आज्ञापालन" चाहते हैं।

कृपया आज के हमारे पाठ, भजन संहिता 81 की आयतों 8 और 13 को देखें: "हे मेरे लोगों, सुनो, मैं तुम्हें चेतावनी दूँगा! हे इस्राएल, काश तुम मेरी बात सुनते!" और "काश मेरे लोग मेरी बात सुनते, काश इस्राएल मेरे बताए रास्तों पर चलता!" परमेश्वर हमसे यही चाहते हैं कि हम उनकी आवाज़ सुनें और उसे सुनकर उसका पालन करें। लेकिन, मिस्र से निकलने के समय इस्राएल के लोग परमेश्वर की आवाज़ नहीं सुनना चाहते थे; उन्होंने उनकी बात नहीं मानी। इसका नतीजा क्या हुआ? आयत 12 को देखें: "इसलिए मैंने उन्हें उनके अपने ज़िद्दी

दिलों के हवाले कर दिया, ताकि वे अपनी ही सलाहों पर चलें।" परमेश्वर पापियों को दो तरह से सज़ा देते हैं (पार्क युन-सन): "पहला तरीका है पापी को उसके पाप में ही रहने देना, और दूसरा तरीका है पापी पर दुख या विनाश लाना। मुझे व्यक्तिगत रूप से पहला तरीका ज़्यादा डरावना लगता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि अगर परमेश्वर हमें हमारे जिद्दी दिलों के भरोसे छोड़ दें, तो हम लगातार उनकी बात को अनसुना करेंगे और उनकी आज्ञा न मानते हुए जीवन जीएँगे। आखिर में, परमेश्वर ने इस्राएल के आज्ञा न मानने वाले लोगों को उनके दुश्मनों के हवाले करके उन्हें अनुशासित किया (पद 14)। फिर भी, परमेश्वर इस्राएल के लोगों—और हमें—आशीष देने का वादा करते हैं, बशर्ते हम पश्चाताप करें और उनकी ओर लौटें। भजनकार आज के भाग के पद 14-16 में इन वादों का ज़िक्र करते हैं: पहला वादा इस्राएल के दुश्मनों को हराने का है (पद 14)। यह वादा है कि परमेश्वर के अनुशासन का हाथ, जो पापी इस्राएलियों के खिलाफ़ था, पश्चाताप करने पर उनके दुश्मनों के खिलाफ़ हो जाएगा। परमेश्वर का दूसरा वादा पद 16 में बताया गया है: 'वह उन्हें बेहतरीन गेहूँ खिलाएँगे, और चट्टान से निकले शहद से उन्हें तृप्त करेंगे।' यह वादा भौतिक आशीष के बारे में है (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में, हालाँकि इस्राएलियों ने कनान देश में भरपूर आशीष का आनंद लिया था—लेकिन बाद में परमेश्वर की बात न मानकर विदेशी देवताओं की पूजा करने का पाप किया—परमेश्वर वादा करते हैं कि अगर वे पश्चाताप करते हैं और उनकी ओर लौटते हैं, तो वह उन्हें उस देश में और भी ज़्यादा आशीष देंगे।

हमें भी परमेश्वर के इन वादों को थामे रखकर प्रार्थना में आगे बढ़ना चाहिए। प्रभु ने हमें जो वादे दिए हैं..." "मैं अपनी कलीसिया बनाऊँगा..." जैसे शुरुआती कलीसिया के 120 विश्वासियों ने इकट्ठा होकर पूरे मन से प्रार्थना की—न केवल मत्ती 16:18 के शब्दों को, बल्कि प्रेरितों के काम 1:8 के वादे को भी थामे रखा—वैसे ही हमें भी पूरे दिल से प्रार्थना में खुद को समर्पित करना चाहिए। अगर इस दौरान हम परमेश्वर की बात न मानकर और उनकी आज्ञा का उल्लंघन करके पाप कर बैठते हैं, तो हमें पद 14 और 16 में दिए गए वादों को थामे रखकर पश्चाताप करना चाहिए और प्रभु की ओर लौटना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो परमेश्वर हमारे पापों को क्षमा कर देंगे और सज़ा का जो हाथ हमारी ओर था, उसे हमारे दुश्मनों की ओर मोड़ देंगे। इसके अलावा, वह हमारे साथ रहेंगे और हम पर भरपूर आशीष बरसाएँगे।

एक बार हमारा पूरा परिवार पूजा-अर्चना के लिए मेरे बड़े भाई के घर इकट्ठा हुआ था। उस मौके पर, परमेश्वर ने मेरी छोटी बुआ के पति—जो एक पादरी हैं—के ज़रिए हमसे बात की और 1 थिस्सलुनीकियों 5:18 का संदेश सुनाया। उस वचन से प्रेरित होकर, हमने हर हाल में धन्यवाद देने वाला जीवन जीने का संकल्प लिया। हालाँकि उस समय मेरे चौथे चाचा, पादरी किम चांग-ह्युक, कैंसर से जूझ रहे थे, फिर भी हमने परमेश्वर का धन्यवाद करने का फैसला किया और पूजा के बाद उनके लिए पूरे जोश और ज़ोर से प्रार्थना की। हमने परिवार में बारी-बारी से उपवास रखने का भी फैसला किया और उस पर अमल करना शुरू कर दिया। अलग होने से पहले, पादरी किम चांग-ह्युक—जो बिस्तर पर आराम कर रहे थे—लिविंग रूम में आए और हमारे परिवार के सामने परमेश्वर की स्तुति में गीत गाया। उन्होंने अपने पसंदीदा भजन, "हाउ ग्रेट दाऊ आर्ट" (भजन संख्या 40) का पहला पद और कोरस गाया। शारीरिक तकलीफ़ के बावजूद पादरी और हमारे परिवार के सदस्यों को परमेश्वर की स्तुति करते, साथ मिलकर प्रार्थना करते और हर बात में धन्यवाद देने की आज्ञा का पालन करते हुए देखकर, मुझे एहसास हुआ कि परमेश्वर हमारे परिवार के लिए यही चाहते थे... मुझे लगा कि आप भी यही देखना चाहते थे।

दिन 31: विजय का रहस्य

[भजन संहिता 18:28-42 पर ध्यान]

मुझे कुछ समय पहले कोरियाई राष्ट्रीय टीम और लॉस एंजिल्स गैलेक्सी के बीच एक फुटबॉल मैच याद है। उस मैच से पहले, अखबारों में इस बात पर बहस चल रही थी कि कोरियाई राष्ट्रीय टीम "तीन डिफेंडर" या "चार डिफेंडर" वाली रक्षात्मक प्रणाली अपनाएगी या नहीं। तीन डिफेंडर वाली प्रणाली को एक पारंपरिक प्रणाली माना जाता है जिससे कोरियाई खिलाड़ी परिचित हैं, जबकि चार डिफेंडर वाली प्रणाली को एक नई रक्षात्मक प्रणाली बताया जाता है। कहा जाता है कि पूर्व कोच गुस हिडिंक ने भी 2002 विश्व कप के दौरान तीन डिफेंडर वाली प्रणाली का उपयोग करने का प्रयास किया था, लेकिन वे इसके अनुकूल नहीं हो पाए और वापस तीन डिफेंडर वाली प्रणाली पर लौट आए। उस समय तकनीकी समिति के अध्यक्ष रहे सेजोंग विश्वविद्यालय के प्रोफेसर ली योंग-सू ने कहा: "वास्तव में, 'तीन डिफेंडर' बनाम 'चार डिफेंडर' का वर्गीकरण अनुचित है। हालांकि कोच हिडिंक ने तीन डिफेंडर प्रणाली का उपयोग किया, लेकिन मुख्य बात सभी खिलाड़ियों की सहज गति थी। इसे प्राप्त करने के लिए उच्च स्तर की सामरिक समझ और अटूट सहनशक्ति की आवश्यकता थी।" प्रोफेसर ली के शब्दों से मुझे सभी खिलाड़ियों की सहज गति का अनुभव हुआ। चूंकि चर्च एक संगठन और एक जीव दोनों है, इसलिए मेरा मानना है कि हमारे चर्च सदस्यों की सहज सेवा भी महत्वपूर्ण है। विश्वास का ऐसा सहज जीवन जीने के लिए, जिस प्रकार फुटबॉल में "उच्च सामरिक समझ" और "अटूट सहनशक्ति" आवश्यक है, उसी प्रकार हमें चर्च के मुखिया, प्रभु की इच्छा की गहरी समझ होनी चाहिए, और हमें अपने आध्यात्मिक शरीर के लिए भी अटूट सहनशक्ति की आवश्यकता है। तभी हम आध्यात्मिक युद्ध में विजय प्राप्त कर सकेंगे।

आज के पाठ, भजन संहिता 18:28-42 को देखें तो बाइबल हमें बताती है कि विजय का रहस्य केवल परमेश्वर की शक्ति में निहित है। भजनकार दाऊद कहते हैं कि परमेश्वर ने उन्हें युद्ध करने की शक्ति प्रदान की (पद 32,

39)। दाऊद ने परमेश्वर की शक्ति से युद्ध में विजयी जीवन व्यतीत किया। मैं यहाँ बताए गए परमेश्वर की इस "सामर्थ्य" के पाँच पहलुओं पर विचार करना चाहूँगा:

पहला, परमेश्वर की सामर्थ्य "ज्ञान की सामर्थ्य" है।

दाऊद ने स्वीकार किया, "क्योंकि यहोवा को छोड़ परमेश्वर कौन है? और हमारे परमेश्वर को छोड़ चट्टान कौन है?" (पद 31)। दाऊद युद्ध में इसलिए जीत सका क्योंकि वह उस परमेश्वर को जानता था जो सच्चा परमेश्वर और चट्टान है। परमेश्वर कौन है, इसका ज्ञान ही हमारी शक्ति है, और जो लोग परमेश्वर को जानते हैं, वे बलवान होते हैं। इसलिए, हमें परमेश्वर के ज्ञान में बढ़ना चाहिए। शैतान परमेश्वर के बारे में हमारे ज्ञान को छीनकर हमें नष्ट करने की कोशिश करता है (होशे 4:6)। अतः, हमें परमेश्वर के सच्चे स्वरूप को समझने के लिए और अधिक प्रयास करना चाहिए। यिर्मयाह 9:24 में, भविष्यद्वक्ता यिर्मयाह हमें परमेश्वर को जानने पर गर्व करने के लिए कहता है। हमें किस प्रकार के परमेश्वर पर गर्व करना चाहिए? हमें उस प्रभु पर गर्व करना चाहिए जो हमारे दीये को जलाता है (पद 28)। आज के वचन, भजन संहिता 18:28 को देखें: "तू मेरे दीये को जलाता है।" यहाँ, "दीये को जलाने" का अर्थ समृद्धि है; दाऊद, जो एक सैनिक था, के संदर्भ में इसका अर्थ परमेश्वर की कृपा से युद्ध में जीत हासिल करना है (पार्क युन-सन)। दूसरे शब्दों में, जिस परमेश्वर को जानने का हमें प्रयास करना चाहिए, वह जीत का परमेश्वर है—वही जो हमें जीत दिलाता है। जब हम अपने दैनिक जीवन में जीत के इस परमेश्वर को जान लेते हैं, तो हम भी एक विजयी जीवन जी सकते हैं।

दूसरा, परमेश्वर की सामर्थ्य "वचन की सामर्थ्य" है।

दाऊद ने स्वीकार किया, "परमेश्वर का मार्ग सिद्ध है; यहोवा का वचन परखा हुआ है" (पद 30)। उसने परमेश्वर के वचन की सामर्थ्य से एक विजयी जीवन जिया। परमेश्वर का वचन हमारी शक्ति है। उस वचन को ग्रहण करके हम एक सामर्थ्यवान जीवन जीते हैं। 2 तीमुथियुस 3:16-17 में, प्रेरित पौलुस परमेश्वर के वचन के बारे में कहता है: "सारी पवित्रशास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है और शिक्षा, डांट, सुधार और धार्मिकता में प्रशिक्षण देने के लिए उपयोगी है, ताकि परमेश्वर का सेवक हर अच्छे काम के लिए पूरी तरह तैयार हो सके।" अगर हम आध्यात्मिक लड़ाई में जीत हासिल नहीं कर पा रहे हैं, तो हमें सोचना चाहिए कि क्या हम पवित्र शास्त्र को हमें सिखाने, टोकने, सुधारने और नेकी के रास्ते पर चलाने की इजाज़त दे रहे हैं। हमारे जीवन में कभी भी बुरे विचार

आ सकते हैं, और शैतान अक्सर लालच के ज़रिए हम पर हमला करता है। जब भी ऐसा होता है, तो हमें परमेश्वर के वचन से सीख और सुधार लेना चाहिए। हमें परमेश्वर के वचन को अपने गलत विचारों और जीने के तरीकों को सुधारने और हमें नेकी के रास्ते पर चलाने की इजाज़त देनी चाहिए। ऐसा करके, हम खुद के खिलाफ, पाप, दुनिया और शैतान के खिलाफ लड़ाई में जीत भरा जीवन जी सकते हैं। दाऊद ने परमेश्वर के उत्तम वचन के ज़रिए खुद को पाप से बचाया और खुद के खिलाफ लड़ाई में जीत हासिल की (18:23)। दुश्मनों के सताए जाने के दौरान भी परमेश्वर के वचन की शक्ति ने उसकी रक्षा की (वचन 30)। परमेश्वर ने दाऊद के पैरों को हिरण जैसा बना दिया और उसे ऊंचाइयों पर खड़ा किया (वचन 33)। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर दाऊद को सुरक्षित जगह पर ले गया। परमेश्वर का वचन हमारे लिए वही सुरक्षित जगह है; यही वह वचन है जो हमें ऊंचाइयों पर ले जाएगा।

तीसरी बात, परमेश्वर की शक्ति "निर्भरता की शक्ति" है। दाऊद कहता है, "आपकी मदद से मैं सेना का सामना कर सकता हूँ; अपने परमेश्वर की मदद से मैं दीवार फांद सकता हूँ" (वचन 29)। आम समझ यह कहती है कि जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है, वह धीरे-धीरे अपने माता-पिता से आज़ाद हो जाता है, लेकिन विश्वास का जीवन इसके उलट काम करता है। यीशु पर विश्वास करने से पहले, हम आज़ाद होकर जीते हैं, लेकिन विश्वास में आने के बाद, हम धीरे-धीरे सिर्फ़ प्रभु पर निर्भर होकर जीना सीखते हैं। विश्वास का जीवन यह समझने के बारे में है कि जैसे-जैसे समय बीतता है, प्रभु ही एकमात्र सहारा हैं और उन्हीं पर निर्भर होकर जीना है। जो लोग प्रभु पर निर्भर रहते हैं, वे मज़बूत होते हैं। उनकी ताकत परमेश्वर की महान शक्ति के ज़रिए दिखाई देती है, जो तब काम करती है जब वे अपनी कमज़ोरी को पूरी तरह से समझ लेते हैं। दाऊद इसका एक उदाहरण है; उसने पवित्र परमेश्वर के नाम पर गोलियत पर हमला किया—ठीक वैसे ही जैसे कोई दुश्मन सेना पर हमला करता है। हमें भी बिल्कुल ऐसा ही होना चाहिए। हम ईसाई वे लोग हैं जो पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर होकर दुनिया में आगे बढ़ते हैं। जो लोग परमेश्वर पर भरोसा रखते हैं और हिम्मत व साहस के साथ आगे बढ़ते हैं, उनके लिए वह रास्ता आसान बनाते हैं और उन्हें गिरने से बचाते हैं (पद 36)।

चौथा, परमेश्वर की शक्ति "हुनर की शक्ति" है।

परमेश्वर ने दाऊद के हाथों को लड़ाई के लिए तैयार किया और उसकी भुजाओं को इतना मज़बूत बनाया कि वह पीतल का धनुष भी मोड़ सके (पद 34)। परमेश्वर ने सैनिक दाऊद को ज़रूरी हुनर दिए। जो लोग उस पर

भरोसा रखते हैं, उन्हें वह उनके काम के अनुसार हुनर देता है—जैसे व्यापारी को व्यापार का और लेखक को लिखने का हुनर (पार्क युन-सन)। बुद्धिमान राजा सुलैमान ने कहा, "बुद्धि [हुनर] सही दिशा दिखाने में फ़ायदेमंद है" (सभोपदेशक 10:10)। युद्ध जीतने के लिए हुनर की ज़रूरत होती है, और प्रभु हमें वही हुनर देते हैं। अपना पवित्र स्थान बनाते समय, परमेश्वर ने कुशल लोगों को बुद्धि और समझ दी, ताकि वे ज़रूरी काम कर सकें (निर्गमन 36:1)। अपना काम पूरा करने के लिए, परमेश्वर न केवल काम करने वालों को चुनते हैं, बल्कि उन्हें उस काम के लिए ज़रूरी बुद्धि—यानी हुनर—भी देते हैं। हमें कबूतर जैसी मासूमियत रखनी चाहिए, लेकिन साथ ही हमें साँप जैसी समझदारी की भी ज़रूरत है। आध्यात्मिक लड़ाई लड़ने और जीतने के लिए, हमें उस लड़ाई को लड़ने के हुनर की ज़रूरत है; हमें पता होना चाहिए कि उद्धार की ढाल और आत्मा की तलवार का इस्तेमाल कैसे किया जाए। आत्मा की ऐसी तलवार किसी काम की नहीं जिसे चलाना न आता हो। परमेश्वर हमें हुनर की शक्ति देते हैं, और उस शक्ति के ज़रिए हम एक विजयी जीवन जी सकते हैं।

आखिर में, पांचवीं बात यह है कि परमेश्वर की शक्ति "चरित्र की शक्ति" है।

दाऊद कहता है, "तेरी नम्रता ने मुझे महान बनाया है" (पद 35)। इसका मतलब प्रभु की नम्रता से है—यानी प्रभु ने खुद को विनम्र बनाकर दाऊद की, जो एक कमज़ोर इंसान था, कृपापूर्वक मदद की, और इसी वजह से दाऊद महान बना (पार्क युन-सन)। एक ईसाई की जीत का राज़ ऐसे चरित्र में है जो यीशु जैसा हो। खासकर, यीशु की नम्रता का गुण ही हमें इस दुनिया में जीत हासिल करने में मदद करता है।

परमेश्वर की शक्ति से, हम खुद से, पाप से, दुनिया से और शैतान से लड़कर जीत सकते हैं। हम ज्ञान, वचन, इच्छाशक्ति, कौशल और चरित्र की शक्ति से आध्यात्मिक लड़ाई में जीत हासिल कर सकते हैं। सच तो यह है कि हम पहले से ही विजयी हैं, और भविष्य में भी जीतते रहेंगे। हम जीत का झंडा लिए और जीत के गीत गाते हुए स्वर्गीय राज्य की ओर बढ़ने वाले विजेता हैं। जीत!

दिन 32: याद करने, जश्न मनाने और खुशियाँ मनाने का जीवन

[उत्पत्ति 50:20 पर मनन]

“तुमने तो मेरे साथ बुराई करने की सोची थी, लेकिन परमेश्वर ने उसे भलाई में बदल दिया, ताकि वह काम पूरा हो सके जो अभी हो रहा है—बहुत से लोगों की जान बचाना” (उत्पत्ति 50:20)।

हमें अतीत में ही अटके नहीं रहना चाहिए। इसके बजाय, हमें उस कृपा को याद रखना चाहिए जो परमेश्वर ने अतीत में हम पर की थी। साथ ही, हमें वर्तमान में उस पुरानी कृपा का जश्न मनाना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम उस सच्ची खुशी का अनुभव कर सकते हैं जो परमेश्वर देता है।

आज का वचन, उत्पत्ति 50:20, उन शब्दों को बताता है जो यूसुफ ने अपने भाइयों से कहे थे—ये शब्द उस कृपा को याद करने और उसका जश्न मनाने को दर्शाते हैं जो परमेश्वर ने अतीत में उस पर की थी। आइए उन तीन तरीकों पर मनन करें जिनसे यूसुफ ने परमेश्वर की पुरानी कृपा को याद किया और उसका जश्न मनाया, और उन सीखों पर विचार करें जो हम उसके उदाहरण से ले सकते हैं।

पहला, जो लोग वर्तमान में परमेश्वर की पुरानी कृपा को याद करते हैं और उसका जश्न मनाते हैं, वे हर स्थिति को परमेश्वर के नज़रिए से देखते हैं।

जब यूसुफ सत्रह साल का लड़का था, तो उसके दस बड़े भाई उससे नफ़रत करते थे (उत्पत्ति 37:2)। इसके तीन कारण थे: (1) यूसुफ ने अपने भाइयों की गलत हरकतों की खबर उनके पिता याकूब को दी थी (वचन 2); (2) यूसुफ को उसके पिता याकूब बहुत प्यार करते थे (वचन 3); और (3) यूसुफ को परमेश्वर की ओर से सपने आते थे (वचन 5)। नतीजतन, यूसुफ अपने भाइयों के हाथों मारे जाने से बाल-बाल बचा (वचन 18-20); उसे एक खाली गड्ढे में फेंक दिया गया (वचन 24), आखिरकार उसे इश्माएली व्यापारियों को बेच दिया गया (वचन 28), और फिर मिस्र के एक अधिकारी और अंगरक्षकों के कप्तान पोतीफ़र को बेच दिया गया (39:1)। वह पोतीफ़र के घर का देखरेख करने वाला बना (वचन 4)। सुंदर और गठीले शरीर वाला होने के कारण (वचन 6), पोतीफ़र की पत्नी ने बार-बार यूसुफ को अपने साथ सोने के लिए उकसाया (वचन 7, 10, 12); फिर भी, जब वह उसके साथ अकेली थी, तो उसने उसकी कोशिशों को ठुकरा दिया, अपना कपड़ा उसके हाथ में छोड़ दिया और घर से भाग गया (पद 11-12)। बाद में, उसके झूठे आरोपों (पद 14-18) के कारण, उसे गलत तरीके से फँसाया गया और जेल में डाल दिया गया (पद 20)। अगर यूसुफ तीस साल की उम्र में मिस्र का प्रधानमंत्री बनने के बाद (41:46) अपने उस अतीत को याद करता—और सिर्फ़ उस दुख और दर्द पर ध्यान देता जो उसने सहा था—तो वह निश्चित रूप से अतीत में ही फँसा रहता; वह शिकायत और नाराज़गी के साथ अपना वर्तमान जीवन जीता और बदले की भावना रखता। लेकिन यूसुफ ने ऐसा नहीं किया। इसके बजाय, उसने उस कृपा को याद किया जो परमेश्वर ने उस पर अतीत में की थी। वह कृपा क्या थी? वह यह थी कि परमेश्वर यूसुफ के साथ था और उसने उसके हर काम में उसे सफल बनाया (39:2, 3, 21, 23)। खास तौर पर, यूसुफ को जो कृपा याद थी, वह यह थी कि जब उसे गलत तरीके से जेल में डाला गया था, तब भी परमेश्वर न केवल उसके साथ था, बल्कि उसने उस पर दया भी की और जेल के अधिकारी की नज़र में उसे पसंद के काबिल बनाया (पद 21)। इसीलिए, जब वह बाद में मिस्र का प्रधानमंत्री बना—अपने कार्यकाल के लगभग नौ साल बाद [नियुक्ति के समय 30 साल की उम्र + 7 साल की भरपूर पैदावार + 2 साल (45:6) = 39 साल की उम्र]—तो उसने अपने भाइयों से कहा: "...परमेश्वर ने मुझे तुम्हारे आगे भेजा ताकि जानें बचा सकूँ" (45:5), और "परमेश्वर ने मुझे तुम्हारे आगे भेजा ताकि धरती पर तुम्हारे वंश को बचाए रखे और एक बड़े बचाव के ज़रिए तुम्हारी जानें बचाए। तो फिर, मुझे यहाँ तुमने नहीं, बल्कि परमेश्वर ने भेजा है" (पद 7-8a)। यूसुफ अपने भाइयों से ऐसी बात कैसे कह पाया? ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उसे परमेश्वर की कृपा याद थी। परमेश्वर की कृपा याद होने के कारण, वह न केवल अपने पिछले अनुभवों को, बल्कि हर स्थिति को परमेश्वर के नज़रिए से देख सकता था। हालाँकि उसके भाइयों ने उससे नफ़रत की थी और उसे लगभग मार ही डाला था, और बाद में उसे मिस्र में गुलामी और जेल का सामना

करना पड़ा था, फिर भी उसे यह एहसास हुआ कि उसे प्रधानमंत्री बनाने के पीछे परमेश्वर का मकसद उसके भाइयों की जान बचाना और यह पक्का करना था कि धरती पर उनकी आने वाली पीढ़ियाँ जीवित रहें (पद 7)। इसलिए, वह अपने भाइयों से कह सका, “तुमने मुझे यहाँ नहीं भेजा, बल्कि परमेश्वर ने भेजा है” (वचन 8)।

हमें भी अपने जीवन और सभी हालात को परमेश्वर के नज़रिए से देखना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे यूसुफ ने किया। ऐसा करने के लिए, हमें उस कृपा को याद रखना होगा जो परमेश्वर ने अतीत में हम पर की है। जब हम परमेश्वर की भरपूर कृपा को याद करते हैं, तो हम अपने वर्तमान जीवन की घटनाओं को परमेश्वर की नज़रों से देख सकते हैं। हमें एहसास होता है कि हमारे जीवन में जो कुछ हो रहा है, वह महज़ इत्तेफ़ाक नहीं है, बल्कि परमेश्वर की अच्छी, मनभावन और उत्तम इच्छा का हिस्सा है (रोमियों 12:2)। और हम यह मानते हैं कि परमेश्वर खुद हमारे अतीत से ही हमारे जीवन में अपनी इच्छा पूरी कर रहा था। नतीजतन, हम दिल से चाहते हैं कि परमेश्वर की वह इच्छा धरती पर भी वैसे ही पूरी हो जैसे स्वर्ग में होती है।

दूसरी बात, जो लोग अतीत में परमेश्वर की दी गई कृपा को याद रखते हैं और वर्तमान में उसे याद करते हैं, वे परमेश्वर के दिल से अपने परिवार के सदस्यों की सेवा करते हैं।

यूसुफ ने अपने परिवार की सेवा कैसे की? सबसे पहले, यूसुफ ने उन सभी भाइयों को माफ़ कर दिया जिन्होंने उससे नफ़रत की थी और यहाँ तक कि उसे मार डालने की कोशिश भी की थी। अगर यूसुफ ने अपने भाइयों को माफ़ न किया होता, तो जब वे उसके सामने आए तो वह ज़रूर उनसे बदला लेता। फिर भी, यूसुफ ने ऐसा नहीं किया। यूसुफ, जिसे खुशहाली का आशीर्वाद मिला था क्योंकि परमेश्वर उसके साथ था, उसने अपने अतीत को परमेश्वर के नज़रिए से देखा; उसने अपने भाइयों को माफ़ कर दिया क्योंकि उसे एहसास हुआ कि उन घटनाओं के बीच, परमेश्वर ने उसे उनसे पहले मिस्र भेजा था ताकि उनकी जान बचाई जा सके और यह पक्का किया जा सके कि उनकी आने वाली पीढ़ियाँ दुनिया में बनी रहें। हम इसका सबूत उसके सबसे बड़े बेटे के नाम में देख सकते हैं। यूसुफ ने मिस्र में जन्मे अपने सबसे बड़े बेटे का नाम “मनश्शे” रखा, क्योंकि परमेश्वर ने उसे उसकी सारी मुश्किलों और अपने पिता के पूरे घर को भुला दिया था (उत्पत्ति 41:51)। दूसरी बात, यूसुफ ने न केवल उन भाइयों को माफ़ किया जिन्होंने उसे मारने की कोशिश की थी, बल्कि उन पर कृपा भी की। जब-जब उसके भाई कनान देश से खाना लेने के लिए मिस्र गए, यूसुफ ने उन्हें न सिर्फ़ अनाज (42:26, 44:1), पैसे (42:28, 44:1), कपड़े (45:21-22) और मिस्र की बेहतरीन चीज़ों से लदे दस नर गधे और दस मादा गधे (v. 23)

दिए, बल्कि—जब याकूब और उसका पूरा परिवार वहाँ पहुँचा—तो उन्हें "मिस्र देश की सबसे अच्छी ज़मीन" भी दी (45:18; देखें 47:6, 11)। तीसरी बात, याकूब की मौत के बाद, जब उसके भाइयों ने—इस डर से कि यूसुफ उनसे नफ़रत करेगा और उनके किए बुरे कामों का बदला लेगा (50:15)—अपने पिता की तरफ़ से एक आखिरी संदेश गढ़ा (vv. 16–17), तो यूसुफ रो पड़ा (v. 17) और उन भाइयों को, जो उसके सामने झुक गए थे (v. 18), दिलासा देने वाली बातें कहीं (v. 21): "डरो मत, क्या मैं परमेश्वर की जगह पर हूँ? तुमने मेरा बुरा करने की सोची थी, लेकिन परमेश्वर ने उसे भलाई में बदल दिया ताकि वह काम हो सके जो अभी हो रहा है—बहुत से लोगों की जान बचाना। इसलिए डरो मत; मैं तुम्हारे और तुम्हारे बच्चों के लिए इंतज़ाम करूँगा" (vv. 19–21a)। यह कैसे मुमकिन हुआ? यूसुफ उन भाइयों को न सिर्फ़ कैसे माफ़ कर सका जिन्होंने उससे नफ़रत की थी और उसे मार डालना चाहा था, बल्कि उन्हें दिल खोलकर चीज़ें दीं और प्यार से दिलासा भी दिया, जबकि वे उसके पैरों में डर से काँप रहे थे? क्या यूसुफ को अपने भाइयों से दिलासा नहीं मिलना चाहिए था? फिर भी, वह खुद दिलासा पाने के बजाय उन्हें दिलासा कैसे दे पाया? वह अपने भाइयों और अपने पूरे परिवार की सेवा कैसे कर पाया? वजह बस यह है कि यूसुफ... परमेश्वर की कृपा... ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि वह सच में समझता था। यूसुफ का दिल नफ़रत, नाराज़गी या बदले की भावना से नहीं, बल्कि परमेश्वर की कृपा से भरा हुआ था; इसी वजह से वह परमेश्वर के दिल के साथ अपने भाइयों और अपने पूरे परिवार की सेवा कर सका।

दिन 32: याद करने, जश्न मनाने और खुशियाँ मनाने का जीवन

[उत्पत्ति 50:20 पर मनन]

“तुमने तो मेरे साथ बुराई करने की सोची थी, लेकिन परमेश्वर ने उसे भलाई में बदल दिया, ताकि वह काम पूरा हो सके जो अभी हो रहा है—बहुत से लोगों की जान बचाना” (उत्पत्ति 50:20)।

हमें अतीत में ही अटके नहीं रहना चाहिए। इसके बजाय, हमें उस कृपा को याद रखना चाहिए जो परमेश्वर ने अतीत में हम पर की थी। साथ ही, हमें वर्तमान में उस पुरानी कृपा का जश्न मनाना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हम उस सच्ची खुशी का अनुभव कर सकते हैं जो परमेश्वर देता है।

आज का वचन, उत्पत्ति 50:20, उन शब्दों को बताता है जो यूसुफ ने अपने भाइयों से कहे थे—ये शब्द उस कृपा को याद करने और उसका जश्न मनाने को दर्शाते हैं जो परमेश्वर ने अतीत में उस पर की थी। आइए उन तीन तरीकों पर मनन करें जिनसे यूसुफ ने परमेश्वर की पुरानी कृपा को याद किया और उसका जश्न मनाया, और उन सीखों पर विचार करें जो हम उसके उदाहरण से ले सकते हैं।

पहला, जो लोग वर्तमान में परमेश्वर की पुरानी कृपा को याद करते हैं और उसका जश्न मनाते हैं, वे हर स्थिति को परमेश्वर के नज़रिए से देखते हैं।

जब यूसुफ सत्रह साल का लड़का था, तो उसके दस बड़े भाई उससे नफ़रत करते थे (उत्पत्ति 37:2)। इसके तीन कारण थे: (1) यूसुफ ने अपने भाइयों की गलत हरकतों की खबर उनके पिता याकूब को दी थी (वचन 2); (2) यूसुफ को उसके पिता याकूब बहुत प्यार करते थे (वचन 3); और (3) यूसुफ को परमेश्वर की ओर से सपने आते थे (वचन 5)। नतीजतन, यूसुफ अपने भाइयों के हाथों मारे जाने से बाल-बाल बचा (वचन 18-20); उसे एक खाली गड्ढे में फेंक दिया गया (वचन 24), आखिरकार उसे इश्माएली व्यापारियों को बेच दिया गया (वचन 28), और फिर मिस्र के एक अधिकारी और अंगरक्षकों के कप्तान पोतीफ़र को बेच दिया गया (39:1)। वह पोतीफ़र के घर का देखरेख करने वाला बना (वचन 4)। सुंदर और गठीले शरीर वाला होने के कारण (वचन 6), पोतीफ़र की पत्नी ने बार-बार यूसुफ को अपने साथ सोने के लिए उकसाया (वचन 7, 10, 12); फिर भी, जब वह उसके साथ अकेली थी, तो उसने उसकी कोशिशों को ठुकरा दिया, अपना कपड़ा उसके हाथ में छोड़ दिया और घर से भाग गया (पद 11-12)। बाद में, उसके झूठे आरोपों (पद 14-18) के कारण, उसे गलत तरीके से फँसाया गया और जेल में डाल दिया गया (पद 20)। अगर यूसुफ तीस साल की उम्र में मिस्र का प्रधानमंत्री बनने के बाद (41:46) अपने उस अतीत को याद करता—और सिर्फ़ उस दुख और दर्द पर ध्यान देता जो उसने सहा था—तो वह निश्चित रूप से अतीत में ही फँसा रहता; वह शिकायत और नाराज़गी के साथ अपना वर्तमान जीवन जीता और बदले की भावना रखता। लेकिन यूसुफ ने ऐसा नहीं किया। इसके बजाय, उसने उस कृपा को याद किया जो परमेश्वर ने उस पर अतीत में की थी। वह कृपा क्या थी? वह यह थी कि परमेश्वर यूसुफ के साथ था और उसने उसके हर काम में उसे सफल बनाया (39:2, 3, 21, 23)। खास तौर पर, यूसुफ को जो कृपा याद थी, वह यह थी कि जब उसे गलत तरीके से जेल में डाला गया था, तब भी परमेश्वर न केवल उसके साथ था, बल्कि उसने उस पर दया भी की और जेल के अधिकारी की नज़र में उसे पसंद के काबिल बनाया (पद 21)। इसीलिए, जब वह बाद में मिस्र का प्रधानमंत्री बना—अपने कार्यकाल के लगभग नौ साल बाद [नियुक्ति के समय 30 साल की उम्र + 7 साल की भरपूर पैदावार + 2 साल (45:6) = 39 साल की उम्र]—तो उसने अपने भाइयों से कहा: "...परमेश्वर ने मुझे तुम्हारे आगे भेजा ताकि जानें बचा सकूँ" (45:5), और "परमेश्वर ने मुझे तुम्हारे आगे भेजा ताकि धरती पर तुम्हारे वंश को बचाए रखे और एक बड़े बचाव के ज़रिए तुम्हारी जानें बचाए। तो फिर, मुझे यहाँ तुमने नहीं, बल्कि परमेश्वर ने भेजा है" (पद 7-8a)। यूसुफ अपने भाइयों से ऐसी बात कैसे कह पाया? ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उसे परमेश्वर की कृपा याद थी। परमेश्वर की कृपा याद होने के कारण, वह न केवल अपने पिछले अनुभवों को, बल्कि हर स्थिति को परमेश्वर के नज़रिए से देख सकता था। हालाँकि उसके भाइयों ने

उससे नफ़रत की थी और उसे लगभग मार ही डाला था, और बाद में उसे मिस्र में गुलामी और जेल का सामना करना पड़ा था, फिर भी उसे यह एहसास हुआ कि उसे प्रधानमंत्री बनाने के पीछे परमेश्वर का मकसद उसके भाइयों की जान बचाना और यह पक्का करना था कि धरती पर उनकी आने वाली पीढ़ियाँ जीवित रहें (पद 7)। इसलिए, वह अपने भाइयों से कह सका, “तुमने मुझे यहाँ नहीं भेजा, बल्कि परमेश्वर ने भेजा है” (वचन 8)।

हमें भी अपने जीवन और सभी हालात को परमेश्वर के नज़रिए से देखना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे यूसुफ ने किया। ऐसा करने के लिए, हमें उस कृपा को याद रखना होगा जो परमेश्वर ने अतीत में हम पर की है। जब हम परमेश्वर की भरपूर कृपा को याद करते हैं, तो हम अपने वर्तमान जीवन की घटनाओं को परमेश्वर की नज़रों से देख सकते हैं। हमें एहसास होता है कि हमारे जीवन में जो कुछ हो रहा है, वह महज़ इत्तेफ़ाक नहीं है, बल्कि परमेश्वर की अच्छी, मनभावन और उत्तम इच्छा का हिस्सा है (रोमियों 12:2)। और हम यह मानते हैं कि परमेश्वर खुद हमारे अतीत से ही हमारे जीवन में अपनी इच्छा पूरी कर रहा था। नतीजतन, हम दिल से चाहते हैं कि परमेश्वर की वह इच्छा धरती पर भी वैसे ही पूरी हो जैसे स्वर्ग में होती है।

दूसरी बात, जो लोग अतीत में परमेश्वर की दी गई कृपा को याद रखते हैं और वर्तमान में उसे याद करते हैं, वे परमेश्वर के दिल से अपने परिवार के सदस्यों की सेवा करते हैं।

यूसुफ ने अपने परिवार की सेवा कैसे की? सबसे पहले, यूसुफ ने उन सभी भाइयों को माफ़ कर दिया जिन्होंने उससे नफ़रत की थी और यहाँ तक कि उसे मार डालने की कोशिश भी की थी। अगर यूसुफ ने अपने भाइयों को माफ़ न किया होता, तो जब वे उसके सामने आए तो वह ज़रूर उनसे बदला लेता। फिर भी, यूसुफ ने ऐसा नहीं किया। यूसुफ, जिसे खुशहाली का आशीर्वाद मिला था क्योंकि परमेश्वर उसके साथ था, उसने अपने अतीत को परमेश्वर के नज़रिए से देखा; उसने अपने भाइयों को माफ़ कर दिया क्योंकि उसे एहसास हुआ कि उन घटनाओं के बीच, परमेश्वर ने उसे उनसे पहले मिस्र भेजा था ताकि उनकी जान बचाई जा सके और यह पक्का किया जा सके कि उनकी आने वाली पीढ़ियाँ दुनिया में बनी रहें। हम इसका सबूत उसके सबसे बड़े बेटे के नाम में देख सकते हैं। यूसुफ ने मिस्र में जन्मे अपने सबसे बड़े बेटे का नाम “मनश्शे” रखा, क्योंकि परमेश्वर ने उसे उसकी सारी मुश्किलों और अपने पिता के पूरे घर को भुला दिया था (उत्पत्ति 41:51)। दूसरी बात, यूसुफ ने न केवल उन भाइयों को माफ़ किया जिन्होंने उसे मारने की कोशिश की थी, बल्कि उन पर कृपा भी की। जब-जब उसके भाई कनान देश से खाना लेने के लिए मिस्र गए, यूसुफ ने उन्हें न सिर्फ़ अनाज (42:26, 44:1), पैसे

(42:28, 44:1), कपड़े (45:21-22) और मिस्र की बेहतरीन चीज़ों से लदे दस नर गधे और दस मादा गधे (v. 23) दिए, बल्कि—जब याकूब और उसका पूरा परिवार वहाँ पहुँचा—तो उन्हें "मिस्र देश की सबसे अच्छी ज़मीन" भी दी (45:18; देखें 47:6, 11)। तीसरी बात, याकूब की मौत के बाद, जब उसके भाइयों ने—इस डर से कि यूसुफ उनसे नफ़रत करेगा और उनके किए बुरे कामों का बदला लेगा (50:15)—अपने पिता की तरफ़ से एक आखिरी संदेश गढ़ा (vv. 16-17), तो यूसुफ रो पड़ा (v. 17) और उन भाइयों को, जो उसके सामने झुक गए थे (v. 18), दिलासा देने वाली बातें कहीं (v. 21): "डरो मत, क्या मैं परमेश्वर की जगह पर हूँ? तुमने मेरा बुरा करने की सोची थी, लेकिन परमेश्वर ने उसे भलाई में बदल दिया ताकि वह काम हो सके जो अभी हो रहा है—बहुत से लोगों की जान बचाना। इसलिए डरो मत; मैं तुम्हारे और तुम्हारे बच्चों के लिए इंतज़ाम करूँगा" (vv. 19-21a)। यह कैसे मुमकिन हुआ? यूसुफ उन भाइयों को न सिर्फ़ कैसे माफ़ कर सका जिन्होंने उससे नफ़रत की थी और उसे मार डालना चाहा था, बल्कि उन्हें दिल खोलकर चीज़ें दीं और प्यार से दिलासा भी दिया, जबकि वे उसके पैरों में डर से काँप रहे थे? क्या यूसुफ को अपने भाइयों से दिलासा नहीं मिलना चाहिए था? फिर भी, वह खुद दिलासा पाने के बजाय उन्हें दिलासा कैसे दे पाया? वह अपने भाइयों और अपने पूरे परिवार की सेवा कैसे कर पाया? वजह बस यह है कि यूसुफ... परमेश्वर की कृपा... ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि वह सच में समझता था। यूसुफ का दिल नफ़रत, नाराज़गी या बदले की भावना से नहीं, बल्कि परमेश्वर की कृपा से भरा हुआ था; इसी वजह से वह परमेश्वर के दिल के साथ अपने भाइयों और अपने पूरे परिवार की सेवा कर सका।

हमारा क्या? क्या हम सच में परमेश्वर के दिल से अपने परिवार के लोगों की सेवा करते हैं? क्या हम सच में उन परिवार वालों को माफ़ करते हैं जिन्होंने हमें दुख और तकलीफ दी है, ठीक वैसे ही जैसे यीशु ने हम जैसे पापियों को माफ़ किया? या क्या हम अपनी चर्च की मंडली की गलतियों को तो माफ़ कर देते हैं, लेकिन अपने सगे-संबंधियों की गलतियों के लिए उन्हें माफ़ नहीं करते? क्या हम अपने परिवार के लोगों को अच्छी चीज़ें देकर जीते हैं? या क्या हम असंतोष और शिकायत की हालत में जीते हैं, और सिर्फ़ पाना चाहते हैं? क्या हम डरे हुए और दुखी परिवार वालों को दिलासा देते हैं—जोसेफ़ की तरह सच्चे शब्दों से दिलासा देते हैं—बजाय इसके कि हम खुद दिलासा चाहें? अगर हम परमेश्वर की कृपा को नहीं जानते, तो शायद हम अपने परिवार से दूरी बनाकर और उनसे दूर रहकर जिंएंगे, और उन्हें माफ़ करने से भी इनकार करेंगे। अगर हम परमेश्वर की कृपा को भूलकर जीते हैं, तो शायद हम अपने परिवार को अच्छी चीज़ें देने के बजाय उनसे अच्छी चीज़ें पाने की उम्मीद

करेंगे। अगर हम परमेश्वर की कृपा को हल्के में लेते हैं, तो शायद हम दिलासा देने के बजाय दिलासा पाना चाहेंगे। ऐसे रवैये, सोच और कामों से परमेश्वर की वह महान कृपा बेकार हो जाती है जो उसने हमें दी है। हमें ऐसा नहीं करना चाहिए। हमें परमेश्वर से मिली कृपा को बर्बाद नहीं होने देना चाहिए। हमें परमेश्वर की कृपा को कभी भी कम नहीं समझना चाहिए। इसके बजाय, हमें परमेश्वर की कृपा को याद रखना चाहिए और उससे ताकत पाकर अपने परिवार की सेवा करनी चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे जोसेफ़ ने की थी। हमें अपने दिल से नहीं, बल्कि परमेश्वर के दिल से सेवा करनी चाहिए। और हमें अपने परिवार के लोगों की सेवा वैसे ही करनी चाहिए जैसे यीशु ने की थी।

तीसरी बात, जो लोग परमेश्वर की पिछली कृपा को याद रखते हैं और वर्तमान में उसे याद करते हैं, वे परमेश्वर के वादों पर मज़बूती से टिके रहते हैं और मौत तक वफ़ादारी से अपना मिशन पूरा करते हैं। उत्पत्ति 50:24-26 में, जोसेफ़ अपने भाइयों से कहता है, "मैं मरने वाला हूँ," फिर भी वह पूरा भरोसा दिखाता है कि परमेश्वर उन वादों को पूरा करेगा जो उसने उसके परदादा अब्राहम, दादा इसहाक और पिता याकूब से किए थे—खासकर यह कि परमेश्वर उन्हें मिस्र से निकालकर कनान देश में ले जाएगा, जिसे देने की उसने कसम खाई थी (वचन 24)। इसलिए, उन्होंने इस्राएलियों से कसम खिलवाई और कहा, "परमेश्वर ज़रूर तुम्हारी मदद करेंगे, और तब तुम्हें मेरी हड्डियाँ यहाँ से ले जानी होंगी" (वचन 25)। फिर 110 साल की उम्र में यूसुफ़ की मौत हो गई (वचन 26)। उत्पत्ति की किताब में बताए गए यूसुफ़ के जीवन पर गौर करते हुए, मैं कहूँगा कि वह परमेश्वर के वादे के लिए जिए और उसी वादे के लिए मरे। तेरह साल की मुश्किलों के बावजूद, यूसुफ़ डटे रहे और सब कुछ सहा क्योंकि उन्हें उन वादों से हिम्मत मिलती थी जो परमेश्वर ने अब्राहम, इसहाक और याकूब से किए थे। उन वादों पर भरोसा रखते हुए, उन्होंने प्रभु पर उम्मीद बनाए रखी और डटे रहे, तब भी जब ऐसा लगा कि दुनिया की सारी उम्मीदें खत्म हो गई हैं। इसी भावना के साथ, अपनी मौत की तैयारी करते हुए भी, उन्होंने इस्राएलियों से कसम खिलवाई कि वे उनकी हड्डियाँ कनान ले जाएँगे, जो परमेश्वर का वादा किया हुआ देश था। यूसुफ़ का जीवन सचमुच परमेश्वर के वादों से निर्देशित था। उन्होंने उन वादों को पूरा करने के परमेश्वर के वफादार काम में एक ज़रिया बनकर सेवा की; अपनी भूमिका—अपने मिशन—को वफादारी से पूरा करने के बाद, आखिरकार वे विश्राम में चले गए। वह भूमिका या मिशन क्या था? वह था अपने भाइयों और उनकी आने वाली पीढ़ियों की जान बचाना (45:7)। इस तरह, यूसुफ़ ने अपने भाइयों को दिलासा देते हुए कहा, "मैं तुम्हारे और तुम्हारे बच्चों के लिए इंतज़ाम करूँगा" (50:21)। इस तरह, यूसुफ़ ने सात साल के भयंकर अकाल के दौरान अपने भाइयों और

अपने पूरे परिवार को संभाले रखा। नतीजतन, जैसा कि परमेश्वर ने याकूब से वादा किया था, उन्होंने याकूब की आने वाली पीढ़ियों को मिस्र में एक महान राष्ट्र बनने में मदद की (46:3)। परमेश्वर के वादे को पूरा करने की प्रक्रिया में, यूसुफ ने उस भूमिका को वफादारी से निभाया जो परमेश्वर ने उनके लिए तय की थी, और फिर 110 साल की उम्र में मिस्र में उनकी मौत हो गई—यानी, एक तरह से वे परदेस में मरे। इंसानी नज़रिए से, उनका जीवन शायद दुखद लगे; लेकिन परमेश्वर की नज़र में, उनका जीवन सचमुच सुंदर था, क्योंकि वे उस मिशन को वफादारी से पूरा करके इस दुनिया से गए जो उन्हें सौंपा गया था।

हमारे जीवन के बारे में क्या? क्या हम सचमुच ऐसा जीवन जी रहे हैं जो परमेश्वर की नज़र में सुंदर है? क्या हम परमेश्वर की उद्धार की महान योजना में हमें सौंपे गए मिशन को वफादारी से पूरा कर रहे हैं? क्या हम ऐसी मौत की तैयारी कर रहे हैं जो परमेश्वर की नज़र में सुंदर हो? मेरी प्रार्थना है कि हम उस कृपा को याद रखें जो परमेश्वर ने हमें पहले दी है और आज अपने जीवन में उसका सम्मान करें। मैं प्रार्थना करता हूँ कि जब हम उनकी कृपा को याद करें, तो हम हर चीज़ को परमेश्वर के नज़रिए से देखें। मैं यह भी प्रार्थना करता हूँ कि याद करते हुए, हम नम्रता के साथ अपने शारीरिक परिवारों और अपने आध्यात्मिक परिवारों—यानी चर्च में हमारे साथी विश्वासियों—की सेवा परमेश्वर के दिल से करें। इसके अलावा, मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम परमेश्वर के वादों पर मज़बूती से बने रहें और हमें सौंपे गए मिशन को ईमानदारी से पूरा करें। ऐसा करते हुए, हम सब ऐसी मौत का सामना करें जो परमेश्वर की नज़र में सुंदर हो।

दिन 33: अपने बच्चों को सही राह पर चलना सिखाएं!

[नीतिवचन 22:6 पर मनन]

"बच्चे को वह राह सिखाओ जिस पर उसे चलना चाहिए, और जब वह बड़ा हो जाएगा तो वह उससे नहीं भटकेगा।" (नीतिवचन 22:6)

मुझे कुछ समय पहले उत्तर कोरिया के नॉर्थ प्योंगन प्रांत में योंगचोन स्टेशन पर हुए धमाके की खबर याद है। उस समय, बहुत से लोग घायल हुए थे। ज़बरदस्त झटकों और कांच के टुकड़ों से आँखों में गंभीर चोट लगने के कारण कई लोगों के अंधे होने का खतरा था। खासकर, मैंने यह दुखद खबर सुनी कि योंगचोन एलिमेंट्री स्कूल में घायल हुए ज़्यादातर बच्चों की आँखों को नुकसान पहुँचा था। योंगचोन एलिमेंट्री स्कूल के बच्चों के बारे में दुखद खबर सुनकर, कवि किम योंग-ताएक ने अपनी कविता "योंगचोन एलिमेंट्री स्कूल के बच्चे" में यह लिखा: "...योंगचोन के बच्चे! इस धरती के बच्चे, जैसे जमी हुई ज़मीन को चीरकर निकलती घास की नई पत्तियाँ! वे बच्चे जिन्होंने अपना स्कूल खो दिया, जिन्होंने अपने दोस्त खो दिए, जिनके पास लौटने के लिए घर नहीं बचा, और जिनके माता-पिता और भाई-बहन भी नहीं रहे! गर्म लपटों से झुलसे चेहरे, आह! आह! मैं इस अचानक आई मौत, दर्द, दुख, ठंड, भूख और दहशत का क्या करूँ? मुझे अभी क्या करना चाहिए?" "मुझे अभी क्या करना चाहिए?" - इस पंक्ति ने मुझे सोचने पर मजबूर कर दिया। मेरा मानना है कि हमारी ज़िंदगी में कई बार ऐसा होता है जब हम किसी दुखद सच्चाई को देखते हैं और समझ नहीं पाते कि क्या करें। खासकर जब हम अपने बच्चों को आध्यात्मिक रूप से अंधा देखते हैं—उनकी शारीरिक आँखें नहीं, बल्कि उनकी आध्यात्मिक आँखें घायल होती हैं—तो माता-पिता के तौर पर हमें खुद से यह दुख भरा सवाल पूछना चाहिए: "मुझे अभी क्या करना चाहिए?" और भी दुख की बात उन माता-पिता का आध्यात्मिक अंधापन है जो यह नहीं देख पाते कि उनके बच्चे आध्यात्मिक रूप से अंधे हैं। यह तो वैसा ही है जैसे कोई अंधा किसी दूसरे अंधे को रास्ता दिखा रहा हो। तो फिर,

माता-पिता के तौर पर हमें अपने बच्चों के लिए क्या करना चाहिए? हमें उन्हें वह राह सिखानी चाहिए जिस पर उन्हें चलना चाहिए। हमें उन्हें असल में क्या सिखाना चाहिए?

सबसे पहले, माता-पिता को अपने बच्चों को सही मूल्य सिखाने चाहिए।

हमें इस बात पर सोचना चाहिए कि हम अपने रोज़मर्रा के पारिवारिक जीवन में बच्चों के सामने किन मूल्यों को दिखाते हैं। क्या वह विश्वास है? क्या हमारे बच्चे हमारे परिवार की आस्था भरी ज़िंदगी में विश्वास की अहमियत और असली कीमत को देखते हैं? या फिर हम दुनिया के उन मूल्यों के हिसाब से जीने में बहुत व्यस्त हैं—जिन मूल्यों से परमेश्वर नफ़रत करते हैं (लूका 16:15)? बाइबल कहती है, "क्योंकि जहाँ तुम्हारा धन है, वहीं तुम्हारा मन भी होगा" (मत्ती 6:21)। वह कौन-सी "धन-संपत्ति" है जिसे हम बहुत कीमती मानते हैं या प्यार करते हैं? हमारा दिल वहीं लगा होता है। इसलिए, हमें मत्ती 6:21 की बातों पर ध्यान देना चाहिए।

मूसा एक ऐसे व्यक्ति थे जिनके मूल्य सही थे। उन्होंने मसीह के लिए सहने पड़े अपमान को मिस्र के सारे खजानों से कहीं ज़्यादा बड़ी दौलत माना (इब्रानियों 11:26)। असल में दुख सहना किसे अच्छा लगता है? क्या दुनिया की चीज़ों या दौलत को पसंद करना हमारी स्वाभाविक प्रवृत्ति नहीं है? फिर भी, क्योंकि मूसा ने विश्वास की नज़रों से उस इनाम को देखा, इसलिए उन्होंने मसीह के लिए दुख सहने से मिलने वाली "संपत्ति" को दुनिया के खजानों से कहीं ज़्यादा बड़ा माना। बाइबल हमें सिखाती है कि हमें अपने बच्चों में ऐसे सही मूल्य डालने चाहिए। दूसरी बात, माता-पिता के तौर पर हमें अपने बच्चों को जीवन का एक स्पष्ट मकसद रखना सिखाना चाहिए।

हमारे बहुत से बच्चे बिना किसी स्पष्ट मकसद के, बेमकसद भटकते हुए अपनी ज़िंदगी बर्बाद कर रहे हैं। वे इधर-उधर घूमते रहते हैं, उन्हें पता नहीं होता कि कैसे जिएं, और हर दिन को बिना किसी मतलब के गुज़ार देते हैं। वे बेकार की ज़िंदगी जी रहे हैं क्योंकि उनका मकसद ही गलत है। वेस्टमिंस्टर शॉर्टर कैटेकिज़्म (Westminster Shorter Catechism) पूछता है, "इंसान का मुख्य मकसद क्या है?" इसका जवाब है, "इंसान का मुख्य मकसद परमेश्वर की महिमा करना और हमेशा उसका आनंद लेना है।" फिर भी, हममें से कितने माता-पिता—प्रार्थना करते हुए और परमेश्वर की महिमा के लिए कोशिश करने का दावा करते हुए—असल में

परमेश्वर को आनंद लेने वाले के बजाय एक बोझ समझते हैं? क्या हमें प्रभु की कलीसिया—यानी उनके शरीर—की सेवा करना भी एक बोझ नहीं लगता?

हमें दानियेल के स्पष्ट मकसद से सीखना चाहिए और उसे अपने बच्चों को भी दिखाना चाहिए। उन्होंने खुद को अशुद्ध न करने का पक्का इरादा किया और राजा के शाही खाने और शराब को लेने से इनकार कर दिया (दानियेल 1:8)। हालाँकि दुनिया इसे एक सुनहरा मौका मानती, लेकिन उन्होंने इसे ठुकरा दिया क्योंकि उनका मकसद स्पष्ट था: परमेश्वर की पवित्रता को पाना। डैनियल ने खुद को अशुद्ध न करने का पक्का और अटूट संकल्प लिया था। अगर हमारे बच्चे भी ऐसी जिंदगी जिएं, तो परमेश्वर कितना खुश होगा!

आखिर में, तीसरी बात यह है कि माता-पिता के तौर पर हमें अपने बच्चों को जिंदगी के प्रति एक अनंत नज़रिया रखना सिखाना चाहिए।

बहुत सारे बच्चे अपनी जान ले रहे हैं और परमेश्वर से मिली जिंदगी की कद्र नहीं कर रहे हैं। यह कितनी दुखद बात है। लोग इतनी आसानी से अपनी कीमती जान क्यों ले लेते हैं? ऐसा इसलिए है क्योंकि उनमें जिंदगी के प्रति अनंत नज़रिया नहीं होता। उन्होंने जीने की इच्छा खो दी होती है। इसकी वजह यह है कि उन्हें स्वर्ग के अनंत राज्य में कोई उम्मीद नहीं दिखती। यह दुनिया हमें कोई उम्मीद नहीं दे सकती; यह हमें एक दिन जीने के लिए ज़रूरी उम्मीद भी नहीं दे सकती। इसके बजाय, यह बेकार और कुछ समय की दुनिया सिर्फ निराशा देती है। फिर भी, हममें से जो लोग यीशु पर विश्वास करते हैं, वे उम्मीद के साथ जीते हैं, भले ही यह दुनिया निराशा पैदा करने वाली हो। हम यीशु मसीह में मिली अनंत उम्मीद को थामे हुए जीते हैं। हमें मिलने वाला अनंत सुकून इसी बात में है कि अनंत जीवन का अस्तित्व है। हमारी जिंदगी क्या है? यह एक धुंध की तरह है जो थोड़ी देर के लिए दिखती है और फिर गायब हो जाती है (याकूब 4:14)। यह एक छोटी सी जिंदगी है जो जल्दी ही खत्म हो जाती है; तो फिर, हम ऐसे क्यों जीते हैं जैसे हम हमेशा इसी धरती पर रहने वाले हैं? ऐसा इसलिए है क्योंकि हम मौत के बारे में गहराई से सोचते और प्रार्थना नहीं करते। ऐसा इसलिए है क्योंकि हममें जिंदगी के प्रति अनंत नज़रिया नहीं होता। सिर्फ वही लोग अनंत राज्य के दरवाज़े की ओर देखते हैं जो मौत के दरवाज़े के बारे में सोचते हैं। उस अनंत राज्य पर नज़र टिकाए हुए, पौलुस ने अपनी पूरी जिंदगी धरती पर मिले बहुत से लोगों को यीशु मसीह का सुसमाचार सुनाने में लगा दी। उसने सुसमाचार के उस फल को, जो परमेश्वर ने उसके ज़रिए पैदा किया था, "मेरे प्यारे और बहुत चाहने वाले भाइयों, मेरी खुशी और ताज" कहा (फिलिप्पियों 4:1)।

आखिर हमारी खुशी और ताज कौन हैं? परमेश्वर की नज़र में, सच में खूबसूरत इंसान वह है जिसके पास सफ़र के आखिर में ऐसे कई "खुशी और ताज" हों। ऐसा खूबसूरत इंसान अनंत नज़रिया अपनाता है और अपनी पूरी ज़िंदगी अनंत चीज़ों के लिए समर्पित करता है। हमें अपने बच्चों को जीने का यह तरीका दिखाना चाहिए। साथ ही, हमें उन्हें ज़िंदगी के प्रति एक खूबसूरत नज़रिया सिखाना चाहिए। जिस तरह एक कवि ने रॉगचोन एलिमेंट्री स्कूल के उन बच्चों को देखकर अफ़सोस जताया था जिनकी आँखें चोट लगने की वजह से अंधी हो गई थीं और कहा था, "अब—अब मैं क्या करूँ?", उसी तरह हमें भी अपने उन बच्चों को देखकर गंभीरता से सोचना चाहिए जिनकी आध्यात्मिक आँखें अंधी हो चुकी हैं—यानी जो सच्चाई को देख नहीं पा रहे हैं। हमें प्रार्थना करनी चाहिए। ऐसा करते हुए, हमें परमेश्वर के वचन में इसका जवाब खोजना चाहिए। हमें अपने बच्चों को वह रास्ता दिखाना चाहिए जिस पर उन्हें चलना चाहिए। हमें उनमें सही संस्कार, जीवन का स्पष्ट मकसद और जीवन के प्रति एक शाश्वत नज़रिया पैदा करना चाहिए। तो फिर, आप क्या करेंगे?

दिन 34: “प्रभु के युवा लोग सुबह की ओस की तरह हैं”

[भजन संहिता 110 पर मनन]

पिछले रविवार, मैंने डिस्ट्रिक्ट 4 के लिए बाइबल स्टडी में हिस्सा लिया और “स्पिरिचुअल वॉरफेयर” (आत्मिक युद्ध) के छठे पाठ, जिसका शीर्षक था “युद्ध जो प्रभु का है,” का अध्ययन किया। अध्ययन के दौरान, “दिल खोलना” (Opening the Heart) वाले हिस्से में, हमने इस बारे में बात की कि हममें से हर एक के लिए सबसे बड़ा युद्ध का मैदान कहाँ है। हमने पाया कि यह बड़ा युद्ध का मैदान हमारा घर, हमारा काम करने की जगह, दूसरों के साथ हमारे रिश्ते और हमारा अपना मन है। ऐसा करते हुए, हमने खुद से यह सवाल पूछा: “क्या हम सच में इस आत्मिक युद्ध के लिए सही ढंग से तैयार हैं?” कारण यह है कि अगर हम सही ढंग से तैयार नहीं हैं, तो हम यह बड़ी लड़ाई नहीं जीत सकते। क्या आप और मैं सच में परमेश्वर के पूरे हथियार पहने हुए हैं? क्या हम सच में सच्चाई की कमरबंद, विश्वास की ढाल, धार्मिकता की छाती-कवच, उद्धार का हेलमेट, शांति के सुसमाचार के जूते और आत्मा की तलवार—यानी परमेश्वर का वचन—से लैस हैं? क्या आप और मैं सच में परमेश्वर के वचन और विश्वास के साथ उस आत्मिक युद्ध को अच्छी तरह लड़ रहे हैं जिसमें हम अभी उलझे हुए हैं? क्या हम सच में उद्धार के भरोसे के साथ लड़ रहे हैं? क्या आप इसे शांति के सुसमाचार का अनुभव करने और उसे दूसरों तक पहुँचाने के एक मौके के तौर पर देख रहे हैं? व्यक्तिगत रूप से, पिछले रविवार को छोटे समूह की बाइबल स्टडी में शामिल होने के बाद, अगले ही सोमवार को मैं अपने मन के साथ—जो मेरा अपना मुख्य युद्ध का मैदान है—लड़ाई हार गया। सोमवार देर रात लिविंग रूम के सोफे पर बैठे हुए, जब मुझे नींद नहीं आ रही थी और मैं खुद के बारे में सोच रहा था, तो मुझे वे संदेश याद आए जो मैंने सुनाए थे। पिछले हफ़्ते सुनाए गए संदेशों पर सोचते हुए—शुक्रवार और शनिवार की सुबह की सभाओं और इंग्लिश सर्विस में “सुस्त हो गए दिल” (मरकुस 6:52) और कोरियन सर्विस में “उद्धार के लिए” (प्रेरितों के काम 27:27-44)—मुझे

एहसास हुआ कि मैं अपने मन की शांति बनाए रखने में नाकाम रहा; इसके बजाय, मैंने अपना दिल कठोर कर लिया था और परमेश्वर के वचन की बात नहीं मानी थी। मुझे बहुत भारीपन और खुद से निराशा महसूस हुई जब मैंने देखा कि कैसे मैंने पूरे दिन जान-बूझकर उन्हीं संदेशों को नज़रअंदाज़ किया, पाप भरे विचारों में डूबा रहा और अपनी मर्ज़ी के अनुसार जीता रहा। अपनी कमज़ोरी, नाकाफ़ीपन, बेकार होने और पापों का एहसास होने पर—और अपने "पुराने स्वभाव" के खिलाफ़ अंदरूनी लड़ाई हारने की सच्चाई का सामना करते हुए—मैंने परमेश्वर की दया और करुणा मांगी। मैंने परमेश्वर के सामने अपने पापों को माना और उनसे माफ़ी मांगी। बाद में, मंगलवार की सुबह की प्रार्थना सभा में, जब मैं प्रार्थना कर रहा था, तो मुझे फ़िलिप्पियों 4:6-7 याद आया—यह वही वचन था जो रविवार की कोरियाई सेवा के उपदेश में सुनाया गया था—जिसमें मैंने उस आध्यात्मिक लड़ाई के बारे में बताया था जो मैंने एक दिन पहले खुद से लड़ी थी। फिर मैंने धन्यवाद के साथ परमेश्वर के सामने अपनी विनती रखी और आभारी रहने का संकल्प लिया। इस दौरान, परमेश्वर ने मुझे मन की शांति दी और मुझे जीत की खुशी का अनुभव कराया।

परमेश्वर की इस आध्यात्मिक लड़ाई में जीत हासिल करने के लिए, हमें "सुबह की ओस जैसे युवा लोगों" के रूप में तैयार होना होगा। भजन संहिता 110:3 देखें: "तेरे लोग तेरी शक्ति के दिन स्वेच्छा से आगे आएंगे; पवित्रता की सुंदरता में, सुबह की कोख से, तेरे पास तेरी जवानी की ओस है।" मैंने पहली बार "सुबह की ओस जैसे युवा लोग" वाक्यांश कोरिया के सोग्यो-डोंग में स्थित सियोह्युन चर्च में सुना था। जब मैं सियोह्युन चर्च में सेवा कर रहा था, तो युवा वयस्कों की सेवा (मिनिस्ट्री) के प्रभारी पादरी ने उस समूह को "प्रभु के युवा लोग, सुबह की ओस की तरह" बताया था। वह पहली बार था जब मैंने वह वाक्यांश सुना था। उस समय, मुझे यह एक अद्भुत अभिव्यक्ति लगी, भले ही मैं इसका पूरा अर्थ नहीं समझ पाया था। बाद में, भजन संहिता 110 पर मनन करते हुए, मुझे वही वाक्यांश फिर से मिला और मैंने इस बात पर विचार किया कि "प्रभु के युवा लोग, सुबह की ओस की तरह" होने का असल में क्या अर्थ है। मेरी प्रार्थना है कि हम सभी प्रभु के ऐसे युवा लोगों के रूप में स्थापित हों—सुबह की ओस की तरह—और अपनी आध्यात्मिक लड़ाइयों में विजयी हों।

सबसे पहले, प्रभु के युवा लोग—सुबह की ओस की तरह—वे हैं जो खुशी-खुशी खुद को प्रभु को समर्पित करते हैं। यहाँ, "प्रभु के युवा लोग, सुबह की ओस की तरह" वाक्यांश उन लोगों के लिए इस्तेमाल किया गया है जो प्रभु

की शक्ति के दिन—यानी उनके युद्ध के दिन—खुशी-खुशी और अपनी मर्जी से खुद को प्रभु यीशु, अपने सेनापति को समर्पित करते हैं। ये युवा, जो खुशी-खुशी खुद को यीशु मसीह को समर्पित करते हैं—वही यीशु जो कब्र से जी उठे, स्वर्ग गए, और परमेश्वर के दाहिने हाथ राजा के रूप में राज करते हैं (पद 1)—उनकी संख्या अनगिनत है, जैसा कि "सुबह की ओस" शब्द से पता चलता है। दूसरे शब्दों में, युवाओं की यह भीड़ जो खुशी-खुशी खुद को मसीह और उनकी कलीसिया को समर्पित करती है, प्रभु की आध्यात्मिक सेना बनाती है (पार्क युन-सन)। यह आध्यात्मिक सेना—सुबह की ओस जैसे ये युवा—मसीह यीशु के "अच्छे सैनिक" हैं (2 तीमुथियुस 2:3-4)। वे ऐसे लोग हैं जो प्रभु के दुखों में हिस्सेदार बनते हैं और, आम ज़िंदगी के मामलों में उलझने के बजाय, उस व्यक्ति को खुश करने की कोशिश करते हैं जिसने उन्हें सैनिक के तौर पर भर्ती किया है। प्रभु ने आपको और मुझे अपनी सेना में भर्ती किया है। हम प्रभु के युवा लोग हैं—सुबह की ओस की तरह—जिन्होंने खुशी-खुशी खुद को प्रभु, अपने सेनापति को समर्पित किया है। प्रभु की सेना में भर्ती आध्यात्मिक सैनिकों के तौर पर, हमें प्रभु के अच्छे सैनिक बनने की कोशिश करनी चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें प्रभु के साथ दुख सहने को एक सम्मान (फिलिप्पियों 1:29) मानना चाहिए और उनके दुखों में सच्चे दिल से हिस्सा लेना चाहिए (3:10)। इसके अलावा, हमें अपनी ज़िंदगी के मामलों में नहीं उलझना चाहिए, बल्कि उस प्रभु को खुश करने की कोशिश करनी चाहिए जिसने हमें भर्ती किया है। अच्छे सैनिकों के तौर पर अपने सेनापति यीशु को खुश करने के लिए, हमें उनके प्रति वफादार रहना चाहिए और उनकी आज्ञाओं का पालन करना चाहिए। हमें खुद को अपने सेनापति यीशु को समर्पित करना चाहिए और उनके वचन का पालन करने का संकल्प लेना चाहिए।

दूसरी बात, प्रभु के युवा लोग—सुबह की ओस की तरह—वे हैं जिनका चरित्र पवित्र होता है।

सुबह की ओस ताज़गी का प्रतीक है, जिस पर धूल का कोई असर नहीं होता। इसलिए, "प्रभु के युवा लोग, सुबह की ओस की तरह" का मतलब है वे लोग जिनमें सुबह की धूप में चमकती ओस जैसी पवित्रता और स्पष्टता हो। प्रभु के ये पवित्र युवा पवित्र वस्त्र पहने हुए हैं (भजन संहिता 110:3)। दूसरे शब्दों में, वे प्रभु के पवित्र आध्यात्मिक सैनिक हैं, जो उनके युद्ध के दिन के लिए तैयार हैं। तो फिर, उस युद्ध का स्वरूप क्या है जिसमें ये आध्यात्मिक सैनिक—अपने सेनापति यीशु पर भरोसा करके—लड़ते हैं? यह एक पवित्र आध्यात्मिक युद्ध है। जब हम—आप और मैं—इस पवित्र आध्यात्मिक युद्ध में भाग लेते हैं, तो हमें प्रभु के पवित्र सैनिकों के रूप में ओस की तरह

चमकना चाहिए। यानी, इस अंधेरी दुनिया के खिलाफ लड़ते हुए, हमें प्रभु की पवित्र रोशनी फैलानी चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें अंधेरे के कामों को उजागर करना चाहिए और उनकी निंदा करनी चाहिए (इफिसियों 5:11, 13)। प्रभु के पवित्र सैनिकों के रूप में, हमें कभी भी अंधेरे के कामों में शामिल नहीं होना चाहिए (पद 11)। इस प्रकार, इस पवित्र आध्यात्मिक युद्ध में जीत हासिल करके, हमें पवित्र प्रभु की महिमा करनी चाहिए।

अंत में, तीसरी बात यह है कि प्रभु के युवा लोग—सुबह की ओस की तरह—नई शक्ति पाते हैं और दुनिया पर विजय प्राप्त करते हैं।

पवित्र आध्यात्मिक युद्ध में लगे प्रभु के पवित्र सैनिकों के रूप में, ये युवा—जिनकी तुलना सुबह की ओस से की गई है—यीशु मसीह से शक्ति पाकर जीत हासिल करते हैं, जो परमेश्वर के दाहिने हाथ बैठे हैं। इस पवित्र आध्यात्मिक युद्ध को लड़ते हुए, वे समझते हैं कि यह लड़ाई मांस और खून के खिलाफ नहीं है। वे ध्यान में रखते हैं कि आध्यात्मिक संघर्ष प्रधानताओं, शक्तियों, इस दुनिया के अंधेरे के शासकों और स्वर्गीय स्थानों में दुष्टता की आध्यात्मिक ताकतों के खिलाफ है (इफिसियों 6:12)। इसलिए, प्रभु के युवा लोगों को—सुबह की ओस की तरह—आध्यात्मिक सैनिकों के रूप में परमेश्वर के पूरे कवच को पहनना चाहिए। खासकर दुष्ट आत्माओं के खिलाफ लड़ाई में, उन्हें अपने एकमात्र हथियार—आत्मा की तलवार—को तेज करना चाहिए। हमें परमेश्वर के वचन से अपने मन और हृदय को तेज़ करके और सतर्क व प्रार्थनाशील रहकर आध्यात्मिक लड़ाई लड़नी चाहिए। हमें कभी भी दुनिया के प्रलोभनों, धन की चाहत या लालच को परमेश्वर के वचन में बाधा नहीं बनने देना चाहिए और न ही इसे फल लाने से रोकना चाहिए। अगर कोई आध्यात्मिक रूप से सुस्त या कमज़ोर होकर आध्यात्मिक लड़ाई लड़ता है, तो वह जीत हासिल नहीं कर सकता। जीत के भरोसे और यीशु—हमारे सेनापति—पर विश्वास के साथ, हमें खुद से, पाप से, दुनिया से और शैतान से लड़ना होगा। हमें ऐसा ही जीवन जीना चाहिए; हमें अपनी पक्की जीत के भरोसे एक योद्धा जैसा जीवन जीना चाहिए।

तो फिर, प्रभु के युवाओं के तौर पर—जो सुबह की ओस की तरह ताज़गी भरे हैं—इस आध्यात्मिक लड़ाई को लड़ने के लिए हमें किस चीज़ की ज़रूरत है? हमें उस नई शक्ति की ज़रूरत है जो प्रभु रोज़ाना, बल्कि हर पल

देते हैं। हमें प्रभु से यह नई शक्ति लगातार हर दिन प्राप्त करनी चाहिए—वही प्रभु जिन्होंने मृत्यु पर विजय पाई, फिर जी उठे, स्वर्ग गए और अब परमेश्वर के दाहिने हाथ बैठे हैं। तभी हम इस पवित्र आध्यात्मिक लड़ाई में जीत हासिल करने की शक्ति पा सकते हैं। प्रभु द्वारा दी जाने वाली नई शक्ति पाने के लिए, हमें अपने दिलों की शांति में परमेश्वर की धीमी, कोमल आवाज़ को सुनना होगा। जैसे रात में ओस चुपचाप गिरती है, वैसे ही हमें अपनी आत्मा की शांति में परमेश्वर की कोमल आवाज़ सुनकर नई शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। अगर हमें यह आध्यात्मिक लड़ाई लड़नी है और जीतनी है, तो हमें कभी भी खुद को कमज़ोर नहीं होने देना चाहिए। इसके बजाय, अधर्म और पाप की ताकतों पर जीत पाने के लिए, हमें रोज़ाना प्रभु से शक्ति प्राप्त करनी चाहिए। हमें परमेश्वर के वचन—आत्मा की तलवार—की शक्ति की ज़रूरत है। हमें सुसमाचार की शक्ति की ज़रूरत है। साथ ही, आध्यात्मिक लड़ाई में जीत हासिल करने के लिए, हमें प्रार्थना की शक्ति की भी ज़रूरत है। निर्गमन 17:15 में लिखा है, "यहोवा निस्सी" (प्रभु हमारा... यहाँ "झंडा" शब्द का ज़िक्र है। जब इस्राएल ने रेफिद्रीम में अमालेक के खिलाफ़ लड़ाई लड़ी, तो मूसा ने प्रार्थना में अपने हाथ उठाए, और इस्राएल की जीत हुई (आयत 11)। क्योंकि मूसा ने सूरज डूबने तक अपने हाथ उठाए रखे, इसलिए इस्राएल लड़ाई जीत गया; फिर उन्होंने एक वेदी बनाई और उसका नाम "यहोवा-निस्सी" रखा (आयत 15)। जिस शक्ति ने यह जीत दिलाई, वह परमेश्वर की ताकत थी, जिन्होंने मूसा की प्रार्थना का जवाब दिया। आज, हमें इस संदेश पर ध्यान देना चाहिए और प्रार्थना करनी चाहिए। हमारे सामने आने वाली आध्यात्मिक लड़ाइयों में—उन बड़े युद्ध-क्षेत्रों में जहाँ आप और मैं अभी लड़ रहे हैं—हमें प्रार्थना के लिए उठाए गए अपने हाथों को नीचे नहीं गिरने देना चाहिए। प्रभु के युवा लोगों के तौर पर—सुबह की ओस की तरह ताज़गी भरे—हमें खुशी-खुशी खुद को उन्हें समर्पित करना चाहिए। इसके अलावा, प्रभु के अच्छे सैनिकों के तौर पर, हमें परमेश्वर की पवित्रता का प्रकाश फैलाना चाहिए। हम प्रभु के पवित्र आध्यात्मिक सैनिक हैं; हमें इस अंधेरी दुनिया का सामना करना है और प्रभु की पवित्रता को प्रकट करना है। हमें प्रभु से नई ताकत पानी चाहिए—दिन-ब-दिन और पल-पल—ताकि हमें सौंपी गई आध्यात्मिक लड़ाइयों में जीत मिल सके। इसलिए, मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप और मैं सचमुच "यहोवा-निस्सी"—"प्रभु मेरा झंडा है"—को अपनाएँ और अपने युद्ध-क्षेत्रों पर जीत का झंडा गाड़ें।

दिन 35: एक सुंदर बुजुर्ग

[भजन संहिता 71:9 पर मनन]

“बुढ़ापे के समय मुझे त्याग न देना; जब मेरी शक्ति क्षीण हो जाए, तो मुझे छोड़ न देना” (भजन संहिता 71:9)।

व्यक्तिगत रूप से, मुझे बुजुर्गों को केवल *नोइन-ने* (एक अनौपचारिक, कभी-कभी अनादरपूर्ण शब्द जिसका अर्थ “बूढ़ा व्यक्ति” है) कहकर बुलाना पसंद नहीं है। फिर भी, जब मैंने आज के वचन पर मनन किया और इस चिंतन का शीर्षक “एक सुंदर बुजुर्ग” रखा, तो मैं उलझन में पड़ गया—कोरियाई भाषा की बारीकियों को देखते हुए—कि क्या दादा-दादी और नाना-नानी के लिए *नुलगेउनी* (बूढ़ा व्यक्ति) शब्द का प्रयोग करना वास्तव में उचित है। मेरा उद्देश्य केवल बाइबिल में पाए जाने वाले वाक्यांश “बुढ़ापे का समय” का उपयोग करके धर्मशास्त्र पर चिंतन करना है। मैं बस यही आशा करता हूँ कि *नुलगेउनी* शब्द से बुजुर्गों के दिलों को कोई ठेस न पहुँचे। मेरी इच्छा है कि आज के वचन पर केंद्रित होकर उन तीन पहलुओं का पता लगाऊँ जो बुजुर्गों की सुंदरता का निर्माण करते हैं और परमेश्वर की दृष्टि में कौन वास्तव में एक सुंदर बुजुर्ग है। ऐसा करते हुए, मैं स्वयं भी एक ऐसा सुंदर बुजुर्ग बनने की आकांक्षा रखता हूँ।

पहला, एक सुंदर बुजुर्ग प्रभु पर निर्भर रहता है, जो उनकी आशा है।

भजन संहिता 71:5 को देखें: “क्योंकि हे प्रभु परमेश्वर, तू ही मेरी आशा है; तू जवानी से ही मेरा भरोसा रहा है।”

भजनकार प्रभु से शिक्षा प्राप्त करते हुए बड़ा हुआ (पद 17)। परिणामस्वरूप, वह अपनी जवानी से ही प्रभु पर निर्भर रहने में सक्षम था। जैसे-जैसे वर्ष बीतते गए, वह प्रभु पर और भी गहराई से निर्भर होता गया। उसके लिए,

प्रभु एक मजबूत शरणस्थान थे (पद 7)। जब उसके शत्रुओं ने—जो भजनकार की जान लेने की ताक में थे—मिलकर षड्यंत्र रचा (पद 10), और कहा, “परमेश्वर ने उसे त्याग दिया है; उसका पीछा करो और उसे पकड़ लो, क्योंकि उसे बचाने वाला कोई नहीं है” (पद 11), तो भजनकार ने परमेश्वर से पुकार की: “हे परमेश्वर, मुझसे दूर न हो; हे मेरे परमेश्वर, मेरी सहायता करने में शीघ्रता कर!” (पद 12)। इस प्रकार, जो लोग प्रभु पर—जो उनकी आशा का स्रोत है—निर्भर रहते हैं, वे परमेश्वर से अपनी विनती करते हैं। भजनकार कितनी सुंदर तस्वीर पेश करते हैं। हमें भजनकार के जीवन का अनुकरण करना चाहिए, जिन्होंने अपनी जवानी से लेकर बुढ़ापे और बाल सफेद होने तक लगातार प्रभु—अपनी आशा—पर भरोसा करते हुए जीवन बिताया। भजनकार की तरह, जब हम बड़ी और गंभीर मुसीबतों का सामना करते हैं (पद 20), तो हमें अपनी आशा, परमेश्वर पर और भी अधिक भरोसा करना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो परमेश्वर हमें उन मुसीबतों से छुड़ाएंगे। प्रभु हमें फिर से जीवित करेंगे और धरती की गहराइयों से ऊपर उठाएंगे (पद 20)। जो बुजुर्ग व्यक्ति सालों-साल प्रभु पर भरोसा करते हुए बूढ़ा होता है, वह परमेश्वर की दृष्टि में सुंदर होता है।

दूसरी बात, एक सुंदर बुजुर्ग व्यक्ति आने वाली पीढ़ियों को प्रभु के कामों के बारे में बताता है।

भजन संहिता 71:18 को देखिए: “हे परमेश्वर, जब मैं बूढ़ा हो जाऊं और मेरे बाल सफेद हो जाएं, तब भी मुझे न छोड़ना, जब तक कि मैं अगली पीढ़ी को तेरी शक्ति और आने वाले सभी लोगों को तेरी सामर्थ्य के बारे में न बता दूं।” भजनकार आने वाली पीढ़ियों और सभी लोगों को प्रभु की शक्ति और सामर्थ्य के बारे में बताना चाहता था। वह प्रभु परमेश्वर के महान कामों को बताना और उसकी धार्मिकता की घोषणा करना चाहता था (पद 16)। उसकी जीभ दिन भर प्रभु की धार्मिकता के बारे में बोलती थी (पद 24)। इसका कारण वह अपार धार्मिकता और उद्धार था जो प्रभु ने उसे तब दिया जब वह अपनी जवानी से लेकर बुढ़ापे तक प्रभु—अपनी आशा—पर भरोसा करते हुए जी रहा था (पद 15)। भजनकार आने वाली पीढ़ियों को प्रभु के उद्धार की अपार कृपा के बारे में न बता पाने के विचार को सहन नहीं कर सकता था। इसलिए, उसने परमेश्वर से विनती की कि जब तक वह इस मिशन को पूरा न कर ले, तब तक वह उसे बुढ़ापे में न छोड़े।

जो बुजुर्ग व्यक्ति अपने बच्चों और वंशजों को विश्वास की विरासत सौंपता है, वह सुंदर होता है। बुद्धिमान वह बुजुर्ग व्यक्ति है जो जवानी से बुढ़ापे तक प्रभु—अपनी आशा—पर भरोसा करते हुए मिली परमेश्वर की कृपा को अपने बच्चों और वंशजों को बताता और उनके साथ साझा करता है। अपनी जीवन भर की उपलब्धियों के बारे में बात करने के बजाय, जो बुजुर्ग व्यक्ति अपने जीवन में परमेश्वर द्वारा किए गए महान कामों की गवाही देता है, वह यह कहने के योग्य है, "परमेश्वर की कृपा से ही मैं वह हूँ जो मैं हूँ" (1 कुरिन्थियों 15:10)।

तीसरी बात, एक सुंदर बुजुर्ग व्यक्ति प्रभु की स्तुति करता है। भजन संहिता 71:14 को देखिए: "लेकिन मैं हमेशा उम्मीद रखूँगा और आपकी और ज़्यादा तारीफ़ करूँगा।" जैसे-जैसे साल बीतते गए, भजनकार, जिसने प्रभु पर भरोसा किया था, न केवल परमेश्वर द्वारा अपने जीवन में किए गए अद्भुत और महान कामों का बखान करता रहा, बल्कि प्रभु की स्तुति भी करता रहा। समय बीतने के साथ-साथ उसने प्रभु की स्तुति और बढ़ाई (पद 14) और लगातार ऐसा करता रहा (पद 6)। भजनकार का मुँह दिन भर प्रभु की स्तुति और सम्मान से भरा रहता था (पद 8)। उसने वीणा बजाकर प्रभु और उसकी सच्चाई की स्तुति की (पद 22)। उसने सारंगी बजाकर इस्राएल के पवित्र परमेश्वर की स्तुति की (पद 22)। जब वह प्रभु की स्तुति करता था, तो उसके होंठ खुशी से चिल्ला उठते थे, और उसकी आत्मा—जिसे प्रभु ने छुटकारा दिलाया था—आनंदित होती थी (पद 23)।

हमें भी हमेशा अपने दिलों में उम्मीद के साथ प्रभु की स्तुति करनी चाहिए: "ओह, प्रभु यीशु की प्रेमपूर्ण कृपा, जिसने क्रूस की भारी पीड़ा सही और मेरी जगह पर प्राण दिए; हम उसकी स्तुति कैसे न करें, जब उसके बहुमूल्य लहू से हमें अनंत मृत्यु से छुटकारा मिला है?" (भजन 403, पद 1)। हमारी आत्माओं को भी प्रभु की महिमा और महानता की स्तुति करनी चाहिए। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम सब प्रभु के और करीब आएँ और अपनी आखिरी साँस तक लगातार उसकी स्तुति करते रहें।

दिन 36: हमें अपने दिनों को गिनना सिखाएं

[भजन संहिता 90 पर मनन]

इंग्रिड बर्गमैन नाम की एक अभिनेत्री थीं। वे *फॉर हूम द बेल टोल्स*, *द एथ गॉस्पेल* और *गैसलाइट* जैसी फिल्मों के लिए मशहूर हुईं, और उनकी एक्टिंग की हमेशा बहुत तारीफ़ हुई। मूल रूप से स्वीडन की रहने वाली बर्गमैन ने यूरोप में नाम कमाने के बाद हॉलीवुड का रुख किया, ताकि और भी बड़ी कामयाबी हासिल कर सकें। वहाँ उन्होंने कई फिल्मों में काम किया और दो अकादमी अवॉर्ड जीते। शायद ही उनके जैसी कोई और महान अभिनेत्री रही हो। लेकिन, अपनी कामयाबी के शिखर पर पहुँचने के बाद, उस महान अभिनेत्री ने कहा: "ओह हॉलीवुड! ओह सिल्वर स्क्रीन... कितना वीरान, कितना बेकार..." उन्होंने एक मशहूर फिल्म डायरेक्टर से शादी करने के लिए अपने पति और बेटी को छोड़ दिया, लेकिन जल्द ही उन्हें तलाक का सामना करना पड़ा। इसके बाद उन्होंने कई और पुरुषों से शादी की। फिर एक दिन, एक भयानक घटना हुई जिसमें उनकी बेटी ने अपने सौतेले पिता की हत्या कर दी। उनका एक लक्ष्य था। और उन्होंने वह लक्ष्य हासिल भी किया। लेकिन, उनके जीवन का कोई मकसद नहीं था। आखिर में, कैंसर की वजह से उनकी दुखद मौत हुई। यह एक ऐसा जीवन था जिसमें लक्ष्य तो थे, लेकिन कोई मकसद नहीं था। बहुत से लोगों के पास लक्ष्य तो होते हैं, लेकिन मकसद की कमी होती है। जहाँ लक्ष्य दिशा के बारे में बताते हैं, वहीं मकसद जीवन के अर्थ के बारे में पूछता है। "हम क्यों जीते हैं?" यह सवाल मकसद के बारे में है, जबकि "हमें कहाँ जाना चाहिए?" यह सवाल लक्ष्य के बारे में है। ऐसे कई मामले हैं जहाँ लोग लक्ष्य और मकसद के बीच भ्रमित हो जाते हैं, उन्हें एक ही समझकर भटकते रहते हैं, और अंत में अपनी कीमती और एकमात्र जिंदगी बर्बाद कर लेते हैं (होंग जियोंग-गिल)।

अभिनेत्री इंग्रिड बर्गमैन की तरह, जिन्होंने अपने लक्ष्य तो हासिल किए लेकिन खालीपन महसूस किया, कितने ही लोग ऐसा ही खालीपन महसूस कर रहे हैं? बाइबिल में इसका एक बड़ा उदाहरण राजा सुलैमान हैं, जो 'उपदेशक' (Ecclesiastes) की किताब के बुद्धिमान लेखक थे। उन्होंने खुद जीवन की पूरी निरर्थकता का

अनुभव किया था। हम इसे 'उपदेशक' 1:2 में साफ तौर पर देख सकते हैं: "व्यर्थ! व्यर्थ! सब कुछ पूरी तरह व्यर्थ है! सब कुछ बेकार है।" संक्षेप में, यह किताब हमें सिखाती है कि परमेश्वर के बिना जिया गया जीवन कितना खाली होता है। यह दिखाती है कि परमेश्वर से अलग किए गए इंसानी प्रयास बेकार हैं, और सच्चा, शाश्वत मूल्य और अर्थ केवल परमेश्वर और इंसान के बीच रिश्ते को बहाल करके ही पाया जा सकता है। परमेश्वर के बिना, बुद्धि बेकार है (1:12-6:9), सुख और भौतिक चीज़ें बेमतलब हैं (2:1-11), धन की खोज व्यर्थ है (2:12-23), जुल्म खोखला है (4:1-3), सारी मेहनत बेकार है (4:4-12), और राजनीति भी बेमतलब है (4:13-16)। राजा सुलैमान ने ये बातें सिर्फ़ ख्याली विचारों या थ्योरी के आधार पर नहीं कहीं; बल्कि, उन्होंने इन्हें अपने निजी अनुभवों से सीखे गए सबक के तौर पर बताया। आखिरकार, इस दुनिया में हमेशा रहने वाली और सच्ची खुशी नहीं मिल सकती; ज़िंदगी में असली संतुष्टि सिर्फ़ परमेश्वर के साथ रिश्ते में—या खुद परमेश्वर में—मिलती है।

तो फिर, हमें इस दुनिया में कैसे जीना चाहिए जो पूरी तरह से बेमतलब है? इसका जवाब पाने के लिए, हमें परमेश्वर से वही प्रार्थना करनी चाहिए जो भजनकार ने आज के हिस्से, भजन 90:12 में की थी: "हमें अपने दिनों को गिनना सिखा।" हम इस प्रार्थना को एक या दो नज़रिए से देख सकते हैं; दूसरे शब्दों में, "हमें अपने दिनों को गिनना सिखा" वाली प्रार्थना में दो अलग-अलग बातें शामिल हैं। पहली प्रार्थना है: "मुझे ज़िंदगी की व्यर्थता के बारे में सिखा।"

आज का हिस्सा, भजन 90:3-10, तीन कारण बताता है कि ज़िंदगी क्यों व्यर्थ है: (1) पहला, ज़िंदगी व्यर्थ है क्योंकि हमें मिट्टी में वापस जाना है। आयत 3 देखिए: "तू इंसानों को मिट्टी में वापस भेजता है और कहता है, 'हे इंसानों की संतानों, वापस लौट आओ।'" परमेश्वर ने आदम से कहा था, "क्योंकि तू मिट्टी है और मिट्टी में ही वापस जाएगा" (उत्पत्ति 3:19)। मिट्टी से आदम को बनाने के बाद, परमेश्वर ने कहा कि वह उसी में वापस जाएगा। सच तो यह है कि हमारी ज़िंदगी का अंत मिट्टी में वापस जाने से ही होना है; इसीलिए ज़िंदगी व्यर्थ है। बुद्धिमान राजा सुलैमान ने भी उपदेशक 3:19-21 में इस बारे में कहा है: "क्योंकि इंसानों और जानवरों का अंजाम एक ही है। जैसे एक मरता है, वैसे ही दूसरा भी मरता है; सच तो यह है कि दोनों में एक ही साँस है और इंसान को जानवर पर कोई बढ़त हासिल नहीं है, क्योंकि सब कुछ व्यर्थ है। सब एक ही जगह जाते हैं; सब मिट्टी से बने हैं और सब मिट्टी में ही मिल जाते हैं। कौन जानता है कि इंसान की आत्मा ऊपर जाती है और जानवर की आत्मा धरती के नीचे जाती है?" जैसा कि उस बुद्धिमान व्यक्ति ने कहा, क्योंकि हम सब मिट्टी से बने हैं और मिट्टी में ही मिल जाते

हैं, इसलिए जीवन व्यर्थ है। (2) दूसरी बात, जीवन व्यर्थ है क्योंकि यह बहुत कम समय का है। आज के वचन, भजन संहिता 90:4-6 को देखिए: "क्योंकि आपकी नज़र में हज़ार साल बीते हुए कल की तरह हैं, या रात के एक पहर की तरह। आप उन्हें बाढ़ की तरह बहा ले जाते हैं; वे नींद की तरह हैं, उस घास की तरह जो सुबह उगती है—सुबह वह फलती-फूलती और बढ़ती है, लेकिन शाम तक काट दी जाती है और मुरझा जाती है।" इंसानी जीवन एक छोटी सी नींद या सुबह उगने वाली घास की तरह है। यह एक ऐसा जीवन है जो तेज़ी से आता है और तेज़ी से चला जाता है—एक ऐसा जीवन जो निश्चित रूप से कम समय का और व्यर्थ है। जैसे बाढ़ लोगों को बहा ले जाती है और अचानक तबाही मचाती है, वैसे ही इंसानी जीवन का अचानक अंत हो जाता है। जीवन एक छोटी सी नींद के बाद जागने जैसा है। जैसा कि भजनकार कहते हैं, जीवन सुबह उगने वाली घास की तरह है; यह दिन की शुरुआत में खिलती और बढ़ती है, लेकिन शाम तक काट दी जाती है और मुरझा जाती है—एक ऐसा चक्र जो इंसानी अस्तित्व को क्षणभंगुर बनाता है। इसीलिए प्रेरित याकूब ने याकूब 4:14 में लिखा: "आप नहीं जानते कि कल क्या होगा। क्योंकि आपका जीवन क्या है? यह तो बस एक भाप की तरह है जो थोड़ी देर के लिए दिखाई देती है और फिर गायब हो जाती है।" खासकर जब इस घोषणा के नज़रिए से देखा जाए कि "आप अनादि काल से अनंत काल तक परमेश्वर हैं" (भजन संहिता 90:2), तो परमेश्वर की अनंतता की तुलना में हमारे जीवन की अवधि बहुत छोटी लगती है। सचमुच, इंसानी जीवन बहुत छोटा है। यह बस एक पल भर का है—एक ऐसा जीवन जो निश्चित रूप से क्षणभंगुर और व्यर्थ है। (3) आखिर में, तीसरी बात यह है कि ज़िंदगी बेकार है क्योंकि इसमें सिर्फ़ मेहनत और दुख ही होता है। आज के वचन, भजन 90:10 को देखिए: "हमारी ज़िंदगी के दिन सत्तर साल के होते हैं; और अगर मज़बूती की वजह से वे अस्सी साल के भी हों, तो भी उनमें सिर्फ़ मेहनत और दुख ही होता है; क्योंकि वे जल्द ही खत्म हो जाते हैं, और हम उड़ जाते हैं।" ज़िंदगी छोटी और बेकार है, क्योंकि हमारे साल सत्तर होते हैं—या अगर हम मज़बूत हों तो अस्सी—और तेज़ी से गुज़रने वाली ज़िंदगी सिर्फ़ मेहनत और दुख से भरी होती है। इसीलिए बुद्धिमान राजा सुलैमान ने उपदेशक 2:22-23 में कहा: "लोग धूप में (यानी इस दुनिया में) जो मेहनत और चिंता भरी कोशिशें करते हैं, उनसे उन्हें क्या मिलता है? उनके सारे दिन काम दुख और दर्द से भरा होता है; यहाँ तक कि रात में भी उनके मन को आराम नहीं मिलता। यह भी बेकार है।" ज़िंदगी भर की चिंता और मेहनत में बिताई गई ज़िंदगी, जिससे सिर्फ़ दुख मिलता है—दर्द और तकलीफ़ से भरी ज़िंदगी, जहाँ इंसान रात में भी बिना आराम किए मेहनत करता है—बेकार है।

आज के पाठ में भजनकार की तरह, हमें भी परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए और उनसे कहना चाहिए कि वे "हमें जीवन की व्यर्थता के बारे में सिखाएं।" खास तौर पर, हमें यह सीखना होगा कि जीवन व्यर्थ क्यों है; हमें इस सच्चाई को गहराई से समझने की ज़रूरत है। हमें गहराई से यह महसूस करना चाहिए कि जीवन क्षणभंगुर है क्योंकि हम अंत में मिट्टी में मिल जाते हैं, क्योंकि यह बहुत तेज़ी से बीत जाता है, और क्योंकि एक जीवन अक्सर केवल मेहनत और दुख से भरा होता है।

प्रार्थना का दूसरा बिंदु यह है: "हमें एक सार्थक जीवन जीना सिखाएं।"

अगर हम जीवन की व्यर्थता को पहचानते हैं, तो हमें निश्चित रूप से इसे बर्बाद नहीं करना चाहिए। दूसरे शब्दों में, हमें सोचना चाहिए कि इस छोटे से जीवन को सार्थक तरीके से कैसे जिया जाए। हम आज के पाठ से तीन सबक सीख सकते हैं: (1) पहला, एक सार्थक जीवन जीने के लिए, हमें परमेश्वर का भय मानना चाहिए। भजन संहिता 90:11 को देखें: "तेरे क्रोध की शक्ति को कौन जानता है? तेरे भय के अनुसार तेरे प्रकोप को कौन जानता है?" परमेश्वर का भय मानने के लिए, हमें बुद्धिमान हृदय की तलाश करनी चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे भजनकार ने किया था (पद 12)। क्यों? क्योंकि प्रभु का भय ही बुद्धि की शुरुआत है (नीतिवचन 1:7)। इस प्रकार, राजा सुलैमान—वह बुद्धिमान व्यक्ति जिसने कहा था "व्यर्थता ही व्यर्थता है"—ने उपदेशक 12:13 में निष्कर्ष निकाला: "अब सब कुछ सुना जा चुका है; बात का निष्कर्ष यह है: परमेश्वर का भय मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो, क्योंकि यही समस्त मानवजाति का कर्तव्य है।" सुलैमान कहते हैं कि मनुष्य का कर्तव्य परमेश्वर का भय मानना और उसकी आज्ञाओं का पालन करना है। इसलिए, एक सार्थक जीवन जीने के लिए, हमें—भजनकार की तरह—परमेश्वर से बुद्धिमान हृदय मांगना चाहिए और ऐसा जीवन जीना चाहिए जिसमें उनका भय हो। (2) दूसरा, एक सार्थक जीवन जीने के लिए, हमें प्रभु के अटूट प्रेम में संतुष्टि पानी चाहिए। आज के पाठ, भजन संहिता 90:14 को देखें: "सुबह हमें अपने अटूट प्रेम से तृप्त कर, ताकि हम खुशी के गीत गाएं और अपने सभी दिनों में आनंदित रहें।" हम सभी के लिए—जो अन्यथा अपना जीवन दुख और व्यर्थता में मेहनत करते हुए बिता सकते थे—परमेश्वर ने यीशु मसीह के माध्यम से सच्चा आनंद दिया है और देते रहते हैं। वह खुशी और आनंद सीधे प्रभु के कभी न खत्म होने वाले प्यार से मिलते हैं। दूसरे शब्दों में, जब हम प्रभु के प्यार से संतुष्ट होते हैं, तभी हम सच्ची खुशी का आनंद ले सकते हैं और अपना जीवन जी सकते हैं। इसके अलावा, जब हम उस प्यार से

ताकत पाकर परमेश्वर और अपने पड़ोसियों से प्यार करने की यीशु की आज्ञाओं का पालन करते हैं, तो हम सच में एक सार्थक जीवन जीते हैं। (3) तीसरी बात, एक सार्थक जीवन जीने के लिए, हमें प्रभु की महिमा के लिए जीना चाहिए। आज के वचन, भजन संहिता 90:16 को देखें: "तेरे काम तेरे सेवकों को और तेरा वैभव उनके बच्चों को दिखाई दे।" भजनकार ने परमेश्वर से विनती की कि वे इज़राइल के लोगों को उतने ही दिन खुशी दें, जितने दिन उन्होंने उन्हें दुख दिया था—यानी जितने साल उन्होंने मुश्किलों का सामना किया था (पद 15)। इस तरह, उसने प्रार्थना की कि प्रभु के काम और महिमा लोगों के सामने प्रकट हों। अक्सर मेहनत और दुख से भरे जीवन में, अगर हम परमेश्वर द्वारा दी गई खुशी का आनंद लेना चाहते हैं, तो हमारे जीवन में उनके कामों का अनुभव करना ज़रूरी है। सच तो यह है कि जब हमारे जीवन में परमेश्वर की महिमा प्रकट होती है, तो हम खुशी मनाए बिना नहीं रह सकते। जीवन अक्सर मेहनत और दुख का संघर्ष इसलिए बन जाता है क्योंकि हम परमेश्वर की महिमा के बजाय अपनी महिमा के लिए जीते हैं और सिर्फ अपनी शोहरत दिखाना चाहते हैं। सच में सार्थक जीवन जीने के लिए, हमें परमेश्वर की महिमा के लिए जीना चाहिए। जब परमेश्वर का काम हमारे जीवन में इस तरह से प्रकट होता है, तो हमारा जीवन सच में फायदेमंद और सार्थक बन जाता है। (4) आखिर में, चौथी बात यह है कि सार्थक जीवन जीने के लिए, हमें पूरे दिल से परमेश्वर की कृपा पानी चाहिए। आज के वचन, भजन संहिता 90:17 को देखें: "हमारे प्रभु परमेश्वर की कृपा हम पर बनी रहे; हमारे हाथों के काम को हमारे लिए स्थापित कर—हाँ, हमारे हाथों के काम को स्थापित कर।" मैंने एक बार 2 शमूएल 9:1 के आधार पर उस कृपा पर मनन किया जो दाऊद ने मेफीबोशेत—जोनाथन के बेटे, जो दोनों पैरों से लंगड़ा था—पर दिखाई थी। दाऊद, जोनाथन के साथ किए गए अपने वादे के प्रति वफादार रहते हुए, मेफीबोशेत से कहा, "मैं ज़रूर तेरे पिता जोनाथन की वजह से तुझ पर दया करूँगा" (पद 7)। उन्होंने मेफीबोशेत को वह सारी ज़मीन वापस दे दी जो उसके दादा शाऊल की थी (वचन 7) और उसके लिए राजा की मेज़ पर नियमित रूप से खाने का इंतज़ाम किया, ठीक राजा के अपने बेटों की तरह (वचन 7, 10, 11, 13)। इसके अलावा, उन्होंने ज़ीबा—शाऊल के नौकर—को, ज़ीबा के पंद्रह बेटों और बीस नौकरों के साथ, मेफीबोशेत की सेवा करने के लिए नियुक्त किया (वचन 10)। मेफीबोशेत ने क्या जवाब दिया? वचन 8 देखिए: "उसने झुककर कहा, 'आपका दास क्या है, कि आप मुझ जैसे मरे हुए कुत्ते पर ध्यान दें?'" जब मैंने इस अंश पर मनन किया, तो मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि मैं केवल धन्यवाद ही दे सकता हूँ—अनंत धन्यवाद—इस बात के लिए कि परमेश्वर ने मुझ पर उद्धार का अनुग्रह और यीशु मसीह में मिलने वाली हर आत्मिक आशीष दी, जबकि मैं ऐसे अनुग्रह के बिल्कुल भी योग्य नहीं था। इसीलिए मैं भजन

495 गाता हूँ, "मेरी आत्मा को विश्राम का स्थान मिल गया है" (कोरियाई शीर्षक: "मेरी आत्मा को अनुग्रह मिला है"): (वचन 1) "मेरी आत्मा को अनुग्रह मिला है, पाप का भारी बोझ उतर गया है; और अब, यह दुखों से भरी दुनिया स्वर्ग में बदल गई है।" (कोरस) "हल्लेलुयाह, आइए हम स्तुति करें! मेरे सभी पाप क्षमा हो गए हैं, और मैं प्रभु यीशु के साथ चलता हूँ; मैं जहाँ भी जाता हूँ, वह जगह स्वर्ग बन जाती है।" आज का संदेश तैयार करते समय, मुझे ऑनलाइन एक कविता मिली जिसे मैं आपके साथ साझा करना चाहता हूँ: "धारा बहते-बहते कहाँ जाती है? पत्ते गिरने से पहले अपनी सुंदरता दिखाते हैं, फिर भी जब वे चुपचाप नीचे गिरते हैं—एक-एक करके—तो बस खालीपन का एहसास रह जाता है। शानदार सुंदरता का दिखावा करने में बिताया गया समय भी बस एक पल भर का होता है; ठीक वैसे ही, हमारा जीवन—और अपनी जवानी का दिखावा करने में बिताया गया समय—पलक झपकते ही बीत जाता है। आखिरकार हम पतझड़ के आखिर में अकेले, मुरझाए हुए पत्तों की तरह हो जाते हैं, जब सूरज डूबता है और पीछे केवल व्यर्थता का एहसास रह जाता है। जीवन की मुश्किलों के बारे में रोने-बिलखने का समय बीत चुका है; गिरते पत्तों को देखते हुए और जीवन के आखिरी पलों का इंतज़ार करते हुए, मैं ऐसे मार्मिक दृश्य के बीच जीवन के असली अर्थ पर विचार कर रहा हूँ। सुंदर पतझड़ के पत्तों के रंगों की तरह, जीवन की गूँज भी चुपचाप मिट जाती है, बिना कोई निशान छोड़े। आह, इस धरती पर जीवन का क्या अर्थ था? हमारा जीवन, सुंदर पतझड़ के पत्तों के रंगों में रंगकर, ऐसी यादों से भर गया है जो हमारे दिलों में खट्टी-मीठी टीस जगाती हैं।" हमें इस दुनिया में जीवन की व्यर्थता को गहराई से समझना चाहिए, जो अक्सर केवल दिखावा और घमंड ही होता है। इसलिए, हमें धर्मग्रंथों से सीखना चाहिए—और उसे अमल में लाना चाहिए—कि अपने इस एकमात्र जीवन में एक सार्थक जीवन कैसे जिया जाए। आइए हम सब परमेश्वर के भय में जिँ और प्रभु की प्रेमपूर्ण दया में संतोष पाएँ। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम सब प्रभु की महिमा के लिए जिँ और सच्चे मन से उनकी कृपा की खोज करें।

दिन 37: परछाई की तरह बीता जीवन

[उपदेशक 6:7-12 पर मनन]

कल, मंगलवार को, मैं हॉलीवुड का हॉस्पिटल गया। मैं अपने चर्च के डीकन किम सियोंग-ग्वान से मिलने गया था। उन्हें पिछले शुक्रवार को भर्ती कराया गया था, शायद फेफड़ों की समस्या के कारण, और ऐसा लग रहा था कि अस्पताल के कर्मचारी कारण का पता लगाने और इलाज करने के लिए टेस्ट कर रहे थे। जब मैं कल सुबह वहाँ पहुँचा, तो डीकन ने मुझे बताया कि 85 साल जीने के बाद, वे इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि सब कुछ झूठा है। इसीलिए मुझे उपदेशक में राजा सुलैमान के शब्द याद आए: "व्यर्थ! व्यर्थ! पूरी तरह व्यर्थ! सब कुछ व्यर्थ है" (1:2)। एक ऐसे बुजुर्ग की बात सुनकर जिन्होंने पूरा जीवन जिया था, मैं फिर से सोचने लगा कि हमें यह जीवन कैसे जीना चाहिए—एक ऐसा जीवन जो पूरी तरह व्यर्थ लग सकता है।

आज के अंश, उपदेशक 6:12 में, बुद्धिमान राजा सुलैमान "परछाई की तरह" बिताए गए जीवन की बात करते हैं। तो, परछाई की तरह जीवन बिताने का क्या मतलब है? मैं आपको इस पर विचार करने के लिए आमंत्रित करता हूँ। जब आप "परछाई" के बारे में सोचते हैं तो क्या मन में आता है? मेरे मन में सबसे पहली बात यह आती है कि परछाई को पकड़ा या थामा नहीं जा सकता। एक और बात यह है कि परछाई दिखाई तो देती है लेकिन टिकती नहीं; वह पल भर में गायब हो जाती है। राजा सुलैमान द्वारा जीवन को परछाई बताने का मतलब कई तरह से निकाला जा सकता है। पहला, परछाई की तरह बिताया गया जीवन तेज़ी से बीतने वाले जीवन को दर्शाता है। अय्यूब 14:1-2 को देखें: "स्त्री से जन्मा मनुष्य थोड़े दिनों का और दुखों से भरा होता है। वह फूल की तरह खिलता है और मुरझा जाता है; एक क्षणभंगुर परछाई की तरह, वह टिकता नहीं है।" जैसा कि अय्यूब कहते हैं, इस दुनिया में इंसानी जीवन छोटा और दुखों से भरा होता है; यह परछाई की तरह तेज़ी से बीत जाता है और टिकता नहीं है। हमने भजन संहिता 90:10 में इस सच्चाई पर पहले ही मनन किया है: "हमारे दिन सत्तर साल, या अस्सी साल के हो सकते हैं, अगर हमारी ताकत बनी रहे; फिर भी उनमें से सबसे अच्छे दिन भी दुख

और शोक से भरे होते हैं, क्योंकि वे जल्दी बीत जाते हैं, और हम उड़ जाते हैं।" सत्तर या अस्सी साल की ज़िंदगी—जिसमें बस मेहनत और दुख ही होता है—बहुत तेज़ी से बीत जाती है... भजनकार मूसा ने इसे उड़ जाने जैसा बताया है। दूसरी बात, परछाई की तरह गुज़री ज़िंदगी का मतलब है "बेकार ज़िंदगी के सारे दिन।" दूसरे शब्दों में, परछाई की तरह गुज़री ज़िंदगी का मतलब है इस दुनिया के छोटे और बेकार—या बेमतलब—दिन। आज का वचन देखिए, उपदेशक 6:12: "...परछाई की तरह गुज़री ज़िंदगी, बेकार ज़िंदगी के सारे दिन..." अगर हम उपदेशक की उन आयतों को देखें जिन पर हमने पहले मनन किया है, तो हम देखते हैं कि बुद्धिमान राजा सुलैमान बार-बार चीज़ों को "व्यर्थ" (1:2; 2:15, 19, 21, 23; 3:19; 4:7, 8; 5:10) और "हवा के पीछे भागने" (1:14, 17; 2:11, 17, 26; 4:4, 16) जैसा बताते हैं, और पूछते हैं "क्या फ़ायदा है?" या चीज़ों को "बेकार" (1:3; 2:11; 4:8; 5:11, 16) कहते हैं। ऐसी ज़िंदगी बिताना—जो परछाई की तरह तेज़ी से बीत जाती है—और बेकार कामों में लगे रहना जिनसे कोई फ़ायदा न हो, एक व्यर्थ ज़िंदगी जीना है। बेशक, यह बात उन लोगों पर लागू नहीं होती जिनसे परमेश्वर खुश होता है। कारण यह है कि जो लोग परमेश्वर को खुश करते हैं, उनकी ज़िंदगी उसकी नज़र में फ़ायदेमंद और अर्थपूर्ण होती है, चाहे धरती पर उनका समय कितना भी छोटा और क्षणभंगुर क्यों न हो। बल्कि, यह आयत उस पापी के बारे में है जिसका ज़िक्र उपदेशक 6:1-6 में किया गया है, जिस पर हमने पिछले हफ़्ते बुधवार की प्रार्थना सभा में मनन किया था। यह पापी वह व्यक्ति है जिसकी हालत मरे हुए पैदा हुए बच्चे से भी बुरी है। कौन है यह व्यक्ति जिसकी हालत मरे हुए पैदा हुए बच्चे से भी बुरी है? यह वह व्यक्ति है जिसे परमेश्वर से आशीर्ष—जैसे धन-दौलत, सम्मान, बच्चे और लंबी उम्र—मिलने के बावजूद, कभी उनका आनंद लेने का मौका नहीं मिलता और आखिर में, उसे ठीक से दफ़नाया भी नहीं जाता। राजा सुलैमान कहते हैं कि ऐसे पापी की ज़िंदगी परछाई की तरह होती है; वे धरती पर अपना जीवन बेकार की चीज़ों में बिताते हैं—छोटा, बेमतलब और व्यर्थ।

तो फिर, परछाई की तरह बीतने वाला जीवन—जो इतनी तेज़ी से गुज़र जाता है—उसे व्यर्थ क्यों माना जाता है? वह बेमतलब क्यों है? इसका कारण क्या है? सबसे पहले, परछाई जैसा जीवन... जीवन व्यर्थ और बेमतलब है क्योंकि इसमें संतुष्टि नहीं होती। बुद्धिमान राजा सुलैमान कहते हैं, "सब बातें थका देने वाली हैं; मनुष्य उन्हें बयान नहीं कर सकता। आँखें देखने से नहीं भरतीं, और न ही कान सुनने से तृप्त होते हैं" (सभोपदेशक 1:8)। इसका क्या मतलब है? इसका मतलब है कि आँखें और कान कभी संतुष्ट नहीं होते, चाहे वे कुछ भी देखें या सुनें। दूसरे

शब्दों में, इंसान के लालच की कोई सीमा नहीं होती। इसलिए, राजा सुलैमान इस दुनिया को व्यर्थ बताते हैं क्योंकि इंसान का लालच कभी संतुष्ट नहीं हो सकता। वे आज के वचन, सभोपदेशक 6:7 में भी यही बात कहते हैं: "इंसान की सारी मेहनत उसके पेट के लिए होती है, फिर भी भूख नहीं मिटती।" यहाँ सुलैमान जिस "इंसान" की बात कर रहे हैं, वह वही व्यक्ति है जिसका ज़िक्र आयत 3 में किया गया है—एक ऐसा व्यक्ति जिसे मरे हुए पैदा हुए बच्चे से भी ज़्यादा बदकिस्मत माना जाता है क्योंकि वह अपनी आत्मा के लिए संतुष्टि नहीं पा पाता (पार्क युन-सन)। चाहे यह व्यक्ति अपने पेट के लिए कितनी भी कड़ी मेहनत क्यों न करे, उसकी भूख नहीं मिटती; सुलैमान कह रहे हैं कि वह अपनी आत्मा के लिए संतुष्टि पाने में नाकाम रहा है। वह अपनी आत्मा के लिए संतुष्टि क्यों नहीं पा पाता? ऐसा इसलिए है क्योंकि, जहाँ हमारी आत्माओं को सच्ची संतुष्टि केवल परमेश्वर से ही मिल सकती है, वहीं उसने परमेश्वर से मुँह मोड़ लिया और अपनी शारीरिक भूख को मिटाने की कोशिश की। जिस व्यक्ति की आत्मा में ऐसी संतुष्टि नहीं होती, उसे जीवन में कोई सच्चा सुख नहीं मिलता; वह बस मेहनत करता रहता है और आखिर में एक व्यर्थ और बेमतलब का जीवन जीकर मर जाता है। दूसरी बात, परछाई की तरह तेज़ी से बीतने वाला जीवन व्यर्थ और बेमतलब है क्योंकि इंसान उद्धार के रास्ते पर नहीं चल पाता। आज के वचन, सभोपदेशक 6:8 पर गौर करें: "बुद्धिमान को मूर्ख पर क्या फ़ायदा है? जीवित लोगों के बीच कैसा व्यवहार करना है, यह जानने से गरीब को क्या लाभ होता है?" राजा सुलैमान यहाँ यह कह रहे हैं कि दुनिया के मामलों में, बुद्धिमान और मूर्ख में कोई फ़र्क नहीं है अगर उन्हें अपनी आत्मा का उद्धार नहीं मिला है (पार्क युन-सन)। कोई व्यक्ति दुनिया के मामलों को चाहे कितनी भी समझदारी और विनम्रता से क्यों न संभाले, मुख्य बात यही है: परमेश्वर को जाने बिना और आत्मा की मुक्ति के बिना, ऐसे जीवन का कोई वास्तविक लाभ नहीं है। उपदेशक 2:12-17 में, जिस पर हमने पहले ही मनन किया है, सुलैमान ने बुद्धिमान और मूर्ख लोगों के बारे में चर्चा की; वहाँ मुख्य सीख यह थी: "क्योंकि बुद्धिमान को भी, मूर्ख की तरह, लंबे समय तक याद नहीं रखा जाएगा; आने वाले दिनों में, दोनों ही भुला दिए जाएँगे। मूर्ख की तरह, बुद्धिमान को भी मरना ही है! इसलिए मुझे जीवन से घृणा हो गई, क्योंकि सूरज के नीचे जो काम किया जाता है, वह मेरे लिए दुखद था। यह सब व्यर्थ है, हवा के पीछे भागने जैसा है" (पद 16-17)। बुद्धिमान और मूर्ख दोनों को ही मृत्यु के मार्ग पर चलना है; असली मुद्दा यह है कि मृत्यु के *बाद* क्या होता है। मायने यह रखता है कि क्या आत्मा को अनंत जीवन मिलता है या वह अनंत विनाश का सामना करती है। भले ही कोई व्यक्ति बुद्धिमान हो और पृथ्वी पर मामलों को विनम्रता और कुशलता से संभालता हो, लेकिन अगर उसने मुक्ति के मार्ग पर कदम नहीं रखा है, तो उसकी आत्मा का क्या होगा?

परछाई की तरह तेज़ी से बीत जाने वाले जीवन का कोई अर्थ नहीं है यदि कोई यीशु पर विश्वास नहीं करता और मुक्ति के मार्ग पर नहीं चलता।

तो, हमें कैसे जीना चाहिए ताकि हमारा क्षणभंगुर, परछाई जैसा जीवन परमेश्वर की दृष्टि में सार्थक और लाभकारी बन जाए? दूसरे शब्दों में, पृथ्वी पर हमारे थोड़े से समय के दौरान ऐसा जीवन कैसा होता है जो परमेश्वर के लिए वास्तव में लाभकारी और सार्थक हो?

सबसे पहले, ऐसा जीवन जो परमेश्वर के लिए लाभकारी और सार्थक हो—भले ही वह क्षणभंगुर हो—वह है जो केवल प्रभु में ही संतुष्टि पाता है। जीवन का सच्चा लाभ और अर्थ केवल... इसका अर्थ है यीशु में विश्वास के माध्यम से मुक्ति के मार्ग पर चलना और केवल उसी में संतुष्ट जीवन जीना। हमें लालच को त्यागकर संतोष के साथ जीना चाहिए और केवल यीशु में ही तृप्ति पानी चाहिए। जब हम एक ऐसे जीवन का सफर तय करते हैं जो क्षणभंगुर है—जैसे गुज़रती हुई परछाई—तो यीशु ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं जो हमारी आत्माओं को संतुष्ट कर सकते हैं। केवल उन्हीं में हमारी आत्माओं को सच्ची तृप्ति देने की शक्ति है; क्योंकि हमारी आत्माएँ अनंत काल के लिए तरसती हैं, इसलिए केवल अनंत यीशु ही उन्हें संतुष्ट कर सकते हैं। प्रेरित पौलुस की तरह, हमें हर परिस्थिति में—चाहे भरपूर हो या कमी हो—संतोषी रहना सीखना चाहिए (फिलिप्पियों 4:11)। इसलिए, हमें केवल यीशु में संतुष्ट होकर जीना चाहिए, उनके वचन का पालन करना चाहिए और अनंत चीज़ों की खोज करनी चाहिए। इस नश्वर सांसारिक जीवन में सचमुच सार्थक और ईश्वर को प्रसन्न करने वाला जीवन जीने का यही तरीका है।

दूसरी बात, परछाई की तरह तेज़ी से गुज़रने वाली ज़िंदगी में, परमेश्वर की नज़र में वही ज़िंदगी फ़ायदेमंद और सार्थक होती है जिसमें हम प्रभु का काम विनम्रता और समझदारी से करते हैं। आज का वचन देखिए, उपदेशक 6:8: “बुद्धिमान को मूर्ख पर क्या लाभ है? और जीवितों के सामने कैसा व्यवहार करना है, यह जानने से कंगाल को क्या फ़ायदा?” अपनी छोटी सी ज़िंदगी में परमेश्वर के लिए फ़ायदेमंद और सार्थक जीवन जीने के लिए, हमें प्रभु का काम विनम्रता और समझदारी से करना चाहिए। कल सुबह की प्रार्थना सभा में, हमने 1 शमूएल 15:17 पर विचार किया—कि कैसे शाऊल, जो कभी खुद को मामूली समझता था, बाद में घमंडी हो गया; उसने अपने लिए एक स्मारक बनाया और परमेश्वर के वचन की आज्ञा न मानकर पाप करने के बाद भी दूसरों से अपनी

बड़ाई करवाना चाहा। ऐसा करते हुए, मैंने अपने पुराने रूप की—जो कभी खुद को छोटा समझता था—तुलना अपने वर्तमान रूप से की, जो कभी-कभी खुद की बड़ाई चाहता है। ऐसा करते समय, पवित्र आत्मा ने मुझे अपने पाप पर दुख करने और उसे मानकर पश्चाताप करने के लिए प्रेरित किया। मैं बहुत दुखी हो गया। पवित्र आत्मा ने मुझे अपनी बड़ाई चाहने की घमंडी इच्छा को क्रूस के चरणों में छोड़ने के लिए प्रेरित किया—ताकि मैं उन चीज़ों को छोड़ सकूँ जिन्हें छोड़ना ज़रूरी था। उन्होंने मुझे ऐसी कृपा क्यों दी? इसलिए क्योंकि प्रभु चाहते हैं कि मैं विनम्रता के साथ उनकी देह—यानी कलीसिया—की सेवा करूँ। वे चाहते हैं कि मैं अपनी समझ पर भरोसा करने के बजाय, उनकी विनम्रता का अनुकरण करूँ और उनकी दी हुई समझदारी पर भरोसा करके सेवा करूँ। आपके बारे में क्या? हमें विनम्रता और उनकी दी हुई समझदारी के साथ प्रभु की सेवा करनी चाहिए। विनम्र और समझदारी भरी सेवा वाली ज़िंदगी ही परमेश्वर की नज़र में सचमुच फ़ायदेमंद और सार्थक ज़िंदगी होती है। तीसरी बात, परछाई की तरह गुज़रने वाली ज़िंदगी में, परमेश्वर की नज़र में वही ज़िंदगी फ़ायदेमंद और सार्थक होती है जो वर्तमान की अच्छी चीज़ों का आनंद लेती है। आज का वचन देखिए, उपदेशक 6:9: “आँखों से देखना, इच्छाओं के पीछे भटकने से बेहतर है; यह भी व्यर्थ है और हवा को पकड़ने जैसा है।” एक विद्वान ने इस वचन का अनुवाद इस प्रकार किया है: “दूसरी अच्छी चीज़ों के बारे में सोचने के बजाय वर्तमान की अच्छी चीज़ों का आनंद लेना बेहतर है।” दूसरे शब्दों में, राजा सुलैमान हमें वर्तमान का आनंद लेने और परमेश्वर का धन्यवाद करने के लिए कह रहे हैं (पार्क युन-सन)। राजा सुलैमान ने इस दुनिया में जो दुखद बात देखी, वह यह है कि किसी व्यक्ति को परमेश्वर से भौतिक आशीषें, बच्चों की आशीष और लंबी उम्र मिल सकती है, फिर भी वह वास्तव में उनका आनंद लेने में असफल रहता है (सभोपदेशक 6:1-6)। ऐसे व्यक्ति को अपनी आत्मा में कोई सच्ची संतुष्टि या खुशी नहीं मिलती। आपके बारे में क्या? क्या आपको अपनी आत्मा में संतुष्टि मिलती है जब आप उन सभी आत्मिक आशीषों का आनंद लेते हैं जो परमेश्वर ने आपको यीशु मसीह में दी हैं? हमें अपने वर्तमान जीवन में उन आशीषों का आनंद लेना चाहिए जो परमेश्वर ने पहले ही यीशु मसीह के द्वारा हम पर कृपापूर्वक दी हैं। उदाहरण के लिए, जब हम परमेश्वर की संतान के रूप में अपनाए जाने की आत्मिक आशीष पर विचार करते हैं, तो हमें इस आशीष का विनम्रता और बुद्धिमानी से आनंद लेते हुए और अपनी आत्मा में खुशी महसूस करते हुए जीना चाहिए। ऐसा करने के लिए, हमें पिता परमेश्वर को खोजना होगा। हमें प्रार्थना करनी चाहिए और पिता परमेश्वर को “अब्बा, पिता” कहकर पुकारना चाहिए। ऐसा करते समय, हमें पिता परमेश्वर की आवाज़ सुननी चाहिए और उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिए। इस प्रकार, हमें पिता परमेश्वर

के हृदय को जानना चाहिए। जब हम ऐसा करते हैं, तो हमें उस खुशी और आनंद का आनंद लेना चाहिए जो प्रभु हमें देते हैं। ऐसा आनंदमय जीवन ही परमेश्वर की दृष्टि में लाभदायक है। चौथी बात, परछाई की तरह बीतने वाले जीवन के संबंध में, परमेश्वर की नज़र में लाभदायक और अर्थपूर्ण जीवन वह है जो सच्चाई की आज्ञाकारिता में और परमेश्वर के भय में जिया जाए। आज के वचन, सभोपदेशक 6:10 पर विचार करें: "जो कुछ भी अस्तित्व में है उसका नाम पहले ही रखा जा चुका है, और मनुष्य क्या है यह पहले ही जाना जा चुका है; कोई भी उससे बहस नहीं कर सकता जो उससे अधिक शक्तिशाली है।" इस वचन का अर्थ है कि चूँकि मनुष्य की स्थिति और सीमाएँ परमेश्वर के सामने पहले से ही तय हैं, इसलिए उसकी भूमिका केवल परमेश्वर से डरना और अपने दैनिक जीवन में कदम-दर-कदम सच्चाई का पालन करना है (पार्क युन-सन)। जो लोग व्यर्थ और अर्थहीन जीवन जीते हैं, वे परमेश्वर से नहीं डरते। नतीजतन, वे परमेश्वर से बहस करते हैं और अपनी उचित सीमाओं से बाहर जाकर काम करते हैं। वे उस परमेश्वर की अनदेखी करते हैं जिसने उनके अस्तित्व और स्थिति को निर्धारित किया है, और लापरवाही से वह सब कुछ बनने की कोशिश करते हैं जो वे चाहते हैं। राजा सुलैमान इसे व्यर्थता कहते हैं (वचन 11)। वे आगे कहते हैं कि परमेश्वर के बिना, परछाई की तरह बीतने वाला जीवन पूरी तरह बेकार है (वचन 12) (पार्क युन-सन)। हालाँकि, परमेश्वर की नज़र में वही जीवन फ़ायदेमंद और सार्थक है जो उनसे डरता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि जो लोग परमेश्वर से डरते हैं, वे उनके वचन का पालन करते हुए जीते हैं। यही 'उपदेशक' (Ecclesiastes) की किताब का निष्कर्ष है: "अब सब कुछ सुना जा चुका है; बात का निचोड़ यह है: परमेश्वर का भय मानो और उसकी आज्ञाओं का पालन करो, क्योंकि सभी इंसानों का यही फ़र्ज़ है" (12:13)।

जब मैंने आज के अंश—उपदेशक 6:7-12—पर मनन किया, तो मैंने खुद से यह सवाल पूछा: "मैं अपनी बची हुई ज़िंदगी कैसे बिताऊँ, जो परछाई की तरह बीत जाती है?" समय परछाई की तरह तेज़ी से गुज़र जाता है, फिर भी मुझे ऐसा जीवन जीना है जो परमेश्वर के लिए फ़ायदेमंद और सार्थक हो... मेरी इच्छा है कि मैं केवल प्रभु के साथ संतुष्ट होकर जीऊँ। मैं नम्रता और समझदारी के साथ उस काम को करते हुए भी जीना चाहता हूँ जो प्रभु ने मुझे सौंपा है। इसके अलावा, अपनी मौजूदा परिस्थितियों के बीच, मैं उन सभी आत्मिक आशीषों को संजोकर और उनका आनंद लेते हुए जीना चाहता हूँ जो परमेश्वर ने मुझे यीशु मसीह में पहले ही दी हैं। ऐसा करते हुए, मैं परमेश्वर के वचन का पालन करते हुए—यानी परमेश्वर का भय मानते हुए—जीना चाहता हूँ, ठीक वैसे ही जैसा राजा सुलैमान ने 'उपदेशक' की किताब में निष्कर्ष निकाला था।

दिन 38: ईश्वर जो मृत्यु तक हमारा मार्गदर्शन करते हैं

[भजन संहिता 48 पर ध्यान]

जब आप अतीत को याद करते हैं, तो आपने किन संकटों का सामना किया? क्या आपको वे पल याद हैं जो आज भी आपके दिल में बसे हैं, और क्या आपको याद है कि उन संकटों के बीच भी आपने ईश्वर के मार्गदर्शन और उद्धार की कृपा का अनुभव किया? आज, मैं एक नर्सिंग होम गई और हमारी चर्च की दादी जंग यूल-सु के साथ समय बिताया। उनसे बातचीत करते हुए, मैंने संक्षेप में अपने पहले बच्चे, जू-यंग के बारे में बताया, जो अब मेरी गोद में सो रहा है। बाद में मुझे एहसास हुआ कि माता-पिता के रूप में अपने लालच के कारण, उसकी स्थिति को न समझ पाने की वजह से, मैंने शायद उसकी बीमारी के दौरान उसे और अधिक पीड़ा पहुँचाई। दादी जंग से उसके बारे में बात करते हुए, मुझे एहसास हुआ कि जीवन में, प्रक्रिया और विशेष रूप से अंत, शुरुआत से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। जब हम अतीत के संकटों के बीच ईश्वर की कृपा को याद करते हैं, तो हम प्रभु द्वारा दी गई कृपा से वर्तमान संकटों पर भी विजय प्राप्त कर सकते हैं।

हम अक्सर जिन भजनों का गायन करते हैं, उनमें से एक है "हे प्रभु, यह आपका हो" (भजन 431)। इस भजन की पृष्ठभूमि इस प्रकार है: जब तीस वर्षों के धार्मिक युद्धों से पूरा जर्मनी खंडहर में तब्दील हो गया था, तब एक पादरी थे जो आँसू बहाते हुए प्रार्थना करते थे। वे सताए हुए विश्वासियों के घरों में जाकर उन्हें सांत्वना देते थे। स्थिति और भी बदतर हो गई जब ब्लैक डेथ की महामारी पूरे जर्मनी में फैल गई और 100 लाख से अधिक लोगों की जान ले ली। कहा जाता है कि जर्मनी एक "विशाल कब्रिस्तान" जैसा हो गया था। एक दिन, जब यह पादरी और उनकी पत्नी एक गंभीर रूप से बीमार विश्वासी के घर से लौटे, तो उन्होंने एक भयावह दृश्य देखा। चर्च और घर जलकर राख हो गए थे। उनके दो प्यारे बेटे एक-दूसरे को गले लगाए मृत पाए गए। कहा जाता है कि दंपति अपने बेटे के शव को थामे रोते हुए चुपचाप प्रार्थना कर रहे थे: "हे मेरे प्रभु, आपकी

इच्छा पूरी हो; मैं अपना पूरा शरीर और आत्मा आपको समर्पित करता हूँ; इस संसार के सुख-दुखों में मेरा मार्गदर्शन कीजिए; मेरी रक्षा कीजिए और आपकी इच्छा पूरी हो।" ये व्यक्ति पादरी बेंजामिन शमोल्क थे। उन्होंने जो प्रार्थना की थी, उसे बाद में संगीतबद्ध किया गया और वह भजन संख्या 431, "हे प्रभु, तेरी इच्छा पूरी हो," बन गया। सच्चा विश्वास दुख और परीक्षाओं के बीच भी परमेश्वर की आज्ञा मानने में है।

आज के पाठ, भजन संहिता 48 पर मनन करते समय, मैंने विशेष रूप से आयत 14 पर ध्यान केंद्रित किया: "क्योंकि यह परमेश्वर सदा-सर्वदा हमारा परमेश्वर है; वह अंत तक हमारा मार्गदर्शन करेगा।" इसी आयत पर केंद्रित—"वह परमेश्वर जो मृत्यु तक हमारा मार्गदर्शन करता है" शीर्षक के अंतर्गत—मैं "इस परमेश्वर" के चार पहलुओं पर विचार करना चाहता हूँ और अपनी जिम्मेदारियों के बारे में चार संबंधित शिक्षाएँ लेना चाहता हूँ।

पहला, जो परमेश्वर मृत्यु तक हमारा मार्गदर्शन करता है, वह एक महान और महिमामयी परमेश्वर है।

भजन संहिता 48:1 को देखें: "प्रभु महान है, और हमारे परमेश्वर के नगर में, उसके पवित्र पर्वत पर, स्तुति के अत्यंत योग्य है।" जो परमेश्वर मृत्यु तक हमारा मार्गदर्शन करता है, वह एक सामर्थी परमेश्वर है। वह "महान राजा" है (आयत 2)। क्योंकि वह महान है, जिस तरह से हमारा महिमामयी परमेश्वर हमारा उद्धार करता है, वह भी शानदार और भव्य है। फिर भी, हम अक्सर उद्धार के परमेश्वर के महान तरीके को बहुत सीमित रूप में देखते हैं। दूसरे शब्दों में, क्योंकि हम पूरी तस्वीर नहीं देख पाते, इसलिए हमारे दिल अक्सर हमारी अपनी पहले से बनी धारणाओं और अपेक्षाओं से भरे होते हैं कि परमेश्वर को हमें कैसे बचाना चाहिए। नतीजतन, जब परमेश्वर उस तरह से उद्धार नहीं करता जैसा हम कल्पना करते हैं या उम्मीद करते हैं, तो हम कभी-कभी शिकायत करते हैं या निराशा में डूब जाते हैं। ठीक यही इज़राइलियों ने मिस्र से बाहर निकलने (एक्सोडस) के दौरान किया था; उन्होंने परमेश्वर और मूसा के खिलाफ बड़बड़ाहट की। फिर भी, वे प्रभु की इच्छा—उसके उद्धार के तरीके—को समझने में विफल रहे कि उसने उन्हें चालीस वर्षों तक जंगल में क्यों भटकने दिया। उसका उद्देश्य उन्हें विनम्र बनाना और परखना था, और अंततः उन्हें आशीष देना था (व्यवस्थाविवरण 8:16)।

एक बार उत्पत्ति (जेनेसिस) में यूसुफ की कहानी पर मनन करते समय मैं परमेश्वर के उद्धार के तरीके पर आश्चर्यचकित रह गया था। मुझे याद है कि मैंने इस बात पर विचार किया था कि परमेश्वर ने यूसुफ को कैसे बचाया—उसे तुरंत मुसीबत से निकालकर नहीं, बल्कि उसे एक कठिन परिस्थिति से दूसरी कठिन परिस्थिति में ले जाकर—जब तक कि तेरह साल बाद, तीस साल की उम्र में वह अंततः मिस्र का प्रधानमंत्री नहीं बन गया। परमेश्वर ने उसे अपने ही तरीके से बचाया: उसे मौत के मुँह से तो बचाया, लेकिन फिर मिस्र में पोतीफ़र के यहाँ गुलाम के तौर पर बिकने दिया, और बाद में पोतीफ़र की पत्नी के बहकावे में फँसने के कारण उसे जेल भी जाना पड़ा... यह छुटकारा पाने का एक ऐसा सफ़र था जो एक मुश्किल से दूसरी मुश्किल की ओर बढ़ता गया। फिर भी, यूसुफ़ को मिस्र का प्रधानमंत्री बनाकर, परमेश्वर ने आखिरकार इस्राएल देश को बचाया। अपनी महान योजना में, परमेश्वर का मकसद सिर्फ़ यूसुफ़ को बचाना नहीं था; बल्कि, उन्होंने उसे एक के बाद एक कई आजमाइशों से गुज़ारा ताकि छुटकारा मिल सके—और आखिरकार पूरे इस्राएली देश को बचाया जा सके। परमेश्वर के बचाने का तरीका कितना शानदार है!

आइए हम इस बात को याद रखें: हमारा महान परमेश्वर ही वह है जो हमें अपनी महान उद्धार की योजना के अनुसार बचाता और राह दिखाता है। चाहे वह हमें जंगल में ले जाए या 'आकोर की घाटी' से गुज़ारे, हमें कभी नहीं भूलना चाहिए कि आखिरकार वह हमें जो देना चाहता है, वह एक आशीष है।

दूसरी बात, जो परमेश्वर हमारी ज़िंदगी के आखिर तक हमारी अगुवाई करता है, वही हमारा शरणस्थान भी है। आज के वचन, भजन संहिता 48:3 को देखिए: "परमेश्वर उसके गढ़ों में शरणस्थान के रूप में जाना जाता है।" जो परमेश्वर हमारी मौत के दिन तक हमारी अगुवाई करता है, वही हमारा शरणस्थान है। जैसे परमेश्वर का पवित्र नगर ऊँची जगह पर खूबसूरती से बसा है (वचन 2), वैसे ही जो परमेश्वर हमारा शरणस्थान है, वह हमारे लिए एक मज़बूत किले का काम करता है। इसके अलावा, यह परमेश्वर—हमारा मज़बूत किला और शरणस्थान—हमारी रक्षा करता है। इसीलिए दाऊद ने भजन संहिता 23:4 में कहा: "भले ही मैं मौत की छाया की घाटी से गुज़रूँ, मैं किसी बुराई से नहीं डरूँगा, क्योंकि तू मेरे साथ है; तेरी लाठी और तेरी छड़ी मुझे दिलासा देती हैं।" हमें मौत की छाया की घाटी से गुज़रते समय भी डरने की ज़रूरत नहीं है क्योंकि परमेश्वर, जो हमारा शरणस्थान है, हमारी रक्षा करता है और हमें दिलासा देता है।

इस परमेश्वर ने खुद को हमारे लिए एक शरणस्थान के रूप में प्रकट किया है (पद 3)। बाइबिल के इतिहास में, हमारे परमेश्वर बार-बार अपने लोगों को बचाने वाले उद्धारकर्ता के रूप में सामने आए हैं। पुराने नियम में इस्राएल के लोगों के उद्धार के इतिहास पर विचार करें; क्या परमेश्वर ने उन्हें केवल एक या दो बार बचाया था? जब हम "यीशु" नाम के अर्थ—"परमेश्वर ही उद्धार है"—पर चिंतन करते हैं, तो हमें एहसास होता है कि हमारे प्रभु ऐसे परमेश्वर हैं जिन्हें हमें बचाने में खुशी मिलती है। यही परमेश्वर हमारी शरण है। इसलिए, हमें उस परमेश्वर के पास जाना चाहिए जो खुद को हमारी शरण के रूप में प्रकट करता है। हमें दाऊद की तरह प्रार्थना करनी चाहिए: "मेरी ओर कान लगा, मुझे शीघ्र छुड़ा; मेरे लिए शरण की चट्टान और रक्षा का गढ़ बन जा। क्योंकि तू मेरी चट्टान और मेरा गढ़ है; इसलिए, अपने नाम के लिए, मेरी अगुवाई कर और मुझे राह दिखा" (भजन संहिता 31:2-3)।

तीसरी बात, जो परमेश्वर हमारी मृत्यु के दिन तक हमारी अगुवाई करता है, वही हमें विजय भी दिलाता है।

आज के वचन, भजन संहिता 48:4-5 को देखें: "क्योंकि देखो, राजा इकट्ठे हुए, वे सब मिलकर आगे बढ़े। उन्होंने उसे देखा और चकित रह गए; वे घबरा गए और जल्दी से भाग खड़े हुए।" यह अंश बताता है कि कैसे विदेशी राजा यरूशलेम पर आक्रमण करने और उसे जीतने के लिए इकट्ठे हुए थे, लेकिन कोहरे की तरह गायब हो गए (पार्क युन-सन)। परमेश्वर की शक्ति को देखकर, आक्रमणकारी डर गए और भाग गए। अंततः, जैसे परमेश्वर पूर्वी हवा से तर्शीश के जहाजों को चकनाचूर कर देता है, वैसे ही प्रभु ने राष्ट्रों की शक्ति को नष्ट कर दिया और इस्राएल को विजय दिलाई। हमारे परमेश्वर ही हैं जो हमारी ओर से हमारे शत्रुओं को हराते हैं और हमें विजय प्रदान करते हैं। व्यवस्थाविवरण 20:4 को देखें: "क्योंकि तुम्हारा परमेश्वर यहोवा ही तुम्हारे साथ चलता है ताकि तुम्हारे शत्रुओं के विरुद्ध तुम्हारी ओर से लड़े और तुम्हें विजय दिलाए।" इसीलिए भजनकार ने अपने धनुष या तलवार पर भरोसा नहीं किया, बल्कि पूरी तरह से प्रभु पर भरोसा किया, जो उसे शत्रुओं से बचाता है और विजय दिलाता है (भजन संहिता 44:6-7)। व्यक्तिगत रूप से, जब भी मैं हमारे चर्च के सीनियर पास्टर के बारे में सोचता हूँ जो मिशनरी का काम कर रहे हैं, तो मुझे 1 कुरिन्थियों 10:13 याद आता है: "तुम पर कोई ऐसी परीक्षा नहीं आई जो मनुष्यों के लिए आम न हो। और परमेश्वर सच्चा है; वह तुम्हें तुम्हारी सहनशक्ति से ज़्यादा परीक्षा में नहीं पड़ने देगा। लेकिन जब तुम परीक्षा में पड़ोगे, तो वह उससे निकलने का रास्ता भी देगा ताकि तुम उसे सह सको।" यह सुनकर कि कैसे परमेश्वर सीनियर पास्टर को खतरे के पलों से बचाते हैं, हमें यह देखने को मिलता है कि वह सचमुच उद्धार देने वाले और जीत दिलाने

वाले परमेश्वर हैं। आइए हम इसे याद रखें: हमारे परमेश्वर ही अंततः हमें जीत की ओर ले जाते हैं। इसलिए, हमें उस जीत के भरोसे के साथ विश्वास में जीना चाहिए।

आखिरकार, चौथी बात यह है कि जो परमेश्वर हमारी मृत्यु के दिन तक हमारा मार्गदर्शन करते हैं, वे धार्मिकता से भरे हुए परमेश्वर हैं।

आज के वचन, भजन संहिता 48:10 को देखें: "हे परमेश्वर, आपके नाम की तरह ही आपकी प्रशंसा पृथ्वी के छोर तक पहुँचती है; आपका दाहिना हाथ धार्मिकता से भरा है।" "आपका दाहिना हाथ धार्मिकता से भरा है" वाक्यांश का अर्थ है कि परमेश्वर निश्चित रूप से अपना न्याय करते हैं—अच्छे लोगों को इनाम देते हैं और बुरे लोगों को सज़ा देते हैं—और अंततः उस सच्चे विश्वासी को न्याय दिलाते हैं जिसने अन्याय सहा है (पार्क यू-सन)। जब हम अपनी शिकायतें इन परमेश्वर के सामने लाते हैं, तो वे धार्मिकता से भरे होने के कारण हमें न्याय दिलाते हैं। इसका एक व्यावहारिक उदाहरण पास्टर गोमेज़ के बेटे के मामले में देखा जा सकता है, जो हमारे चर्च की हिस्पैनिक मिनिस्ट्री का नेतृत्व करते हैं। लगभग दो हफ़्ते पहले, मुझे उनके बेटे, विक्टर जूनियर से जुड़े एक मुक़दमे के बारे में पता चला। ऐसा लगता है कि एक कार दुर्घटना हुई थी—ज़ाहिर तौर पर दूसरी पार्टी की गलती से—फिर भी उस व्यक्ति ने, गलती होने के बावजूद, पास्टर गोमेज़ के बेटे पर मुक़दमा कर दिया। दूसरी पार्टी एक प्रभावशाली राजनेता लग रही थी; नतीजतन, दुर्घटना की रिपोर्ट दर्ज करने वाले पुलिस अधिकारी ने कथित तौर पर राजनेता का पक्ष लेने के लिए अदालत में झूठ बोला। इसके अलावा, जिस कंपनी में विक्टर जूनियर काम करते थे, उसने भी उनके खिलाफ़ गवाही दी। इस बेहद मुश्किल समय में, पास्टर और उनकी पत्नी ने सच्चे दिल से परमेश्वर से मदद माँगी। इस दौरान, पास्टर गोमेज़ को एक दिलचस्प सपना आया: उन्होंने देखा कि स्वर्ग से उस राजनेता, झूठी रिपोर्ट दर्ज करने वाले पुलिस अधिकारी और कंपनी के लोगों पर आग बरस रही थी। आखिरकार, लगभग दो हफ़्ते पहले, जज ने पास्टर गोमेज़ के बेटे के पक्ष में फ़ैसला सुनाया। केस जीतने के बाद, बेटे के वकील ने दो सुझाव दिए: पहला, दूसरी पार्टी से उस कमाई का मुआवज़ा माँगा जाए जो कानूनी लड़ाई के दौरान काम न कर पाने की वजह से नहीं हो पाई थी; और दूसरा, उनके झूठ और गलत व्यवहार के लिए कोर्ट से औपचारिक फ़ैसला लेने के लिए जवाबी केस किया जाए और मामले को आखिर तक लड़ा जाए। हालाँकि, पास्टर गोमेज़ के अनुसार, उन्होंने मामले को आगे न बढ़ाने का फ़ैसला किया। मुझे इसमें सचमुच अद्भुत विश्वास दिखाई देता है। बेशक, यह आज के धर्मग्रंथ में बताई गई

सच्चाई का एक अनुभव है—भले ही अप्रत्यक्ष रूप से—कि परमेश्वर, जो न्याय से परिपूर्ण हैं, उन विश्वासियों को सही ठहराते हैं जिनके साथ अन्याय हुआ है। हालाँकि, और भी आश्चर्य की बात यह है कि उस व्यक्ति ने प्रक्रिया को रोकने का फैसला किया—जबकि वे उस राजनेता और पुलिस अधिकारियों के खिलाफ़ केस कर सकते थे जिन्होंने झूठ बोला था। इससे मुझे यह समझ आया कि हमें बदला लेने का काम परमेश्वर पर छोड़ देना चाहिए; दूसरे शब्दों में, हमें यह जानना होगा कि कब रुकना है। क्यों? क्योंकि हमें बदला लेने का काम न्यायप्रिय परमेश्वर पर छोड़ देना चाहिए। परमेश्वर, जो न्याय से परिपूर्ण हैं, मामले को संभाल लेंगे। वे हमारे विरोधियों को हरा देंगे। हमें इस परमेश्वर पर भरोसा करना चाहिए और उनके मार्गदर्शन का पालन करना चाहिए।

जो परमेश्वर मरने के दिन तक हमारी अगुवाई करता है, वह महान परमेश्वर है, हमारी शरण है, हमें जीत दिलाने वाला है और धार्मिकता से भरा हुआ है। तो फिर, हमें इस अगुवाई का जवाब कैसे देना चाहिए? आज का वचन हमें चार बातें सिखाता है: (1) पहली बात, हमें पूरे मन से अपने परमेश्वर की स्तुति करनी चाहिए। भजन संहिता 48:1 को देखिए: “प्रभु महान है और हमारे परमेश्वर के नगर में, उसके पवित्र पर्वत पर स्तुति के योग्य है।” भजनकार हमें सबसे ऊँचे परमेश्वर—जो हमसे प्रेम करता है और हमारे राजा के रूप में राज करता है—की स्तुति करने के लिए बुलाता है और कहता है: “परमेश्वर का भजन गाओ, भजन गाओ; हमारे राजा का भजन गाओ, भजन गाओ” (भजन संहिता 47:6)। पौलुस और सीलास की तरह, जिन्होंने जेल में प्रार्थना की और भजन गाए, हमें भी विश्वास भरी प्रार्थना और स्तुति के द्वारा अपने महान परमेश्वर के बड़े उद्धार का अनुभव करना चाहिए। हमें परमेश्वर के पवित्र मंदिर में आना चाहिए और पूरे मन से अपने महान परमेश्वर की स्तुति करनी चाहिए। (2) दूसरी बात, हमें उसके मंदिर में प्रभु की दया और प्रेम पर मनन करना चाहिए। भजन संहिता 48:9 को देखिए: “हे परमेश्वर, तेरे मंदिर में हम तेरे कभी न बदलने वाले प्रेम पर मनन करते हैं।” यहाँ “मनन करने” के लिए इस्तेमाल किए गए मूल हिब्रू शब्द (*damam*) का अर्थ है उत्सुकता से उम्मीद करना या इंतज़ार करना। भजनकार ने मुश्किलों के बीच हिम्मत नहीं हारी; इसके बजाय, उसने परमेश्वर की शरण ली और प्रभु की कृपा का बेसब्री से इंतज़ार किया। नतीजतन, उसे प्रभु की महानता का एहसास हुआ (पार्क युन-सन)। हमें भी मुश्किल समय में हिम्मत नहीं हारनी चाहिए, बल्कि उसके मंदिर में प्रभु की कृपा का बेसब्री से इंतज़ार करना चाहिए। उसकी दया और प्रेम का इंतज़ार करते हुए, हमें परमेश्वर

की महानता को समझना चाहिए। (3) तीसरी बात, हमें आनंदित और खुश होना चाहिए। आज का वचन, भजन संहिता 48:11 देखिए: "सिंघों पर्वत आनंदित हो, यहूदा की बेटियाँ तेरे न्याय के कारण खुश हों।" हम आनंदित और खुश हो सकते हैं क्योंकि परमेश्वर न्याय करने वाला और धार्मिक है। हम आनंदित और खुश हो सकते हैं क्योंकि वही परमेश्वर हमें जीत दिलाता है। इसके अलावा, क्योंकि हम प्रभु के सही फैसलों के ज़रिए उनके उद्धार का अनुभव करते हैं, इसलिए हम उस उद्धार में खुशी और आनंद मना सकते हैं। (4) आखिर में, चौथा पॉइंट यह है कि हमें इसे आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाना चाहिए। आज के वचन, भजन संहिता 48:13 को देखें: "उसकी दीवारों पर ध्यान दो, उसके गढ़ों की जाँच करो, ताकि तुम अगली पीढ़ी को उनके बारे में बता सको।" यह वचन हमें सिंघों (यरूशलेम)—जहाँ परमेश्वर का वास है—की सुरक्षा और सुंदरता को ध्यान से देखने और इसे आने वाली पीढ़ियों के साथ साझा करने का निर्देश देता है। मिस्र से निकलने के दौरान इस्राएल की पहली पीढ़ी से हुई गलतियों में से एक यह थी कि वे बाद की पीढ़ियों को परमेश्वर के उद्धार के कामों का इतिहास सिखाने में नाकाम रहे। नतीजतन, कनान देश में प्रवेश करने के बाद मूर्तिपूजा में शामिल होकर उन बाद की पीढ़ियों ने भी परमेश्वर के विरुद्ध पाप किया। इसलिए, हमें व्यवस्थाविवरण 6:6-7 की बातों पर ध्यान देना चाहिए: "ये आज्ञाएँ जो मैं आज तुम्हें दे रहा हूँ, वे तुम्हारे दिलों में होनी चाहिए। इन्हें अपने बच्चों के मन में बिठाओ। जब तुम घर पर बैठो और जब तुम रास्ते पर चलो, जब तुम लेटो और जब तुम उठो, तब इनके बारे में बात करो।"

जो परमेश्वर हमारी मृत्यु के दिन तक हमारा मार्गदर्शन करता है, वह एक महान परमेश्वर और हमारी शरणस्थान है। वह वही परमेश्वर है जो हमारे दुश्मनों का विरोध करता है और हमें जीत दिलाता है। वह एक धर्मी परमेश्वर है, जो न्याय से परिपूर्ण है। इसलिए, हमें पूरे दिल से उसकी स्तुति करनी चाहिए और उसके घर में उसकी दया की प्रतीक्षा करनी चाहिए। इसके अलावा, हमें खुशी और आनंद मनाना चाहिए, यह भरोसा रखते हुए कि वह हमें जीत दिलाएगा। ऐसा करते हुए, हमें आने वाली पीढ़ियों तक उस परमेश्वर के बारे में बताना चाहिए जो हमारे जीवन के अंत तक हमारा मार्गदर्शन करता है।

दिन 39: आशीष पाने वाला व्यक्ति

[भजन संहिता 84 पर मनन]

कहा जाता है कि अब्राहम लिंकन के कई उपनाम थे, जिनमें से एक था "ईमानदार अब्राहम।" यह कहानी उनके किशोरावस्था के दिनों की है, जब वे एक दुकान में क्लर्क के तौर पर काम करते थे। एक ग्राहक आया, पैसे दिए और चला गया, लेकिन बाद में लिंकन को एहसास हुआ कि उन्होंने 10 सेंट वापस नहीं किए थे। वे पूरी रात उस 10 सेंट के बारे में परेशान रहे, और अगले दिन, जो कि छुट्टी का दिन था, उन्होंने ग्राहक को खोजने के लिए तीन मील की यात्रा की और वे 10 सेंट लौटा दिए। उनके आस-पास के लोगों ने उनकी ईमानदारी की खूब तारीफ़ की। हालाँकि, उन्होंने जवाब दिया, "मुझे नहीं पता कि मैं तारीफ़ के लायक क्यों हूँ। मैं ऐसा व्यक्ति नहीं बनना चाहता जिसकी तारीफ़ इसलिए हो कि मैंने वह किया जिसकी मुझसे स्वाभाविक रूप से उम्मीद की जाती है, बल्कि मैं ऐसा व्यक्ति बनना चाहता हूँ जिसकी तारीफ़ इसलिए हो कि मैंने उम्मीद से कहीं ज़्यादा किया।" वकील बनने के बाद, लिंकन ने सबसे पहले उन पीड़ित लोगों को मुफ़्त कानूनी मदद दी जो मुकदमा करने का खर्च नहीं उठा सकते थे। मुकदमे के पहले दिन, उन्होंने कहा, "मुझे खुशी है कि मैं उस वादे को पूरा कर पाया जो मैंने किशोरावस्था में भगवान से किया था" (इंटरनेट)।

सचमुच, मेरा मानना है कि अब्राहम लिंकन भगवान द्वारा इस्तेमाल किए गए आशीष का एक माध्यम थे। जब मैं सोचता हूँ कि इसके परिणामस्वरूप कितने लोगों ने आज़ादी की आशीष का आनंद लिया है, तो मेरे मन में यह विचार आया: 'भगवान ने मेरे माता-पिता (दोनों तरफ़ के) का इस्तेमाल आशीष के माध्यम के तौर पर किया ताकि मुझ पर भरपूर आशीष बरसा सकें।' मेरे माता-पिता के ज़रिए भगवान ने मुझ पर जो आशीष बरसाई है, उसके कारण मैं भी दूसरों के लिए आशीष का माध्यम बनना चाहता हूँ। इसके लिए, मैं आज भजन संहिता 84 के शब्दों पर मनन करना चाहता हूँ। भजन संहिता 84 में, "धन्य हैं..." वाक्यांश तीन बार आता है (पद 4, 5 और 12)। इन शब्दों पर विचार करते हुए, मैं "आशीष पाने वाले व्यक्ति" की तीन

विशेषताओं पर मनन करना चाहता हूँ। मेरी प्रार्थना है—और मैं यीशु के नाम से आप सभी को आशीष देता हूँ—कि आशीष पाने वाले लोगों के तौर पर, हम सभी इस दुनिया में रहते हुए प्रभु की आशीष का माध्यम बनें।

पहला, आशीष पाने वाला व्यक्ति वह है जो प्रभु के घर में रहता है। भजन संहिता 84 की चौथी आयत देखिए: "धन्य हैं वे जो तेरे घर में रहते हैं; वे सदा तेरी स्तुति करते रहेंगे। सेलाह।" भजन रचने वाला शायद एक पुजारी था जो यरूशलेम में तीर्थयात्रा पर आया था (पार्क युन-सन)। वह मंदिर जाने के लिए बहुत उत्सुक था (आयतें 1-4)। भजन रचने वाला प्रभु के मंदिर के लिए इतनी शिद्धत से क्यों तड़प रहा था? इसलिए क्योंकि मंदिर परमेश्वर से प्रार्थना करने की जगह है (पार्क युन-सन)। वह इसलिए तड़प रहा था क्योंकि वहाँ परमेश्वर से प्रार्थना करके वह उनसे मिल सकता था और उनसे बातचीत कर सकता था। इसी गहरी तड़प के कारण, भजन रचने वाले ने कहा, "हे सेनाओं के यहोवा, तेरा निवास-स्थान कितना प्यारा है!" (आयत 1)। चर्च की सुंदरता इमारत से नहीं, बल्कि इस बात से तय होती है कि वहाँ परमेश्वर का आत्मा वास करता है (पार्क युन-सन)। परमेश्वर का मंदिर प्रार्थना का घर है। भजन रचने वाले ने माना कि वह जगह इसलिए इतनी प्यारी थी क्योंकि उसने वहाँ परमेश्वर की उपस्थिति का अनुभव किया था—उस परमेश्वर से मिलना जो प्रार्थना करने पर हमारे करीब आता है (व्यवस्थाविवरण 4:7)। तो, भजन रचने वाला प्रभु के मंदिर के लिए कितनी गहराई से तड़प रहा था? आज के पाठ, भजन संहिता 84:2 को देखिए: "मेरा प्राण यहोवा के आंगनों के लिए तड़पता है, यहाँ तक कि व्याकुल हो जाता है; मेरा हृदय और मेरा शरीर जीवित परमेश्वर के लिए पुकारते हैं।" भजन रचने वाला परमेश्वर के आंगनों के लिए इतनी शिद्धत से तड़प रहा था कि उसका शरीर भी कमज़ोर हो गया था। वह प्रभु के मंदिर के लिए इसलिए तड़प रहा था क्योंकि वह प्रार्थना के ज़रिए परमेश्वर की उपस्थिति चाहता था। इस तरह, उसका हृदय और उसका शरीर दोनों जीवित परमेश्वर के लिए पुकार उठे। जब उसने "मेरे राजा, मेरे परमेश्वर, सर्वशक्तिमान यहोवा" (आयत 3) को पुकारा, तो भजन रचने वाले ने अपनी भावनाएँ इस तरह व्यक्त कीं: "मेरे राजा, मेरे परमेश्वर, सर्वशक्तिमान यहोवा, गौरैया को भी घर मिल गया है, और अबाबील को अपने बच्चों के लिए घोंसला मिल गया है, जहाँ वह अपने बच्चों को रख सके—तेरी वेदियों के पास एक जगह" (आयत 3)। यहाँ, भजन रचने वाला गौरैया—जिसे अपने बच्चों के लिए घर और घोंसला मिल जाता है—की तुलना मंदिर से दूर होने की अपनी दुखद स्थिति से करता है; वह प्रभु के मंदिर में जाने का

मौका पाने की गुहार लगाते हुए अपनी हालत पर बहुत दुखी होता है (पार्क यू-सन)। इसलिए, पद 10 में भजनकार कहता है: "तेरे आँगन में बिताया एक दिन कहीं और बिताए हज़ार दिनों से बेहतर है; मैं बुरे लोगों के डेरों में रहने के बजाय अपने परमेश्वर के घर में चौकीदार बनना ज़्यादा पसंद करूँगा।" यहाँ प्रभु के आँगन में रहने का मतलब है परमेश्वर के साथ सच्ची संगति वाला जीवन जीना (पार्क यू-सन)। भजनकार की यह बात—कि परमेश्वर के साथ सच्ची संगति में बिताया एक दिन बुरे जीवन में बिताए हज़ार दिनों से बेहतर है—हमें सिखाती है कि हमें भी प्रभु और उसकी कलीसिया के लिए दिल से तड़पना चाहिए।

हमें कलीसिया—परमेश्वर के घर—के लिए वैसी ही तड़प रखनी चाहिए जैसी भजनकार ने रखी थी। हमें परमेश्वर के घर जाकर, एक साथ इकट्ठा होकर, एक मन से वादे के वचन को थामे रखकर और पूरी लगन से प्रार्थना में खुद को समर्पित करके परमेश्वर की उपस्थिति का अनुभव करना चाहिए। कलीसिया, यानी प्रभु का घर, प्रार्थना का घर है। प्रार्थना की मिठास चखने के बाद, हमें परमेश्वर के घर के लिए और भी ज़्यादा तड़प रखनी चाहिए। इस तड़प के साथ, आज के हिस्से के पद 4 में बताए गए धन्य व्यक्ति की तरह, हमें प्रभु के घर में रहना चाहिए और लगातार उसकी स्तुति करनी चाहिए। मुझे 2003 में 'एसोसिएशन ऑफ़ पास्टर्स फ़ॉर चर्च रिन्यूअल' द्वारा आयोजित एक रिट्रीट (आध्यात्मिक शिविर) आज भी याद है। मत्ती 16:18 के वादे— "मैं अपनी कलीसिया बनाऊँगा"—को पाने और भजन 246, "आई लव दाई किंगडम, लॉर्ड" (हे प्रभु, मुझे तेरे राज्य से प्रेम है) को गाने पर, स्युंगरी प्रेस्बिटेरियन चर्च के बारे में सोचते हुए मेरी आँखों से आँसू बहने लगे। पहला पद गाते समय मैं खास तौर पर भावुक हो गया और अपने आँसू नहीं रोक पाया: "हे प्रभु, मुझे तेरे राज्य से प्रेम है, तेरे निवास स्थान से, उस कलीसिया से जिसे हमारे धन्य उद्धारकर्ता ने अपने कीमती लहू से बचाया है।" और जब मैंने तीसरा पद गाया—"उसके लिए मेरे आँसू बहेँगे, उसके लिए मेरी प्रार्थनाएँ ऊपर जाएँगी; मेरी चिंताएँ और मेहनत उसे समर्पित होंगी, जब तक कि मेहनत और चिंताएँ खत्म न हो जाएँ"—तो मैंने स्युंगरी प्रेस्बिटेरियन चर्च लौटने और ईमानदारी से सेवा करने का संकल्प लिया। तो फिर, हमें परमेश्वर के उस अनंत घर—स्वर्ग—में रहने के लिए और भी ज़्यादा तड़प क्यों नहीं रखनी चाहिए? आज के पाठ में भजनकार की तरह, हम भी तीर्थयात्री हैं जो उस स्वर्गीय घर—नए यरूशलेम के सच्चे मंदिर—की ओर निकल पड़े हैं। इस तरह, इब्रानियों 11 में विश्वास के नायकों की तरह, हम गवाही देते हैं कि हम "पृथ्वी पर परदेशी और यात्री" हैं (इब्रानियों 11:13)। हम वे लोग हैं जो एक बेहतर देश—स्वर्गीय देश—की चाहत रखते

हैं (पद 16)। उस घर की ओर यात्रा करते हुए, हम प्रभु को आमने-सामने देखेंगे (1 कुरिन्थियों 13:12) और हमेशा उनके साथ रहेंगे। इसलिए, हमें अपना मन ऊपर की चीज़ों पर लगाना चाहिए और ऊपर की चीज़ों को खोजना चाहिए (कुलुस्सियों 3:1-2)। ऐसा व्यक्ति सचमुच धन्य है। दूसरी बात, धन्य व्यक्ति वह है जो प्रभु से शक्ति प्राप्त करता है।

आज के पाठ, भजन संहिता 84:5 को देखें: "धन्य हैं वे जिनकी शक्ति आपमें है, जिनके दिल सिंथ्योन के रास्तों पर लगे हैं।" धन्य व्यक्ति प्रभु के मंदिर के लिए तरसता था और उनके आँगन में जाने की तीव्र इच्छा के साथ, परमेश्वर से शक्ति पाने के लिए पुकारता था। यह पुकार प्रभु परमेश्वर—जो उसकी शक्ति थे—की उपस्थिति का अनुभव करने की चाहत से निकली थी। भजनकार ने प्रभु की शक्ति पाने की इतनी तीव्र इच्छा क्यों की? पद 7 को देखें: "वे शक्ति से शक्ति की ओर बढ़ते जाते हैं, जब तक कि हर कोई सिंथ्योन में परमेश्वर के सामने उपस्थित न हो जाए।" भजनकार ने परमेश्वर की उपस्थिति का अनुभव करने और उनकी शक्ति प्राप्त करने की इच्छा इसलिए की क्योंकि उसे एहसास था कि केवल परमेश्वर द्वारा दी गई शक्ति से ही कोई सिंथ्योन के मंदिर तक जा सकता है (पार्क युन-सन)। प्रभु के मंदिर तक जाने के लिए परमेश्वर की शक्ति क्यों आवश्यक है? भजनकार पद 6 में इसका कारण बताता है: "जब वे आँसुओं की घाटी से गुज़रते हैं, तो वे उसे झरनों की जगह बना देते हैं; शरद ऋतु की बारिश भी उसे आशीषों से भर देती है।" प्राचीन समय में विदेशों में रहने वाले इस्राएलियों के लिए, यरूशलेम मंदिर की यात्रा करने की योजना और प्रयास में "आँसुओं की घाटी" जैसी पीड़ा और बाधाएँ शामिल थीं। फिर भी, उसे सहकर और उससे गुज़रकर, वे "कई झरनों वाली जगह" पर पहुँचते थे—आध्यात्मिक सुकून और परम आनंद की स्थिति। वहाँ उन्हें "पतझड़ की बारिश" जैसे स्वर्गीय उपहार मिलते और वे आध्यात्मिक रूप से परमेश्वर से मिलने का अनुभव करते (पार्क युन-सन)। इसलिए, भजनकार ने परमेश्वर से पुकार की: "हे सर्वशक्तिमान प्रभु परमेश्वर, मेरी प्रार्थना सुन; हे याकूब के परमेश्वर, मेरी बात सुन (सेला)" (पद 8)।

मेरे पसंदीदा गॉस्पेल गानों में से एक का शीर्षक है "आशीष पाने वाला व्यक्ति" (या "प्रभु में शक्ति पाना")। इसके बोल कुछ इस तरह हैं: "आप, जो प्रभु में शक्ति पाते हैं और ज़ियोन जाने का रास्ता अपने दिल में बसाए हुए हैं, परमेश्वर द्वारा आशीष पाए हुए व्यक्ति हैं; प्रभु आपसे बहुत प्रसन्न होते हैं। आप, जो प्रभु के घर में रहने और हमेशा उनकी स्तुति करने की इच्छा रखते हैं, परमेश्वर द्वारा आशीष पाए हुए व्यक्ति हैं; प्रभु आपसे बहुत

प्रेम करते हैं। आपकी सेवा एक सुंदर भजन है, आपकी भक्ति एक सुगंधित प्रार्थना है; आप जहाँ भी कदम रखेंगे, प्रभु का नाम ऊँचा किया जाएगा।" यह गाना भजन संहिता 84 पर आधारित है। जब भी मैं इसे सुनता हूँ, मुझे अक्सर शक्ति मिलती है; मुझे प्रभु से शक्ति मिलती है और उनके घर में रहने की मेरी इच्छा और बढ़ती है। यहाँ तक कि जब मैं निराश होता हूँ, तो प्रभु द्वारा दी गई शक्ति मुझे फिर से उठने और उस स्वर्गीय घर की ओर आगे बढ़ने में मदद करती है। खासकर, जब मैं उस स्वर्गीय घर की ओर यात्रा करता हूँ—अपना ध्यान ऊपर की चीज़ों पर केंद्रित करता हूँ और विश्वास के उन पूर्वजों को याद करता हूँ जो पहले से ही वहाँ हैं—तो मैं खुद को स्वर्ग के लिए और भी अधिक लालायित पाता हूँ। मेरा मानना है कि "ज़ियोन जाने का रास्ता" दिल में बसाने का यही अर्थ है। ज़ियोन जाने का वह रास्ता हमारे दिलों में गहराई से अंकित हो जाता है क्योंकि वे स्वर्ग की छवि में बदलते जाते हैं; प्रभु के साथ उस रास्ते पर हमारे कदम शक्ति और आशा से भरे होते हैं। इसीलिए हम आशीष पाए हुए लोग हैं।

अंत में, तीसरी बात यह है कि आशीष पाया हुआ व्यक्ति वह है जो प्रभु पर भरोसा करता है।

आज के वचन, भजन संहिता 84:12 को देखें: "हे सर्वशक्तिमान प्रभु, धन्य है वह जो तुझ पर भरोसा रखता है।" भजनकार ने किस तरह के परमेश्वर पर भरोसा किया? सबसे पहले, भजनकार ने परमेश्वर पर हमारी ढाल के रूप में भरोसा किया (वचन 9)। क्योंकि ज़ियोन में मंदिर की ओर जाने वाली यात्रा कठिनाइयों और बाधाओं से भरी होती है—जैसे "आँसुओं की घाटी"—इसलिए भजनकार ने प्रभु पर और भी अधिक भरोसा किया, जो कलीसिया की ढाल के रूप में कार्य करते हैं। हमारी ढाल परमेश्वर में है, जो सच्चे मन वालों को बचाता है (भजन संहिता 7:10)। दूसरे, भजनकार ने परमेश्वर पर भरोसा किया, जो अनुग्रह और महिमा देने वाले हैं (वचन 11)। भजन रचने वाला जिस परमेश्वर पर भरोसा करता है, वह कृपा और महिमा देने वाला है; वह सीधे-सच्चे लोगों से कोई भी अच्छी चीज़ नहीं रोकता।

भजन 342 (कोरियाई भजन-पुस्तक में), पद 1 और कोरस में लिखा है: "जब मैं मुश्किलों का सामना करता हूँ और मेरा विश्वास कमज़ोर होता है, तो मैं उस प्रभु पर और भी ज़्यादा निर्भर होता हूँ जिस पर मेरा भरोसा है। जैसे-जैसे समय बीतता है, वही मेरा एकमात्र सहारा होता है; चाहे कुछ भी हो, मैं यीशु पर भरोसा करता हूँ।" हमें पूरी तरह से परमेश्वर पर निर्भर रहना चाहिए—जो हमारी ढाल है, जो सीधे-सच्चे लोगों को कृपा और

महिमा देता है और उनसे कोई भी अच्छी चीज़ नहीं रोकता। जैसे-जैसे समय बीतता है, जब भी हम मुश्किलों का सामना करते हैं और अपने विश्वास की कमज़ोरी को महसूस करते हैं, तो हमें—अपनी उस कमज़ोरी और बेबसी को मानते हुए—और भी गहराई से केवल यीशु पर निर्भर रहना चाहिए। जो लोग इस तरह से पूरी तरह प्रभु पर निर्भर रहते हैं, वे सचमुच धन्य हैं।

आप जो प्रभु के घर की चाहत रखते हैं, यहाँ उसकी स्तुति और प्रार्थना करने आते हैं, आप धन्य लोग हैं। आप जो परमेश्वर को पुकारते हैं, उसमें शक्ति पाते हैं और अपने दिलों में "सिय्योन के मार्ग" को बसाए रखते हैं, आप धन्य लोग हैं। आप जो समय बीतने के साथ-साथ प्रभु पर और अधिक निर्भर होते जाते हैं, आप धन्य लोग हैं। प्रभु आपसे बहुत प्रसन्न होता है। प्रभु आपसे गहरा प्रेम करता है। आपकी सेवा एक सुंदर भजन है; आपकी भक्ति एक सुगंधित प्रार्थना है। आप जहाँ भी कदम रखेंगे, वहाँ प्रभु का नाम ऊँचा किया जाएगा।

दिन 40: क्या आप इस समय को जानते हैं?

[रोमियों 13:11-14 पर मनन]

“और तुम जानते हो कि समय आ गया है, कि तुम्हारे लिए नींद से जागने का समय आ गया है, क्योंकि अब हमारा उद्धार हमारे पहले विश्वास करने के समय से भी अधिक निकट है। रात बहुत बीत चुकी है, और दिन निकट है; इसलिए आओ हम अंधकार के कामों को त्याग दें और प्रकाश का कवच पहन लें। आओ हम दिन के उजाले में उचित चाल चलें, न कि व्यभिचार और नशे में, न ही यौन अनैतिकता और वासना में, न ही झगड़े और ईर्ष्या में, बल्कि प्रभु यीशु मसीह को धारण करें, और शरीर की वासनाओं को पूरा करने का कोई अवसर न दें।” (रोमियों 13:11-14)

वास्तव में, आपको क्या लगता है कि अभी क्या समय हो रहा है?

मेरी कोरियाई भाषा सीमित है, इसलिए मुझसे अक्सर गलतियाँ हो जाती हैं। ऐसा ही एक उदाहरण तब है जब मैं पाम संडे बुलेटिन बना रहा था; कई बार मैंने “पाम” की जगह “निष्कर्ष” लिख दिया था। हालाँकि मेरी कोरियाई भाषा उतनी अच्छी नहीं है, फिर भी किसी कारणवश, जब भी मैं इस तरह से पाम संडे का स्वागत करता हूँ, तो मुझे यीशु के अंत—अर्थात् क्रूस पर उनकी मृत्यु—की याद आ जाती है। वास्तव में, पाम संडे ही पैशन वीक की शुरुआत का प्रतीक है। आज पाम संडे है, कल पैशन वीक है, और शुक्रवार गुड फ्राइडे है, जो क्रूस पर यीशु की मृत्यु की याद दिलाता है... हर साल जब आप इस तरह से पाम संडे का स्वागत करते हैं, तो आपके मन में क्या विचार आते हैं?

मैंने पहले भी "परमेश्वर जो चीजों को उनके समय में सुंदर बनाता है" शीर्षक के तहत परमेश्वर के वचन पर मनन किया है, जिसमें मैंने सभोपदेशक 3:1-14 पर ध्यान केंद्रित किया है। सभोपदेशक 3:1 को देखते हुए, बुद्धिमान राजा सुलैमान कहते हैं कि स्वर्ग के नीचे हर चीज का एक समय होता है और हर उद्देश्य का एक मौसम होता है। वास्तव में, हमें यह विचार करना चाहिए कि परमेश्वर के अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अब क्या समय है।

हालाँकि मेरी कोरियाई भाषा उतनी अच्छी नहीं है, फिर भी, जब भी मैं पाम संडे का स्वागत करता हूँ, तो मुझे यीशु के अंत की याद आ जाती है। आज के वचन, रोमियों 13:11 में, प्रेरित पौलुस रोम के पवित्र लोगों को लिखते हैं: "और समय को समझते हुए ऐसा करो: तुम्हारी नींद से जागने का समय आ गया है, क्योंकि हमारा उद्धार अब उसके मुकाबले और भी करीब है जब हमने पहली बार विश्वास किया था" (वचन 11)। तो फिर, पौलुस जिस "समय" या "दौर" की बात कर रहे हैं, उसका स्वरूप क्या है? वे आज हमारे लिए कुछ मुख्य बातें बताते हैं।

पहली बात, यह दौर प्रभु के दूसरी बार आने का समय है। दूसरे शब्दों में, जिस दौर में आप और मैं जी रहे हैं, वह प्रभु की वापसी के दिन के करीब आने का समय है। पौलुस रोम के पवित्र लोगों को—और हमें भी, जो आज ये शब्द सुन रहे हैं—बता रहे हैं कि यह वह समय है जब यीशु की वापसी बहुत जल्द होने वाली है। यीशु की वापसी के करीब होने का क्या मतलब है? इसका मतलब है कि हमारे उद्धार का समय—हममें से उन लोगों के लिए जो यीशु पर विश्वास करते हैं—और करीब आ रहा है (वचन 11)। दूसरे शब्दों में कहें तो, प्रभु की वापसी के करीब होने का मतलब है कि हमारे उद्धार का समय—खासकर हमारे छुटकारे का आखिरी चरण, जिसे महिमा पाना (glorification) कहा जाता है—पास आ रहा है (वचन 11) (मैकआर्थर)। इसके अलावा, यह बात कि हमारा उद्धार उस समय की तुलना में और करीब है जब हमने पहली बार विश्वास किया था, यह बताती है कि चूँकि हम नहीं जानते कि हम कब मरेंगे और प्रभु से मिलेंगे, इसलिए जब से हमने यीशु पर विश्वास करना शुरू किया है, तब से उस मुलाकात का पल और करीब आ गया है। तो फिर, आपको और मुझे क्या करना चाहिए?

दूसरी बात, पौलुस जिस समय की बात कर रहे हैं, वह नींद से जागने का पल है। पौलुस कहते हैं कि चूँकि यीशु की वापसी का समय करीब है, इसलिए अब वह पल आ गया है जब हमें अपनी नींद से जाग जाना चाहिए। यहाँ "तुम्हारी नींद से जागने का समय आ गया है" वाक्यांश से पौलुस का क्या मतलब है? इसका मतलब है कि अब पाप की नींद से जागने का समय है (पार्क युन-सन)। जिस दौर में हम जी रहे हैं, वह प्रभु के दूसरी बार आने के करीब का समय है, और इसलिए, यह वह समय भी है जब पाप अपने चरम पर पहुँच गया है। पॉल आज के हिस्से की 12वीं आयत में इसका ज़िक्र करते हुए कहते हैं, "रात लगभग बीत चुकी है; दिन बस आने ही वाला है।" "दिन बस आने ही वाला है" वाक्यांश यीशु के दोबारा आने (Second Coming) की ओर इशारा करता है, जो स्वयं ज्योति हैं; "रात लगभग बीत चुकी है" वाक्यांश का अर्थ है कि जैसे-जैसे उनकी वापसी का समय नज़दीक आ रहा है, इस दुनिया में "पाप की रात" और गहरी होती जा रही है। दूसरे शब्दों में, हम जिस समय में जी रहे हैं, उसकी विशेषता पाप की लगातार गहरी होती रात है, ठीक इसलिए क्योंकि यीशु की वापसी बहुत जल्द होने वाली है।

तो फिर, इस समय में हमें कैसे जीना चाहिए जब यीशु का दोबारा आना नज़दीक है? जब हमारा उद्धार उस समय की तुलना में और भी करीब है जब हमने पहली बार विश्वास किया था, तो हमें अपने विश्वास का जीवन कैसे जीना चाहिए?

पहली बात, हमें एक-दूसरे से प्रेम करना चाहिए।

अगर हम रोमियों 13:11 के मूल ग्रीक पाठ को देखें, तो आयत "काई त्यूटो" (kai touto) वाक्यांश से शुरू होती है। NASB बाइबिल इसका अनुवाद "और ऐसा करो" (And this do) के रूप में करती है। कोरियाई भाषा में, इसका अनुवाद "और ऐसा करो" होता है। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ है, "तुम्हें यह और भी ज़्यादा करना चाहिए" (पार्क युन-सन)। यहाँ "यह" किस चीज़ की ओर इशारा करता है? वह क्या है जिसे हमें और अधिक करना चाहिए? यह "एक-दूसरे से प्रेम करने" की ओर इशारा करता है, जैसा कि रोमियों 13:8-10 में बताया गया है। इसका क्या अर्थ है? संदेश यह है कि हमें उस समय को पहचानना चाहिए जिसमें हम जी रहे हैं—एक ऐसा दौर जब यीशु का दोबारा आना नज़दीक आ रहा है—और एक-दूसरे से प्रेम करने के लिए और भी अधिक प्रयास करना चाहिए। विशेष रूप से अब, जब इंसानी प्रेम ठंडा पड़ रहा है—ठीक जैसा कि यीशु ने मत्ती 24:12 में अंतिम

समय के बारे में भविष्यवाणी की थी—हमें प्रभु के प्रेम के साथ एक-दूसरे से प्रेम करने का और अधिक प्रयास करना चाहिए। तो फिर, हमें एक-दूसरे से कैसे प्रेम करना चाहिए? हमें एक-दूसरे से प्रेम करने के अलावा किसी का कोई कर्ज़ नहीं रखना चाहिए। इसके अलावा, हमें परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करना चाहिए: व्यभिचार न करना, हत्या न करना, चोरी न करना, लालच न करना, आदि।

दूसरी बात, इस समय में जब यीशु का दोबारा आना नज़दीक है, हमें अंधकार के कामों को त्याग देना चाहिए।

आज के वचन, रोमियों 13:12 को देखिए: "रात बीतने को है और दिन निकट है। इसलिए आओ हम अन्धकार के कामों को त्याग दें और ज्योति के हथियार पहन लें।" इस समय—जब हमारा उद्धार उस समय की तुलना में और भी निकट है जब हमने पहली बार विश्वास किया था—हमें यह समझना चाहिए कि पाप की रात गहरी हो गई है और हमें इस संसार के अन्धकार के सभी कामों को त्याग देना चाहिए। तो फिर, अन्धकार के वे कौन से काम हैं जिन्हें हमें त्याग देना चाहिए? रोमियों 13:13 में, प्रेरित पौलुस तीन खास उदाहरण बताता है। पहला, हमें व्यभिचार और नशेबाज़ी जैसे अन्धकार के कामों को त्याग देना चाहिए। व्यभिचार क्या है? मूल यूनानी शब्द *कोमोस* (kōmos) का इस्तेमाल कभी यूनानी पौराणिक कथाओं में शराब के देवता डायोनिसस के सम्मान में आयोजित त्योहारों में किया जाता था; हालाँकि, समय के साथ, इसका अर्थ नकारात्मक हो गया और यह बेलगाम, अत्यधिक मौज-मस्ती—यानी ऐसी बेकाबू और नशे में धुत पार्टियाँ—के लिए इस्तेमाल होने लगा (कॉटेरेल)। आखिरकार, जब कोई व्यक्ति व्यभिचार में लिप्त होता है, तो वह नशे में चूर हो जाता है, अपना आत्म-नियंत्रण खो देता है और लापरवाह व पापपूर्ण व्यवहार करने लगता है। उपदेशक 2:3 में—एक ऐसा वचन जिस पर हमने पहले अपनी बुधवार की प्रार्थना सभा में मनन किया था—बुद्धिमान राजा सुलैमान ने सुख-आनन्द के स्वरूप को जानने का प्रयास किया; जबकि उसका मन बुद्धि से निर्देशित था, उसने शराब के द्वारा अपने शरीर को सुख देने की कोशिश की। उसका निष्कर्ष क्या था? उसने स्वीकार किया कि नशे के माध्यम से सुख खोजने के उसके प्रयास व्यर्थ और अर्थहीन थे (वचन 11)। तो फिर, व्यभिचार और नशेबाज़ी का वास्तविक अर्थ क्या है? क्या उनसे कोई वास्तविक लाभ है? जैसा कि हम पहले से जानते हैं, पौलुस इफिसियों 5:18 में कहता है, "शराब के नशे में मत पड़ो, क्योंकि इससे व्यभिचार फैलता है।" वह गलातियों 5:19 में व्यभिचार और नशेबाज़ी को "शरीर के काम" भी बताता है। पौलुस हमें शरीर के इन कामों को त्यागने का आग्रह करता है। इसका कारण क्या है?

इसका कारण यह है कि प्रभु का आगमन निकट है; हमारा उद्धार अब उस समय की तुलना में और भी निकट है जब हमने पहली बार विश्वास किया था। दूसरा, "अन्धकार के काम" जिन्हें हमें त्यागना है, उनमें "यौन अनैतिकता और कामुकता" शामिल हैं। आज हम जिस दुनिया में रहते हैं, वह सदोम और अमोरा जैसी लगती है—एक ऐसी दुनिया जो यौन अनैतिकता और कामुकता से भरी हुई है। यह दुनिया ऐसी चीज़ों से क्यों भरी है? मुझे इसका जवाब रोमियों 1:24 में मिला, जिस पर हमने पहले भी मनन किया है: "इसलिए परमेश्वर ने उन्हें उनके दिलों की पापी इच्छाओं के अनुसार यौन अशुद्धता के हवाले कर दिया, ताकि वे एक-दूसरे के साथ अपने शरीरों को अपवित्र कर सकें।" परमेश्वर ने ऐसा क्यों किया? कारण यह है कि लोगों ने, खुद को बुद्धिमान समझने के घमंड में (1:22), अमर परमेश्वर की महिमा को नश्वर मनुष्य, पक्षियों, जानवरों और रेंगने वाले जीवों जैसी दिखने वाली मूर्तियों से बदल दिया (वचन 23)। जैसा कि हमने पिछले रविवार रोमियों 13:8-10 पर विचार किया था, हमने देखा कि एक-दूसरे से प्रेम करने के लिए परमेश्वर की आज्ञाओं का पालन करना ज़रूरी है—जिनमें से एक है "व्यभिचार न करना" (वचन 9)। इसके बाद, आज के वचन (रोमियों 13:13) में, पौलुस कहते हैं कि जैसे-जैसे यीशु का दूसरा आगमन निकट आ रहा है, हमें अंधकार के कामों को त्याग देना चाहिए; इन कामों में "यौन अनैतिकता और व्यभिचार" शामिल हैं। ग्रीक शब्द *koitē* (जिसका अनुवाद यहाँ "यौन अनैतिकता" के रूप में किया गया है) का शाब्दिक अर्थ है "बिस्तर"। हालाँकि यह यौन संबंध की ओर इशारा करता है, लेकिन इस वचन में यह बहुवचन रूप में आया है, जो अनियंत्रित यौन संबंध, यौन अतिरेक और वेश्यावृत्ति के कार्यों को दर्शाता है (कॉटरेल)। वहीं, "व्यभिचार" का अर्थ है "ऐसा व्यवहार जो मर्यादा का उल्लंघन करता है और कामुकता में लिप्त रहता है," जो "अश्लील बातचीत या अशुद्ध कार्यों" के रूप में प्रकट होता है (पार्क युन-सन)। प्रेरित पौलुस ने यह सलाह न केवल रोम के संतों को दी, बल्कि थिस्सलुनीके के लोगों को भी दी। 1 थिस्सलुनीकियों 4:3-4 पर विचार करें: "परमेश्वर की इच्छा यह है कि तुम पवित्र बनो: कि तुम यौन अनैतिकता से दूर रहो; कि तुममें से हर कोई अपने शरीर पर पवित्र और सम्मानजनक तरीके से नियंत्रण रखना सीखे, न कि उन गैर-यहूदियों की तरह कामुक वासना में, जो परमेश्वर को नहीं जानते।" परमेश्वर की इच्छा हमारा पवित्र होना है। हमें दुनिया के लोगों की तरह कामुक इच्छाओं के पीछे नहीं भागना चाहिए। यह शरीर का काम है। जैसे-जैसे हमारे उद्धार का समय नज़दीक आ रहा है, हमें शरीर के ऐसे कामों को छोड़ देना चाहिए। आखिर में, तीसरी चीज़ जिसे हमें इस समय छोड़ना है—जब हमारा उद्धार निकट है—वह है "झगड़ा और जलन।" "झगड़ा" क्या है? इसका मतलब है झगड़ालू स्वभाव, और ऐसी भावना जो बहस और छोटी-छोटी बातों पर

झगड़ा करती है। झगड़ा एक विरोधी, प्रतिस्पर्धी भावना को दिखाता है—अपनी मनचाही राह पर चलने के लिए लड़ने की इच्छा, भले ही इससे दूसरों को नुकसान पहुँचे (कॉटरेल)। झगड़े की यही भावना हमें रिश्तों में एक-दूसरे से जलन करने की ओर ले जाती है। और जलन के कारण, हम झगड़ों और विवादों में फँस जाते हैं, और आखिर में आत्मा की बातों के बजाय शरीर के कामों में लग जाते हैं। इसलिए, प्रेरित पौलुस रोम के संतों—और हम सभी—से आग्रह करते हैं कि हम शरीर के कामों और अंधकार के कामों को छोड़ दें।

आखिर में, इस समय जब यीशु का दूसरा आगमन निकट है, हमें ज्योति के हथियार पहन लेने चाहिए।

आज के वचन, रोमियों 13:12 को फिर से देखें: "रात बीत चुकी है, दिन निकट है। इसलिए आओ हम अंधकार के कामों को छोड़ दें, और ज्योति के हथियार पहन लें।" यह "ज्योति का हथियार" क्या है जिसे प्रेरित पौलुस हमें पहनने के लिए कहते हैं? वे इस वचन में हमें कुछ मुख्य बातें सिखाते हैं: पहली बात, ज्योति का हथियार जो हमें पहनना है, वह है "सही व्यवहार करना," ठीक वैसे ही जैसे कोई दिन के समय करता है। रोमियों 13:13 का पहला भाग देखें: "आओ हम सही ढंग से चलें, जैसे दिन में..." दूसरे शब्दों में, "ज्योति का हथियार" जो आपको और मुझे पहनना है, उसका मतलब है रात के पापपूर्ण जीवन को पीछे छोड़ना और दिन का जीवन जीना। यहाँ "दिन के जीवन" का क्या मतलब है? इसका मतलब है एक सभ्य, सही जीवन जीना। और सभ्य ढंग से जीने का मतलब है व्यवस्थित तरीके से काम करना (पार्क युन-सन)। जो लोग यीशु पर विश्वास करते हैं, उनका आचरण सही होना चाहिए; दूसरे शब्दों में, हमारे कामों में व्यवस्था होनी चाहिए। ऐसा क्यों है? हालांकि हमें आज के वचन में दिए गए आदेश का पालन ज़रूर करना चाहिए, लेकिन इसका मुख्य कारण यह है कि हमारा परमेश्वर अव्यवस्था का नहीं, बल्कि शांति का परमेश्वर है (1 कुरिन्थियों 14:33)। इसीलिए प्रेरित पौलुस 1 कुरिन्थियों 14:40 में कहते हैं: "लेकिन सब कुछ उचित और व्यवस्थित ढंग से किया जाना चाहिए।" दूसरी बात, "ज्योति के हथियार" (या वस्त्र) जो आपको और मुझे पहनने हैं, वे स्वयं प्रभु यीशु मसीह हैं। आज के वचन, रोमियों 13:14 को देखें: "बल्कि, प्रभु यीशु मसीह को धारण करो, और शरीर की इच्छाओं को पूरा करने के बारे में न सोचो।" "प्रभु यीशु मसीह को धारण करने" का क्या अर्थ है? संक्षेप में, इसका अर्थ है पवित्रीकरण। दूसरे शब्दों में, प्रभु यीशु मसीह को धारण करने का आदेश उस बदलाव की बात करता है जिसमें हम—विश्वास के द्वारा उद्धार पाने के बाद—यीशु के समान बन जाते हैं (मैकआर्थर)। और यीशु के समान बनने का अर्थ है कि हम पवित्र बन रहे

हैं, ठीक वैसे ही जैसे परमेश्वर पवित्र है। मुझे भजन 87, "द रोब माय सेवियर वोर" (मेरे उद्धारकर्ता का वस्त्र) याद आता है। इसके बोल यीशु द्वारा पहने गए वस्त्र को सचमुच सुंदर (पद 1) और बहुमूल्य (पद 3) बताते हैं, और इसे "महिमा का वस्त्र" भी कहते हैं। आपको और मुझे यीशु का यही वस्त्र पहनना है... हमें महिमा के वस्त्र पहनने चाहिए। जैसे-जैसे यीशु के दूसरी बार आने का समय निकट आ रहा है, हमें उनके महिमामय वस्त्र पहनने चाहिए और दुनिया के सामने उनकी पवित्रता और सुंदरता को प्रकट करना चाहिए।

अंत में, आज 'पैशन वीक' (मसीह के दुख-भोग का सप्ताह) के पहले दिन, जब हम 'पाम संडे' पर परमेश्वर की आराधना करते हैं, तो हमें प्रभु—अल्फा और ओमेगा, आदि और अंत—पर मनन करना चाहिए और क्रूस पर उनके दुख और मृत्यु पर विचार करना चाहिए। ऐसा करते समय, हमें उस समय पर भी विचार करना चाहिए जिसमें हम जी रहे हैं। जैसा कि आज वचन हमें बताता है, हमें यह समझना चाहिए कि प्रभु का आगमन निकट है और हमारा उद्धार अब उस समय की तुलना में बहुत करीब है जब हमने पहली बार विश्वास किया था। हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि इसके प्रकाश में हमें कैसे जीना चाहिए। ऐसे समय में जब पाप की रात गहरी है और यीशु—जो ज्योति हैं—का आगमन निकट है, हमें एक-दूसरे से प्रेम करने का प्रयास करना चाहिए। हमें अंधेरे के कामों को छोड़ देना चाहिए; हमें बदचलनी, नशेबाज़ी, अनैतिकता, कामुकता, झगड़े और जलन से दूर रहना चाहिए। इसके बजाय, हमें रोशनी का कवच पहनना चाहिए। हमें दिन की तरह शालीनता से व्यवहार करना चाहिए और व्यवस्थित जीवन जीना चाहिए। सबसे बढ़कर, हमें प्रभु यीशु मसीह को अपनाना चाहिए। जैसे यीशु पवित्र हैं, वैसे ही हमें भी पवित्र होना चाहिए। मेरी प्रार्थना है कि जब प्रभु वापस आएँ, तो हम सब 'मेमने' (यीशु) के शानदार विवाह-भोज में शामिल हो सकें।